जान - ग्रन्थावली

भाग - 4

(प्रेमाख्यान संग्रह)

2005

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर

जान - ग्रन्थावली

भाग - 4

(प्रेमाख्यान संग्रह)

2005

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

(भाग-4)

जान ग्रन्थावली

प्रेमाख्यान-संग्रह

प्रधान सम्पादक :
वन्दना सिंघवी, आर.ए.एस.
(निदेशक, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर)

ग्रन्थाङ्क - 211

प्रकाशक :

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE, JODHPUR

2005

मूल्य रु. : 235.00

सम्पादन-मण्डल

ओमप्रकाश शर्मा

रतनलाल कामड़

डॉ. रामकिशन जाटव

डॉ. कृष्णलाल विश्नोई

मोतीलाल बैरवा

डॉ. उषा गोस्वामी

ख्यालीराम मीणा



प्रथमावृत्ति-500



मार्च- 2005



पी.डब्ल्यू.डी. रोड

जोधपुर (राज.)

फोन : 0291-2430244



मूल्य रु. : 235.00



मुद्रक :

राजस्थान राज्य सहकारी मुद्रणालय लि., जयपुर

फोन : 0141-2751417, 2751352

निदेशकीय

किसी भी देश एवं समाज का वर्तमान उसके अतीत एवं इतिहास पर अवलम्बित होता है और इसके परिज्ञानाभाव में न तो वर्तमान ही सुखद हो सकता है और न ही भविष्य के विषय में कोई परिकल्पना की जा सकती है। मां वाग्देवी की साधना शताब्दियों से साधक कर रहे हैं– उनके चिन्तन से निर्मित नवनीत के दोहन एवं प्रकाशन में समय तो लगेगा ही, फिर भी विभाग इस दायित्व को विद्वज्जनों के सतत सहयोग से निभाता आ रहा है।

शास्त्रीय साहित्यिवत् लोक साहित्य का भी अपना महत्व है, क्योंकि लोक उसे अपने जीवन में जीता है, उसका अनुभव करता है और अपने पथ को प्रशस्त करता है। न्यामत खां जान अपनी ही धरा के कवि हैं, किन्तु उनकी कृतियां मिली है इलाहाबाद में- ठीक भी है- कवि कर्म की शायद कोई सीमा नहीं है–भौतिक तो कतई भी नहीं। हमारा ध्यान भी जान कवि पर निरन्तर रहा है। फलतः उनकी 78 रचनाओं में से अधिकांश विभाग के पास है। यही कारण है कि हम आलोच्य रचनावली का चतुर्थ भाग आप के हाथों में सौंप रहे हैं।

इससे पूर्व की रचनाओं में हिन्दी अनुवाद भी दिया था एवं साथ में समीक्षात्मक सारांश भी। आलोच्य भाग में मात्र समीक्षात्मक सारांश ही दिया जा रहा है, अनुवाद नहीं। विभाग का मानना है कि लोकभाषा को हृदयंगम करने के लिए अनुवाद की आवश्यकता नहीं है। मूलपाठ ही देने से अधिकाधिक रचनायें प्रकाश में आ सकेगी। रचनावली के प्रचुर ग्रन्थ सामने आने से इस दिशा में विद्वानों का सोच भी उन्मुख होगा।

आलोच्य अंक में आठ प्रणय कथाओं का समावेश किया गया है। मुझे विश्वास है कि सुधी पाठक, अनुसन्धित्सु, विद्वज्जन एवं साहित्य समाराधक इसका समान रूप से आदर करेंगे।

वन्दना सिंघवी
आर.ए.एस.
निदेशक
राजस्थान प्राच्य विद्या
प्रतिष्ठान, जोधपुर

अनुक्रम

		पृष्ठ सं.
1.	कथा कंवलावती ---- ----	1-74
2.	कथा सतवंती ---- ----	75-94
3.	कथा कामलता ---- ----	95-114
4.	कथा सीलवंती ---- ----	115-126
5.	पुहुप वरिषा ---- ----	127-200
6.	कथा बलूकिया विरही ---- ----	201-214
7.	कथा अरदसेर पातिसाह ---- ----	215-234
8.	लैला मजनूं ---- ----	235-303

कथा कंवलावती कवि जान कृत

भूमिका

रूपनगर के नृपदम्पत्ति रूपराइ एवं महारानी रूपरेखा को राजकुमार इंदबदन के युवावस्थाकालीन नवोन्मेष को देखकर उसके उद्वाह संस्कार की चिन्ता सताने लगती है। प्रथम प्रयासान्तर्गत राज्य के नियोजित चित्रकार विभिन्न देशों से राजकुमारियों के 1000 चित्र लाते हैं, किन्तु राजकुमार को कोई भी चित्र पसन्द नहीं आता है। वास्तव में राजकुमार इंदबदन के सौन्दर्य की तुलना में सभी चित्र नगण्य थे। फलस्वरूप समग्र राज्य में चिन्ता परिव्याप्त हो जाती है कि राजकुमार अब विवाह नहीं करेगा। एक दिन एक तोता राजकुमार के हाथ पर सहसा आकर बैठ जाता है। प्रश्नोत्तर में तोता मदननगरी के शासक मदनराय की आत्मजा कंवलावती के अनिन्द्य सौन्दर्य का वर्णन करते हुए बताता है कि राजकुमारी कंवलावती भी अद्यावधि विवाहोत्सुक हजारों राजकुमारों को निराश कर चुकी है, क्योंकि उसकी रूपराशि के समक्ष समस्त राजकुमार फीके साबित हुए हैं। वास्तव में आप ही रूपराशि एवं गुणों की दृष्टि से राजकुमारी के लायक है। अतः आपसे अनुरोध है कि कंवलावती के साथ विवाह प्रस्ताव को स्वीकृति प्रदान करे। राजकुमार तोते के साथ एक चित्रकार को इस आदेश के साथ प्रेषित करता है कि राजकुमारी कंवलावती का यथार्थ चित्र बनाकर लावे। तोता राजकुमारी के समक्ष इंदबदन के अनिन्द्य सौन्दर्य एवं राजधानी रूपनगर का विस्तार से वर्णन करता है। तदनन्तर घटित घटनाक्रम में पारस्परिक चित्र संदर्शन के माध्यम से दोनों का आकर्षण अन्त में उद्वाहसंस्कार के रूप में परिणित हो जाता है।

कुछ काल पश्चात् देवेन्द्र के अनुचर इन दोनों को सुरसभा में ले आते हैं। बाद में एक देव कंवलावती को उठा ले जाता है। राजकुमार परिणीता के अन्वेषणार्थ स्थान-स्थान पर भ्रमण करत हुआ हाथी, सांप, नाहर, भूत-पिशाच प्रभूति बाधाओं का सामना करता है। राजकुमार को एक विशाल पक्षी उठा ले जाता है, जिसे बाद में गरूड़ द्वारा मार दिया जाता है। कुंवर का मिलना एक गुरुजी से होता है, जो कंवलावती का पता बताते हैं। कुंवर येनकेन प्रकारेण कंवलावती के पास आकर देव को मारने का प्रयास करता है। देव क्षमायाचना कर अपने गन्तव्य को चला जाता है और कंवलावती राजकुमार को पुनः प्राप्त हो जाती है। राजकुमार कंवलावती के साथ उसके घर चला जाता है। इसी बीच राजकुमारी के अनिन्द्य सौन्दर्य की प्रशंसा सुनकर बलसागर नामक राजा आक्रमण कर देता है, किन्तु उसे युद्ध में पराजय ही मिलती है। तदनन्तर एक समय नौका विहार में भंवर में नाव टूटने से कंवलावती धाराओं

में बहकर रूपराइ राजा के नगर में आ जाती है और राजा के यहां रहने लग जाती है। कुंवर बहकर अप्सराओं के देश में पहुंच जाता है। कालान्तर में गरूड़ की कृपा से वह अपने देश वापस आ जाता है और दोनों सुखपूर्वक जीवनयापन करते हैं।

समीक्षा

जान विरचित अधिकांश प्रेमाख्यान मसनवी पद्धति में लिखे गये हैं। यही कारण है कि इनमें भारतीय काव्य शैली को नहीं अपनाया गया है। प्रायः ईश्वर, मुहम्मद साहब, खलीफा, गुरु एवं शाहे वक्त की ग्रन्थारंभ में स्तुति की गई है। भारतीय काव्यों में भी ग्रन्थारंभ में मंगलाचरण का प्रावधान है तो जैन ग्रन्थों में तीर्थंकर स्तवन सामान्य परम्परा है।

कथा कंवलावती के प्रारंभिक पद्यों में ''प्रर्थम निमसकार अविनासी ....'' आदि से कवि ने जगत्नियन्ता परमब्रह्मा का स्तवन किया है जिसने सूर्य, चन्द्रमा, आकाश एवं जगत् का निर्माण किया है। दोहा सं. 3 से आगे हजरत मुहम्मद, चार दोस्त क्रमशः हजरत, अबूवक्र, हजरत उमर, हजरत उसमान एवं हजरत अली की वन्दना करते हुए उनके सुकृत्यों का गायन किया गया है। तदनन्तर शाहे वक्त का भी स्तवन किया गया है। इसी क्रम में मुगल बादशाह जहांगीर के शौर्य एवं गुणों के बखान के साथ-साथ ही चिश्तिया वंशज शेख मोहम्मद पीर का भी भूरिश स्तवन किया है जिनका निवास हरियाणा प्रदेश में हांसी नामक गांव में हैं। कवि के अनुसार इनके दर्शन करने मात्र से मनुष्य सर्वकष्टों से विमुक्त हो जाते हैं। पीर साहब के पूर्वजों में कुतुब साहब जमाल के क्रम में बुरहान, नूरदीन एवं हजरत मनव्वर हुए हैं।

कथा प्रयोजन व कवि की विनम्रता

कवि की स्पष्ट मान्यता है कि सदुपदेशों को अगर कथा माध्यम से गेयरूपेण प्रतिपादित किया जाता है तो उनका प्रभाव निश्चित रूप से सहृदयजनों पर पड़ेगा ही, क्योंकि कवि की मान्यता है कि उनके हृदय में जितने अनुभव सिद्ध उपदेश थे उनका समेकित प्रयोग मिलन एवं विरह के इस कथानक में किया गया है।

''रहबो बागर मारू किम भाषा आवै भली'' आदि पद्यांश से स्पष्ट है कि कवि बागर मारू अर्थात् शेखावाटी प्रदेश का वास्तव्य था। कवि का कहना है कि मारू जनपदवासी से सुसंस्कृत भाषा की अपेक्षा व्यर्थ है फिर भी लोक व्यवहार में प्रचलित उक्तियों, प्राकृत अपभ्रंश साहित्य में सन्निहित सदुपदेश के समेकित सन्निवेश एवं जनसाधारणीय बोलचाल की ब्रजभाषा के प्रयोग से यह कथा सर्वजनग्राह्य बन पड़ी है।

कथानक रुढ़ियां

जानप्रणीत प्रेमाख्यानों का प्रमुख प्रतिपाद्य प्रेम ही है। सामान्यतः प्रेमोदय स्वप्रदर्शन, चित्रदर्शन, रूपगुण, श्रवणादि अथवा प्रत्यक्ष दर्शन से प्रतिपादित है। यथा कथा छीता में राजाराम एवं छीता का प्रेम साहचर्य जनित है। मधुमालती कथा में भी मधु एवं मालती का प्रेम सहपठन से ही जनित है। रतनमंजरी, कामलता, कथा कनकावती आदि में स्वप्नदर्शनजनित प्रेमकथा वर्णित है।

आलोच्य कथा कंवलावती में भी सन्देशवाहक तोते द्वारा राजकुमारी कंवलावती के अनिन्द्य सौन्दर्य के वर्णन तथा पश्चात्वर्ती काल में चित्रदर्शन से राजकुमार इंदवदन के हृदय में राजकुमारी के प्रति प्रेमोद्भव होता है और इसी प्रेम का परिपाक दोनों के उद्वाह संस्कार में अवलोकनीय है।

हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यानों में प्रेम संबंध स्थापन का कार्य शुक, शुकी, चक्रवाकमिथुन और हंस आदि द्वारा किया जाता है। अगर हम संस्कृत साहित्य की ओर दृष्टिपात करें, तो अनेक निदर्शन वहां पूर्व से ही मौजदू हैं। बाणभट्ट की कादम्बरी शुक के मुंह से ही कहलाई गई है। हर्ष की रत्नावली नाटिका में नायिका के प्रेम रहस्य का उद्घाटन एक सारिका करती है। जैन काव्य 'पार्श्वनाथचरित' में एक सकल पारंगत शुक की ही कथा है। अमरूशतक में नायक-नायिका प्रेम का रहस्योद्घाटन शुक के मुख से पुनरावृत्त करवाया जाता है। आलोच्य काव्य कथा कंवलावती में भी राजकुमारी द्वारा प्रेषित शुक राजा इंदबदन के समक्ष कंवलावती के अनिन्द्य सौन्दर्य का वर्णन कर राजकुमार के हृदय को उद्वेलित कर उसके हृदय में प्रेमारोपण करता है।

एतादश कथानकों के विकास का महत्वपूर्ण अंग प्रेमिका की प्राप्ति हेतु प्रेमी का अनवरत प्रयत्न है। प्रेमी घर-बार छोड़ देता है तथा अनेकानेक विघ्न-बाधाओं का सामना कर अन्ततोगत्वा प्रेमिका को पाने में सफल हो जाता है। मधुमालती का मधु चार मास तक नौका पर सवार होकर सागर के थेपेड़ खाता है, उसकी नौका ध्वस्त हो जाती है और वो निर्जन प्रदेश में पहुंच जाता है। पद्मावत का रत्नसेन वनकान्तरों को पार करता हुआ समुद्र यात्रा करता है। लौटते समय जलयान ध्वस्त हो जाता है तथा दोनों प्रेमी-प्रेमिकायें विपरीत दिशा में वह जाते हैं। आलोच्य कथा में भी प्रथमतः राजकुमारी कंवलावती कई प्रयत्नों व विघ्न प्रत्यूहों के बाद राजुकमार इंदबदन को प्राप्त हो जाती है। विवाहोपरान्त उसका अपहरण देवदूत कर लेते हैं। इन्द्रसभा में पुनः अपहरण कर अज्ञात स्थान पर ले जाई जाती है। राजकुमार इंदबदन पड़ौस के शासक बलवन्तसिंह को पराजित कर कंवलावती को प्राप्त करता है।

कथानक रुढ़ियों में दिव्यजन्म, भूत-प्रेतादि एवं अप्सराओं का समावेश, इन्द्रसभा आदि कितनी की अलौकिक बातों का जगह-जगह जिक्र है। हिन्दी प्रेमाख्यानों के विकास में ऐसे कथानकों का समावेश महत्वपूर्ण है। कथा कनकावती, कथा कलावती एवं पुहुषवरिषा में भी नायक जन्म दिव्यत्व के आधार पर वर्णित है। आलोच्य कृति में भी अनेक अलौकिक तत्वों का सन्निवेश हैं- यथा कंवलावती के अन्वेषण में योगी बने राजकुमार इंदबदन को भूत-पिशाच प्रभृति बाधाओं से जूझना पड़ता है। नवदम्पत्ति को देवदूत उठाकर इन्द्रसभा में ले आते हैं। नाव दुर्घटना में राजकुमार बहकर अप्सराओं के देश मे आ जाते हैं आदि कतिपय घटनायें अलौ- क तत्वों से सन्निविष्ट हैं।

छन्द योजना व भाषा

काव्य में दोहा, चौपाई, सोरठा और सवैया छन्द का प्रयोग है। चौपाई की 6 पंक्तियों के बाद एक दोहे का विधान है तथा अन्त में एक सवैया भी है। वस्तुतः जान कवि की अन्य रचनाओं में इसके अलावा झूलना, प्लवंगम, पद्धरी, कवित्त, सोरठा, बरवै, प्रभृति अनेक छन्दों के प्रयोग मिलते हैं। विविध छन्दों के प्रयोग भी जान कवि की बहुज्ञता को दर्शाते हैं। यहां उल्लेखनीय है कि जान से पूर्व चौपाई एवं दोहे का प्राचीनतम प्रयोग सरहपाद की रचनाओं में मिलता है। तदनन्तर विष्णुदास, कबीरदास एवं दाऊद आदि की रचनाओं में यह प्रयोग पुनरावृत्त है। शुरू-शुरू में पांच-पांच अर्द्धालियों के बाद एक दोहे का नियम था, किन्तु जायसी ने सात-सात अर्द्धालियों के बाद एक-एक दोहा दिया है। आगे चलकर इस संबंध में कोई नियम नहीं रहे और कवियों ने स्वतंत्रतापूर्वक अर्द्धालियों के बाद छन्दों का भी प्रयोग किया और 5 से 9 अर्द्धालियों के बाद एक दोहा दिया।

''रहबो बागर मारू किम भाषा आवै भली'' आदि से कवि ने स्पष्ट किया है कि वो बागर एवं मारू कहे जाने वाले जनपद के निवासी है, अतः सुसंस्कृत भाषा के ज्ञाता नहीं है। वास्तव में यह कवि की विनम्रता ही है कि उन्होंने अपने आपको अल्पज्ञ घोषित किया है।

जान की आलोच्य रचना जन-जन को छूने वाली सरल ब्रजभाषा में है। कवि का कथन है कि वेद, धर्मशास्त्र, इतिहास, पुराणादि ग्रन्थ संस्कृत भाषा में लिखित होने के कारण सर्वजन संवेद्य नहीं है, अतः मैंने जन-जन की बोलचाल की भाषा को चुना है।

आध्यात्मिक प्रेम पथ का अभाव

सूफी कवियों ने स्त्री को प्रेम का प्रतीक माना है। अरबी का कथन है कि अल्लाह कभी अमूर्त रूप में दर्शन नहीं देता, स्त्री रूप में ही उसका सुन्दर साक्षात्कार होता है। अतः

प्रेम का आकर्षण अलौकिक हो जाने पर उसकी गति ईश्वर की ओर हो जाती है। सूफी चाहे जिसको प्रियतम माने, पर उनका प्रियतम परमात्मा ही होता है। अतः प्रियतमा का नखशिख वर्णन प्रतीक के रूप में गृहीत होता है। जान कवि की गणना भी सूफियों में की जाती है, किन्तु प्रस्तुत काव्य में राजकुमारी कंवलावती का नख-शिख वर्णन किसी प्रतीक से जोड़ा जाना उपयुक्त नहीं है। इस प्रकार के चित्रण में मांसलता एवं ऐन्द्रिय भावनायें ही अधिक मुखरित हुई है।

काव्य सौन्दर्य

जान कवि के प्रेमख्यानों में संयोग एवं विप्रलम्भ श्रृंगार के निदर्शन जगह-जगह देखे जा सकते हैं। आलोच्य रचना में भी दोनों ही पक्ष निरूपित हैं। कंवलावती का सन्देशवाहक तोता राजकुमार इंदबदन के समक्ष राजकुमारी के नख-शिख सौन्दर्य का वर्णन करता है, उससे निश्चय ही जान का प्रौढ़ कवित्व द्योतित होता है। नख-शिख वर्णनक्रमान्तर्गत केश, भ्रू, अधर, दन्तावलि, ललाट एवं कुच आदि का अभिराम वर्णन किया गया है।

राजकुमारी की मांग के वर्णनक्रम में तोता कहता है कि श्वेतमुक्ता एवं सिन्दूरी रंग से संयोजित मांग खूनसनी खड्ग की शोभा को प्राप्त कर रही है। इसके साथ कृष्णवर्णीय केशों के साहचर्य से त्रिवेणी की शोभा उपस्थित हो गई है। तात्पर्यार्थ यही है कि गंगा की शुभ्र, सरस्वती की रक्तिम तथा यमुना की श्यामवर्णीय धाराओं के संगम से त्रिवेणी की स्थिति बनती है। यहां मांग की रक्तिम लकीर से सरस्वती धारा, श्वेतमुक्ता सज्जित होने से गंगा की धारा तथा श्यामवर्णीय केशों से यमुना की धारा गृहीत की गई है:-

मुकत सिंदूरी भरी खग पैनी।
औ कच स्याम भई त्रिवैणी।
मंग सेत शोभित उजियारी।
बीजु-छटा मानहु निसकारी।

वर्णन आलंकारिक है। रूपक अलंकार का अभिराम निदर्शन है।

राजकुमारी के कुच युगल की मनोहारि उपमा द्रष्टव्य है :-

सहज अरुन अैसी छवि पाई।
मनहु नारंगी आनि बनाई।
कुच उतंग उर पर अति छाजै।
देखत नींबू दार यौ लाजै॥
राजा काम तबहि तन आये।
ये रहिबै कौं महल बनाये॥

नायिका के वक्षस्थल पर उन्नत कुच युगल को देखकर दाडिम के फल भी हीनता अनुभव कर रहे हैं। राजकुमारी के उन्नत कुच युगल को देखकर कवि ने उत्प्रेक्षा की है कि कामदेव ने अपने निवास हेतु दो उन्नत महल बनाये हैं।

विप्रलभ्य तथा विवाहपूर्व अनुराग वर्णन काव्य में सीमित है तथापि स्थान-स्थान पर शब्द एवं अर्थालंकारों की भरमार है। रूपक, उत्प्रेक्षा, अनन्वय, व्यतिरेक, संदेह, भ्रान्तिमान्, विरोधाभास एवं विरोध आदि के निदर्शन कलेवर वृद्धि के भय से उद्धृत नहीं किये जा रहे हैं। संक्षेपतः यह काव्य राजकुमार इंदबदन एवं कंवलावती के चित्रदर्शनजन्य प्रेमकथा की प्रस्तुति करता है, जो ऐकान्तिक प्रेम का संवाहक होने से साधारण काव्यों की कोटि में आता है। वर्णन प्रधानता के कारण काव्य में चित्रकला, विवाह संबंधी, स्वतंत्र भावना एवं तत्कालीन रीति-रिवाजों का उल्लेख है, किन्तु सांस्कृतिक अध्ययन की दृष्टि से काव्य का महत्व अधिक नहीं है।

कथा कंवलावती कबि जान क्रित

चौपई ॥ १ ॥

परथम निमसकार अबिनासी। जिन बिरही औ रचे बिलासी॥
रचे दोइ दीवा ऊजियारे। ते बिन तेल न होंहि अंध्यारे॥
तबूं सपति ताने अति भारे। नां तै सीमै नां तैं फारे।।
ता मधि छेकली (रहै) नहि कोऊ। औ बिनु थंभ डुरत नहि सोऊ॥
सपति डास ने अैसे डासे। जब जगु लये ताहि पर बासे।।
अष्ट धाम कीने सुखदाइक। सपति धाम कीने दुखदाइक॥

दोहा-1

निरगुन सगुन अगन गुन, मन के गने न जाहिं।
अलष भेद ना लखि सकै, लष लषा लिषहि लषाहि॥

चौपई ॥ २ ॥

इहंर अरथ की पटऊ बोरी। रची हंस बाइस की जोरी॥
ज्वाला और सनेहु बिचारौ। बनफल मेल रच्यौ ऊजियारौ॥
मोर बात इक अैसी कीनी। दै दै रह्यौ न काहू लीनी॥
सब सब काहू ऊलटि फिराई। तब हम लेइ चांपगिय लाई॥
चिनगी येक रची ऊनि प्यारै। पहिलै सीरी पाछै जारै॥
चाखत अतिही लहै मिठाई। गर तर ऊतरै लखै खटाई॥

दोहा-2

हो चिनगी बिधु पैमुकी, गिर पर परै उडाइ।
पलक अगनि मैं जान कही, टूक टूक ह्वै जाइ॥

चौपई ॥ ३ ॥

सभै कहूं जु बातैं दूजै। भूजूं ताहि न को तिह पूजै।
जासौं कह्यौ दई यौं अरगट। हौ आपन पौ करत न प्रगट॥
जो तोकौ जगु आनत नाहीं। दुर्‌यौ रहत हौ आपुन मांहीं॥
इह सब सिष्ट रची तुव काजै। तोकौ सबै बडाई छाजैं॥
तूं सब जग तरवर कौ मूल। तूं ही डार पात फल फूल।।
वह जु भेदु किनहूं नहिं पायौ। निगम सुगम करि तैं दिखरायौ॥

दोहा-3

नबी पंथ सूधौ महा, मन इंच्छा पहुंचाइ।
और डंडी बन सघन की, चलत रहै लपटाइ॥

चौपई ॥४॥

जिह निस नबी गुसांई बोल्यौ। नींरै आनि भेद बहु खोल्यौ॥
चातुर आपहि नबी सो लह्यौ। धनुक अंत कौ अंतर रह्यौ॥
नबी महंमद सुंदर लौनै। नौ नभ ते, बहु आगै गौनै।।
बहुत प्यार की बातैं भाखी। कह्यौ कछुक भाखी, कछु राखी॥
नई सुभागिन रैन बिलासी। हौंस भयौ ऊहि निसकी घासी।
चहूं वीर कौतिग बहु खोले। पैचुख नैन नबी नहिं डोले।।

दोहा-४

ऊडिगन झिलकै कोटि तजि। ससि निरखै ज चकोर॥
मरजीवा तजि ऊदधि कौं। जा तन सलिता वोर॥

चौपई॥५॥

चार मिंत चारौ ऊजियारै। नबी मुहंमद ससि वै तारै॥
कहिबै कौं कहि चार बखानहु। पैं चारो यैकै करि मांनहुं॥
चारौ वड्डे भये सुभागी। जिन्सौं पीति नबी कों लागी॥
बड्डौ अबाबकर पहिचानहु। तातैं दूजै ऊमर बखांनहु॥
तीजै ऊसमान हि निज मानौ। पाछै अलीसिंघ बिधु जानौ॥

दोहा-5

जहां नबी से छत्रपति, औ अैसे परधान।
तिंह मग गौने जान कहि, क्यौं न होइ सुख प्रान॥

चौपई ॥६॥

अबहि साहि की असुतुति करिहूं। रसन धाग जस मुकुता भरिहूं॥
जहांगीर जानहुं तिह नांव। आन फिरी जाकी सब ठांव॥
बाबर बंस अंस अकबर कौ। ऊतर्यौ भीम रूप धर नर कौ।
जिन अरि अडि गडि गाइ ऊडाये। ऊडे न ते सिंध कटक बुडाये॥
जिन रिसाल भेजी सो छूट्यौ। जो गुर बान्यौ सोई लूट्यौ॥
रूम साम के डरपति डोलैं। बूम बांम बैरिन की बोलैं॥

दोहा-6

जहांगीर सब बिधि निफुंनि, अलह रच्यौ जग मांहि।
ढेरैं बिन जग दूसरो, वा सम देख्यो नांहि॥

चौपई ॥७॥

जहांगीर साहिन सिर मोरे। ढीली कीनी कठिन कमोरे।।
अडिग अडोल भई नहि डुलि है। अचल भई मेरन समतुलि है॥
नाइक साहि जगत सभ पातुर। भोलु कुटी सठ कीने चातुर।।
नाचे जुई नचायौ नाचु। ऊघट्यौ गीत आनंद व सांचु॥
अरि उडाइ नालिन कीये धूर। इसराफी लक्ष्मी मनौ सूर॥
साहि रिसाइ जहां चढि गयौ। महा अरिन कौ प्रलै भयौ॥
राज तेज दोऊ बन आये। अरि परबल ह्वै निबल बिलाये॥

दोहा-7

मंदबुधी हौं का कहौं, अस्तुति साहिन साहि।
सेस बखान न करि सकै, सहंस रसन हीं जाहि॥

चौपई॥८॥

पीर सैख महमद है चिसती। बदन नूरि भाषतु हौ फिसती।।
रहन ठांव जानहु तिंह हांसी। देखत कटै चिंत की फांसी॥
नांव धरयौ याही तैं हांसी। रुदन हरन दाता सुख हांसी।।
रिंधु सिधु नौ निधु संपूरन। दुख हरबे कौं उन सम मूरन॥
पीर हरन कौं वैसे पीर न। पीर हि देहि न सेवक पीर न।।
क्यौं न होइ पाछै जहिं कुतब। चहूं कूटर गटति न रूतब॥

दोहा-8

पहिलै कुतब जमाल हैं; दूसर हैं बुरहान।
नांव जहि औषद परम; लये चिंत जुर हान॥ (1)
तीसर जानहु नूर दी; चतुर मनवर हेर।
सभ जग मैं जिनकी फिरी; कुतब पनैं की रेर॥ (2)

चौपई ॥९॥

अबहि कान दै सुनहु बिनानी। जान कहत अब मैं जु बखानी।।
येक रैन ज्यो मैं यों आई। बांधू कथा ढूंढि यहु उपाई।।
याते नीकी लगी न कोऊ। बिछुरन मिलन याहि मैं दोऊ।।

बुध परवान तबहि मैं गाई। मुख आनी जो जिय मैं आई॥
भाषा जो आई सो आनी। सहज मिली सो ऊलट न तानी।।

सोरठा-1

रहबो बागर मांझ, किम भाषा आवै भली।
पैं दिन ढिग ज्यौं सांझ, तैसी भाषा ऊकति ढिग॥

चौपई॥ १०॥

ऊकति विसेष सांचु कै जानहु। भाषा जो आवै सो मानहु।।
ऊकति भली भाषा मैं आवै। तो यह सोना सुगंध कहावै॥
देखि देखि मैं दरब परायौ। बहुत बहुत मन ना ललिचायौ।।
मैं जहां मारग नयौ न पायौ। महा पुरातन ही मग धायौ॥
मथन ग्रंथ करिहै जौ कोई। वाकी उकति न कहिये सोई।।

दोहा-9

चूर सासतर का किजो, करै सु ऊकति न ताहि।
और का बिहुं फिरि कहै तऊ न दूषनं आहि॥

चौपई॥ ११॥

संसक्रित प्रारेर. मिलायौ। मथ बिलाय कै साज बनायौ।।
यहु कुंबल वामै कठिनाई। तातैं कहि यहु जुगति जनाई॥
नयौ न कछु गायौ ही गायौ। साज वहै सुर फेरि चढ़ायौ॥
फिरि फिरि कैसै ई कोऊ गावै। बावन अछिर बाढ़ न पावै॥
यह बिरवा कूं बल अति आहे। वोट बिना दाहौ इह दाहे॥
सीत विखोर न जौय हु पैहै। बोय सुझि सट ना जरिजै है॥
जे आपहि कछु चातुर कहिहै। नीके छांड़ि बुरे नहि गहिहै।।

दोहा-10

नीके अछिर छाडि कै, बुरै गहै जिन धाइ।
जेम पंखारी बिमल तजि, बैठ मलिन ही जाइ॥

चौपई॥ १२॥

अबहि पुरातन कथा बखानू। कानन परी सु रसना आनू।।
रूप राइ राजा इक राजै। रूपपुरी नगरी तिह छाजै॥
ताकैं सहंस नार कछु आगर। मानहु सब काढीं मथि सागर।।
तिन में रूपरेख इक नारी। देखि ताहि लाजत ऊजियारी॥

वहै पाट रानी है सभ मैं। वहि सम धन भुव-लोक न नभ में।।
रंग सुहाग औ बिधु कौ दीनौ, दोइ रंग भले रंगे पुर तीनौ॥

दोहा-11

रूप राइ सुरपति मनौ, पलो मजा वहि नार।
जोरि महा अति दुहनिकी, रचि कीनी करतार॥

चौपई॥ १३॥

धौराहर औ कोटनिकाई। मोपै बरनी नाहि न जाई।।
अैसे कारीगर ऊनि आनै। बिसुक्रमा सिलपक्रित लजानै।।
महा बिराज़त हैं रतुनारे। इंगुर आनि पीस कै ढारे॥
अति ऊतंग करसनि कौ भरि है। देखत पाग सीस तैं परि है॥
नग कंचन के कीन झरोखा। झिळकै सूर किरनि उन धोखा।।
आन महिल जग उन सम नाहीं। परी पउम पद की परछाईं।।

दोहा-12

पौरी अति ही जगमगैं, देखत मोहै प्रान।
मौ तन कै गारै चिनी; औ कल धूत पषान

चौपई ॥ १४॥

बहुत पौरिया बैठै पौरी। छरी हाथ मुकता की धौरी।।
पोर पौरिया बैठे जागै, सम्भै देवन दीसै लागै।।
कोट सभै तांबै कौ कीनौ। अरव राइ अरि जाइ न लीनौ।।
धावत ही सब धौंस गंवावै। आस पास फिरित कून आवै।।
ताकै आस पास इक खाई। ऊदधि काढि कै आनि बहाई।।
कहा कहूं ताकी गहराई। जो बूडै सो लह्यौ न जाई।।

दोहा-13

अति गाढौ गढि भरति कौ; कीनौ महा उतंग।
ना सा बात समान है; ना ऊहि लगै सुरंग॥

चौपई॥ १५॥

नगर व महा बड्डौ कहा कहिये। आयौ गयौ न वामै लहियै।।
तामै बहुत बसतु हैं प्रोहत। सभै ब्रिहसंपति ही सम सोहत॥
वैद येक तैं येक बिमोहै। असुनि कुंवार लजै जौ जोहै।।
हाटिन कौ बखानि कहा कीजै। बहुत पाईये थोरा दीजै॥

जो रसना औ नासिका भावै। सो फल फूल बाग मैं पावै।।
तरबिर वे हौ गनत न जानौ। कौन कौन के नांव बखानौं।।

दोहा-14

मनहुं अैन अमरावती; रूप राइ कौ गांव।
पंखी जल पंखी बहुत; औ सरवर बहु ठांव॥

चौपई॥ १६॥

मेर समान करी बहुत मांते। ते मद तें छिन होहि न हांते।।
स्याम बरन मानहु निस मावस। तिमर पुंज कीधौं रित पावस।।
चुंवत कनपटी अैसी जानी। मनहु चल्यौ गिर झरना पानी॥
साइर बिन देरे नहिं मारैं। रिस आयें गढ कोटी उखारैं।।
कथ न रथ न कौ करयौ न जैहै। कौ गनै अंत नहि पैहै॥

दोहा-15

अैरापति सम गज सभै, रथ सभ मनहु बिमान।
भांति मिली अति दहुनिकी; रूप राई मरतवान॥

चौपई ।। १७॥

सतुति आ सुनि कैसैं कै कीजै। कौन आन पटंतर उन दीजै।।
बेग्ग बलाइक जौ सम कहिये। रसन सवाद कहित नहि लहिये॥
तेज पुंज उन सम जग है न। कौन ग्यान में सुग्रीव सैन।।
छोटे काननि महा बिराजै। देखत भेष पुहप सिज लाजै।।
चइस्र वाक कहत सुरपति कै। बुरो लगै आगै इन गति कै।।

दोहा-16

घूंघट देखत तिय लजैं; चाबक़ लगै समीर।
छबि देखै लागै समर; अंग अंगनि फुनि सरीर॥

चौपई॥ 18॥

सभ दिन अैसी सभा बनावै। अैन सुधर मा की छवि पावै।।
ग्यान पुंज पंडित ढिंग वैसे। बनि है इंद पास सुर जैसे॥
येक येक तें नीके ग्यानी। करत बनि न बनाई बिनानी।।
अरथ दुर्‌यौ उन तैं नहि रहि है। पावहि पहिलैं पाछै कहि है॥
रजपूटन कौ कहा बखानूं। अन गन कैसे गुन मुख आनूं।।
चरन मेर गहु राजनिन भजै। रज देखे रंज दै रज न तजै॥
दैबै को बहु करन कहावैं। ग्यान भोज कौ पटंतर पावैं।

दोहा-17

ईस करिबै को कान्हौ; बल कौ भीम समान।
धनख लये चूकै नहीं; पथ ही बसै खतवान॥

चौपई॥ 19॥

नीकेगनी सुनावहि नादि। समझावहि ताकौ अंत आदि।।
नई ऊकति करि वहु वे सुनावै। औ नीकी तानै ऊपजावै॥
हा हा करै सुरनिपति हा हा। रूप राइ कौ महा ऊमाहा।।
हू हू हू येहू दिन भाखै। पै काहू जतननि इंद राखै॥
ज्यौ ज्यौ गनी सुनावहि तान। त्यौ त्यौ रीझि रीझि दै दान।।

दोहा-18

गइन मर जीया समुद्र; राग लाल नग तान।
सुख द्रब दीने जान कहि; देत अमोलक आन॥

चौपई ।। 20।।

ताकै पूत सरूप सुलहिन। जोत होत देखत अहिन।।
इंद बदन सिंह तिहं नांव बिराजै। बदन इंद हूं ते अति छाजै॥
घटै बढै बात यह नित बाढै। घटै न कबहू चरननि गाढै।।
सोलह कला कबहू ससि पैहै। इंद लछिन बतीसन जैहै॥
वह कलंक यह निरमल सोहै। मन मोहन मुनियनि मन मोहै।।
भूलि दई ससि नांव बडाई। मात तात सौ कछु न बसाई॥

दोहा-19

उजियारौ मुख निरमलौ; नैक मलिनता नांहि।
परगट औरन सौ मिहै; जिम सोभित उहि छांहि॥

चौपई॥ 21॥

दसन झिलक ससि कैसै पावै। कैसे हसकै मनहि रिझावै।।
कैसे सूधी चितवन चितवै। वैसे तिछ कटाछिन बितवै।।
कैसे अंबित बैन सुनावै। कैसै नैननि सैन जनावै।।
ससि छवि ही करि है संपूर। यहु सब बातन है भरपूर॥
चांद येक बिद्या नहि जानै। यह चौदह बिद्यारस मानै।।

दोहा-20

सैल अहेरै द्वेकंभू; चरन देत नहिं भूल।
यहै येक दति दई की; वहै डार वहै मूल॥

चौपई ॥ २२ ॥

येक द्यौंस तजी भुज पकरी। कहयौ सुनहु बिह बल की लकरी॥
सुख निधान तुं माहि हमारौ। हम चकोर तूं ससि उजियारौ॥
हम पंछी तुम तरवर भारौ। हम मंछी तूं समंद अपारौ॥
प्रान अधार नैन कौ ठारौ। येक कहयौ अब कहौ हमारौ॥
मंगलचार बजावहि गावैं। अबहि कहौ तो ब्याह रचावैं॥
तेरो फल हम देखैं नैननि। धनि धनि कहैं दई की दैननि॥

दोहा-21

मांगत मांगत रैन दिन; बिधि तूं करयौ किसोर।
जाल लरकई छाडि कै; अबहि गहौ बुधि थोर॥

चौपई ॥ २३ ॥

इंद बदन (सिर) चरननि राखे। जिय के भेद पिता सौं भाखे।।
कह्यौ यहै निहचै कै जानौ। येक गांठ, सो फेर न मानौ॥
आप समान न पाऊ जौलौं। भूलि ब्याह नहि करिहौ तौलौं।।
बेग चितेरा येक बुलायौ। ततछिन आनि वो चितरायौ॥
कह्यौ जहां नीकी कौ पावहु। पठय चितेरा चित्र मंगावहु॥
चित्र जु याहि चित्र ढिंग लागै। वह पै सांच मोहि मन पागै॥

दोहा-22

अनगन तारे निकसि हैं; रीझै कंवलि न मूल।
जब लग चंद न देखि है; तब लगि खिलै न भूल॥

चौपई ॥ २४ ॥

यह गति देखि राव़ भयौ ठाढौ। जिय में सोच बडो अति गाढौ।।
इहं समान कैसे कोऊ लहिये। नाको भयौ न अब कौ कहिये॥
ततछिन बहुत चितेरा टेरे। मन पोख्यौ अति आने नेरे।।
कह्यो जाइ देखहु सब पुर पुर। राजकंवरि निरझावहु दुर दुर॥
परतछि चित्र मोहि ढिंग ल्यावहु। मनवंछित फल जो तुम पावहु।।

दोहा-23

इंदबदन सम चित्र जो; तुममें ल्यावै कोइ।
दरिदइ सात पतार कै; तरै बैठ है खोइ॥

चौपई ॥ 25 ॥

देस देस कों चले चितेरा। गांव गांव पुर कीयौ डेरा।।
राजकुंवरि निरखी जहां बारी। चित्र माझा कंछु अधिक संवारी॥
बहुत दिनन पाछैं घर आये। चित्र सहंस कछु अधिकै ल्याये।।
भोर भये राजा ढिग आने। रीझि रहे सम राजा राने॥
मोहे देखत सुंदरताई। सम में भली चांद की गाई।।

दोहा-24

राइ कहै ये चित्र सभ; निकलंकी चित चोर।
इंद बदन जब रीझि हैं; जानू तबहिं निखोर॥

चौपई ॥ २६ ॥

राजै मानस बेग पठायौ। इंद बदन को चित्र मंगायौ।।
लै ऊन चित्र निकै संग आन्यौ। देखि चितेरा राइ लजान्यौ॥
राजै कह्यौ कहा मन पागै। कंचन कै ढिग काच न लागै।।
कैसे कहूं इंद कोऊ मांगौ। कहां भोज कहां तेली गांगौ॥
निस अंधियारी झिलकै मोहै। पैं ससि ढिंग उडिगन नहिं सोहै।।

दोहा-25

आगम जानै सूर कौ; हवै फिको न्यौहार।
दीपग तब लगे ही भलौ; जब लग सदन अंधार॥

चौपई ॥ २७ ॥

सभा कह्यौ ढिंग कंवर पठावहु। कहौ न इनतें नीकी पावहु।।
राजै कहि पठ्यौ ससि मुख कौ। हम चाहत हैं तेरे सुख कौं॥
घर घर पुर पुर कीनौं फेरा। तौर्य आने ये चितरे चितेरा।।
इनते रूप तिया नहिं बढि है। नाको बेग बहुर कर घढि है॥
चाव कंवार (ठहरिन) रहिन कौ नाहि। तो इनमें इक चित्र हि बाहि॥

सोरठा-2

बड़े-बड़े हैं राइ, जिनकै राई अदित्ती।
तनया तिह चितराइ, आनी है जिय आनियै॥

चौपई ॥ 28 ॥

हंसत कुंवर देखत इम बोले। वे ही काम चितेरा डोले।।
इन चितरन पूजत नहिं भांवरि। पीछ न होइ बैद कै चांवरि॥

सम निस परत भोर लौ जौलों। गागर वासन भरत न तौलों।।
नीर मंगाई धाइ सभ डारे। लाज चितेरनि धरि पग धारे॥
पै ऊनहूं लरकाई छोरी। मलिन रहत पावत नहिं जोरी।।

दोहा-26

अनंग जनायौ अंग में, उमंग चढाई ब्याहि।
को अंग ना कर ना चढै, रंग रहै रंग जाहि॥

चौपई ॥ 29 ॥

येक द्यौंस बैठयो हौ घर पर। बैठयौ आनि सूवा इक कर पर।।
अचिरजि भयौ कुंवर कै मन मै। किम कर बैठ्यो डोलत बन मैं॥
कुंवर कहयौ सुवटा सहि भाखौ। भेद कछू जिन मन में राखौ।।
मोहि तोहि कछु ही पंहिचानन। कौन काज धरि पग पानन॥
कै तूं पवन डुलै इत डारयौ। कै बहु ऊडित ऊडित तूं हार्यौ।।
कै तूं काहू पंखि डरायौ। तातैं जीव बचावन आयौ॥

दोहा-27

कीर कहै हूं न डरयौ; ना हार्यौ धरि कान।
नाहि डिगायौ पवन हूं; सुनहूं जुं करूं बखान॥

चौपई॥ ३०॥

रैन दिनां हूं फिरू उदासी। मदनपुरी नगरी को बासी।।
मदन राइ राजा तहां सोहै। मदन कला नारी मन मोहै॥
धौराहर औ कोट निकाई। मोपै बरनी नाहि न जाई।।
हैइ गइ गनत न लेखै आवै। कौन थाह सागर कौ पावै॥
ऊहि पुरा सम सोच्यौ जिय मांही। इंह बिन औरा जोर कौ नांही।।
जौ हौं रसना कोटि बनाऊं। बाकी गति जुग जुमलौ गाऊं॥

दोहा-28

मदन राइ छबि नै कहूं; बरनी नाहिं न जाइ।
सुति ऊदधि में जौ तरै; केहूं पार न पाई॥

चौपई॥ ३१॥

ताकै सुता येक कंवलावत। ताकी जात सुनहु हूं गावत।।
मदन राई तिह ब्याह उठायौ। बामन बोल्यौ कहूं पठायौ॥
येते माझ सुन्यौ कंवलावति। कहि पठयौ मोहि नाहिं जिवावति।।

जोर ब्याह कबहूं जौ करि हौं। जीभ खांडि हौं तुम दुख भरि हौं॥
जो बिधना नहिं चाह्यौ होई। सकति सनेह बनावै कोई।।

दोहा-29

अब हमारी चाहिये; तौ जानहुं सत भाइ।
आरस तजि कैं राइ जू; बांमन उलट मंगाइ।।

चौपई ॥ ३२॥

सुनत बात सभ सभा लजाई। कहयौ कहत ऊंहि लाज न आई।।
राजा लाज भयौ फिरि उर मैं। वहै येक अंग जाहै घर मैं॥
ततछिन बांभन ऊलिट मंगायौ। कहि कंवलावति पास पठायौ।।
अैसी बात सुता तैं भाषी। दवै कुल की कछु लाज न राखी॥
कुलवंती अैसै नहीं बोलै। जौ बोलहि तौ बेघर डोलै।।
कन्या नांव याहि तैं राषै। कान सुनै कछु रसन न भाषै॥

दोहा-30

अैसी धौं काहे कही; हम हूं कौं समु (झा) इ।
जगत रीति जौ कीजिये; कौन काज मरि जाइ॥

चौपई॥ ३३॥

बांभन इह गति जाइ जनाई। तब उनहुं यह ऊकति बनाई।।
येक रैंन सपुनौ मैं देख्यो। जागरत ही की सम सरि लेख्यौ॥
पुरष येक मेरे ढिंग आयौ। कर त्रिसूल चख तीन सुहायौ।।
कहयौ जाग भागनि हूं पायौ। महादेव कहियत सो आयौ॥
सुनत पांइ गहि पूछयौ प्यारे। जग स्वामी काहे पग धारे।।

दोहा-31

कहयौ यहै हम कहतु हैं; कंवलावत धरि कान।
आप समान न ब्याहि है; तौ तुव प्रान ही हान॥

चौपई ॥ ३४॥

यहै बात जौ राजा भाई। सो मेरो कछु नाहिं बसाई।।
ब्याह कीजिये सुख कै कारन। ना आसै चाहत हम मारन॥
जो चाहौ मोहि रचावौ। तौ सम कुंवरनि चित्र मंगावौ।।
मेरे ढिंग आनौ जो सोहै। वह बनि है ज्यौ चुंबक लोहै॥
बांभन जाइ कहयौ जब अैसैं। राजै कहयौ ब्याह हवै कैसैं।।
इह समान जरम्यौ ना जरमै। सुन्यौ न देख्यौ जगती धर मै॥

सोरठा-3

सभा कहयौ सुनि राइ। मन में काहै राखियै।।
रंगी जीव बुलाइ। पठइ कहूं मत पाइ है॥

चौपई॥ ३५॥

राजै बहुत चितेरा बोले। घाल ग्यान पलरा मैं तोले।।
बहुत धुके जे चित्रनि काजै। ढूंढि लये ते सभ मैं राजै
कहयौ जाहु पुर पुर बगरन मैं। ठाढे ह्वै चित वौ डगरन मैं।।
राज बंस नीके जे लागैं। ल्यावहु चित्र वेग हम आगैं॥
चलियौ न करियौ गहर। मास की बाट काटियौ पहर।।

दोहा-32

कुंवलावत सम कुंवर जौ; कोऊ तुम्ह मैं पाइ।
सोवत हूं देख्यौ नहीं; सो जागत कर आइ।

चौपई ॥ ३६॥

पान ले इम चरन चलाये। मनहु आन तन पंख लगाये।।
बगर बगर औ डगर डगर में। चतरत डोलैं नगर नगर में॥
राज कुंवर नीके जहां पाये। सभै चित्र राजा ढिगु ल्याये।।
दोइ सहंस कछु अजहूं आगर। चित्र येक ते येक ऊजागर॥
कंवलत ढिंग पठये राजै। कहौ कौंन तुम ढिग इन छाजै।।

दोहा-33

जो इनमै तुम मन षंगै; सो तुम्ह हमहिं जनाहु।
तैरै ब्याहन· कौं सदा; जिय में रहत उमाहु॥

चौपई॥ ३७॥

देखत कर उरधर कहयौ माई। पठवत राजै लाज न आई।।
वासिग नाग भलौ नहीं डोल्यौ। कंचन काज बराबर तोल्यौ॥
मो सम कहौ इननि मैं को है। हंस पास कैसैं बग-सोहै।।
भूधर मेर पास नहीं छाजै। पदमाकर ढिंग पलुल्यन राजै॥
कलय ब्रिछ सम तरवर को है। सेस पास कुंडली नहीं सोहै।।
अग्नि मंगाइ चित्र सम जारे। चित्रकार मानहुं बज मारे॥

दोहा-34

चात्रिग चात्रिग राचि है; मोरहि राजित मोर।
बाइस बाइस ही बनै; पिक सौं कैसी जोर॥

चौपई ॥ ३८ ॥

तबहि कहयौ कंवलावत मोसौं। सुनहु सुबाहु जुतो सौं।।
येक बार तुम हूं पंख डारौ। देस देस पुर पुर पग धारौ॥
तुम पंखी उडि देखौ सबकौं। गहर छांडि मग लीजै नभ कौं।।
तबहूं उड्यौ फिरयौ बहु देसन। पैको लहयौ नाहि इहि भेसन॥
जाइ कहयौ कोऊ नाहिं लहिये। झूठ बनाई बात कत कहिये।।
कहा होइ झूठौ कीये झेरा। फिरि लाजूं जिम लजे चितेरा॥

दोहा-35

किये बनाव कहा भयौ; झूठ न ह्वै सम सांच।
जान कहै किम सोभि है; कंचन कै ढिंग कांच॥

चौपई॥ ३९ ॥

कंवलावत हूं भई उसादी। मैन भयौ नगरी तन बासी।।
कह्यौ उडहु बहुरौ फिरि दूजौ। मतर हमारी इछया पूजै॥
फिरि उडि आयौ याहि नगर पर। बैठे तुम देखे इह घर पर।।
देखत ही मुख ऐसो मोह्यौ। भूलि गयौ तुम्ह को हूं कोह्यौ॥
प्यार आनि मेरै मन पैठयो। निडर होइ तेरै कर बैठ्यो।

सोरठा-4

गहै नेहु जब आइ; तबहि सुरति कछु ना रहै।
यहु जिय ना समझाइ; वो साजन को दुर्जन है॥

चौपई ॥ ४० ॥

इंद बदन बोल्यौ सुनि रंगी। मेरौ हूं मन कीयौ ऊमंगी।।
जु कथा कंवलावत भाषी। यह सभ कथा हमारी साखी॥
हौं हूं आप समान न पाऊं। करमीकूं निस दिन पछिताऊं।।
पठ्ये हम बहुत चितेरा। तिनहि करयौ बहु जग में फेरा॥
पैं मौसम धन नाहि न पाई। खोलि रहै चषि डिस्ट न आई।।
तुब बैननि अचिरज रहयौ। मोहि समान रूप ऊंहि कहयौ॥

सोरठा-5

मोहि सौंह करतार जौ, हूं झूठ बखानि हूं।
जैसौ छबि त्यौहार, तैसोई हौं भाखि हौं॥

चौपई ॥ ४१ ॥

परथम सुनहुं मांग इम सोभै। गंगा जान ईस अठि लोभै।।
स्याम बार ते नागन कारी। दूध धार पीवन कौं डारी॥
कच अहिकारे इम डिठि परि हैं। मनहुं सेस कौ बंदन करि हैं।।
मंग संग कच यौं दिन राये। पुहप माल पर अलि चलि आये॥
मुकत सिंदूर भरी षग पैनी। औ कच स्याम भई त्रिबैनी।।
मंग सेत सोभित ऊजियारी। बीजु छटा मनहु निसकारी॥
मांग खुलै अति होठ ऊज्यारौ। स्याम रैन टूटयौ मानौ तारौ।।
सरकीधाँ बरछी अनियारी। कनक कसौटी लीकनिकारी॥

दोहा-36

मानहु निवारी रबि किरन; कीधौं दीपक लूक।
स्याम निसा मैं देखिये; किधौ हवाई हूक॥

चौपई ॥ ४२ ॥

बार स्याम नारी सिर राजै। देखि स्यामता मधुकर लाजे।।
नाग स्याम सनमुख नहि आवै। तम कस्तूरी अधिक लजावै॥
कान गह्यौ देखत निस मावस। औ अति ही लाजीरित पावस।।
महा स्याम हरि कहत किसोरा। ऊन बारन ढिंग लागै गोरा॥
जौ ऊन बारन कैं ढिगु आवै। बाइस हूं बग ह्वै दिखरावै॥

दोहा-37

जौ कर बारनि मैं करत, बाँह कहा डिंठ आइ।
स्याम घटा मैं जान कहि, बीज छटा चमकाइ॥

चौपई ॥ ४३ ॥

ऊति मांग, ऊतिम अति पायौ। मनहु द्वैज ससि आनि बनायौ॥
ता मधि बूंद प्रसेद जु आवै। कनक मांहि मुकता झिलकावै॥
स्याम पटी में मुख ऊजियारौ। द्यौससि मैं ससियेक निहारौ॥
अंचर लयें यहु सोभा पावै। झीनै बादुर ससि दरसावै॥
अति निरमल लिलाट बड भागी। देखत सुरनि टगटगी लागी॥

दोहा-38

ससि मैं तकहु जु स्यामता, यहु कलंक नहिं आहि।
नीकैं, मुख सम ना भयौ, छांई ऊपजी ताहि॥

चौपई ॥ ४४ ॥

भौंह धनुष त्यौरी सौं तानी। जिन निरषी सो हन्यौ बिनानी॥
अति अचूक सनमुख भवे मारत। अरजन हूं देखित तौ हारत॥
हरनी भजि अकास सिधारी। सो तो इन्हीं धनुष की मारी॥
भारी अति पैं सुबन रसीली। छेद करत तन मन हि कंटीली॥

दोहा-39

हाइ भाइ ते चून है, नैना जल छबि जार।
जौ इन तैं कबहूं बंचै, भौंह धनुष लै मार॥

चौपई ॥ ४५ ॥

नैननि की छबि कहत न आवै। म्रिग सावक हूं देखि लजावै॥
चंचल ताई अति ही सोही। देखत ही गति मीन बिमोही॥
दीरघ सुलज नैन अति राजैं। डिस्ट परत पंकजहू लाजैं॥
सेत असेत अरुन छबि लहीं। गंग जमुन सरसुति मिल बहीं॥
ऊजरे नैंना बने ऊज्यारी। मोतिन भरी आंब की फारी॥

दोहा-40

नैंन अैंन तिय बान हैं; चितवन चित, दैं धाइ।
ता पर काजर बिषु दयौ, मारन ही कैं चाइ॥

चौपई ॥ ४६ ॥

बैन, नाक छबि कहत न आवै। कोरि कीर तिंह देषि लजावै।।
अति ही सबन देखि मनि भायौ। मनहुं अैन तिल फूल बिराजै।।
अधर महा सोभत है नारी। मानहुं ऐंन सुरंग पंवारी॥
सहज अरुन ईगर मानौ हास्यौ। येते पर पांननरंग पारचौ।।
कहा काहूं नान्हौं मुख मेरौ। जानहु तबहिं जबहिं तुम हेरौ।।

सोरठा-6

ऊन अधरन की बात, सांझ सुनौ सम रैन सुख।
जौ सुनिये परभात, सम दिन बीतै चैन में॥

चौपई ॥ ४७ ॥

कहा कपोलन की छबि कहिये। देखिद ह्यौ सौनौ फिरि दहिये।।
ता मधि कारौ तिल इक पैस्यौ। मनहु झंभीरी पर अलि बैस्यौ॥
रसन बैन सुनि अंब्रित पीवत। अचिरजु नांहि मुषौ जौ जीयत।।
आइ अलिन धौराहर भरि हैं। अनगन पुहप हंसन मैं परि है॥

सोरठा-7

कौन बाग मैं जाइ, माली पै करवोटि है।
बिन मांगै ही पाइ, रूपवंत ढिंग बैठि है।

चौपई ॥ ४८ ॥

दसन अँन दार्‌यौ से सौहैं। देखत झिलक मुनीसर मोहैं।।
झलकैं दसन महा ऊजियारे। चांद पैठि झिलकैं मानौं तारे॥
यह अचिरज देखत सभ बिकसे। कनक खानि मैं मुकता निकसे।।
सभ काहू सुधि जाइ बिलोक। हसन दसन बस होहि तिलोक॥
दसन दामनी सभ जग कह्यौ। सौउ यहू देखत अचिरज रह्यौ।।

दोहा-41

चपला चमकै चितु डरै, कैसै समसरि पाइ।
नारि हंसनमैं जान कहि, देखित भै दुख जाइ॥

चौपई ॥ ४९ ॥

श्रवण चंदन भरे सुहावैं। मानहुं अैन सुकित दरसावैं॥
अति कूंवल लीये चिकनाई। सो भानै कु कहत नहिं आई॥
गिय सुढार मानु चाक चढायौ। किधौं संख लै आनि बनायौ॥
तिंह गीयनी के सबद बिराजैं। मोर कपोत कोकिला लाजैं॥
ठोडि कौ कूप रूप सौं भर्‌यौ। निकस न सकै तहां मन पर्‌यौ॥
जे तक फेर फेर निरझायौ। ठोडी गाड हाड नहिं पायौ॥
भुज भारी कुंवल मन भोहै। मानहु लता लहलही सोहै॥

दोहा-42

सहज अरुन है अंगरी, मान जई गुर रंग।
कीधौ फरियां मूंग की, निरखत होत ऊमंग॥

चौपई ॥ ५० ॥

कुच सुमेर कुंभ-सथल सोहैं। किधौं कलस हाटक मन मोहैं॥
अति कठोर करि है उरि लाड। मेरे जान भरे हैं हाड॥
सहज अरुन अैसी छबि पाई। मनहु नारंगी आनि बनाई।।
कुच ऊतंग उर पर अति छाजै। देखत नींबू दार्‌यौ लाजैं॥
राजा काम तबहिं तन आये। ये रहिबे कौं महल बनाये।।

दोहा-42

कनक कुंभ पर स्यामता, जानत हौ कत दीन।
डीठ निवारन काज यह, दई चखौडाकीन॥

चौपई॥५१॥

पेट बखानि धरौं जिय माही। येक अंतहूं मानहूं नाहीं।।
देखि देखि आंती भायौ ज्यौ मैं। मनहुं सुहार पाय कीयौ ध्यौ मैं॥
ता मधि नाभि गंभीर बिराजै। ऐन नीर भौंरी सी छाजै।।
अति औगाह पार नहीं आवै। बूढयौ मन निकसन नहिं पावै॥
कनक कुंड पै तीरथ सरहै। पूजा किये पाप सभ झरि है।।

दोहा-44

औडी गाढि वह नाभि अति, दीनी गहरी नींव।
कूप रच्यौ करतार वह, तन मधि कीनी सींव॥

चौपई॥५२॥

सोमित पीठ ढीठ औटयौ आई। मानहु सांचै ढारि बनाई।।
कटि की ढरि नमुरिन मैं देखी। केहर औ म्रिगराज बिसेखी॥
अति झीनी मानौ लंक ततईया। जो देखत सो लेत बलईया।।
मोहै यहै अचिरज चित अैहै। चलत टूटि काहै नहिं जैहै॥

दोहा-45

पै टूटै सो जान कहि, जौ हवै कठिन सरीर।
गांठि दीये टूटै नहीं, गढी जु मन मथ नीर॥

सवईयाँ-1

धौंसन कीनान्ह कटि नान्ही जु बनान्है अति,
पातरी ज्यौं पात लागै बात थररात है।
हरै हरै खोल मुख कठिन न बोलै चुष,
ठरी जात छांहि मधि धूप पधराति है।
डीठ जोरै डीठ लागै हाथ हुयैं मैली होत,
लागै स्त्री मुह स्वांस फूल नारि मुरझात है।
मिहरी तनक जैहै नुहरी, हमेल, भार,
दिहरी कै नाधिबैकौं तिहरी ह्वै जात है॥

चौपई ॥ ५३ ॥

जाधैं नारी अधिक बिमोहैं। अैन बनी कदली सी सोहैं।।
पगन डगन देखत सुख आवै। मातौ गज ज्यौं चरन उठावै॥
परजापति जो बाहन जोहै। गंवन आपनी भूलि बिमोहै।।

दोहा-46

उकति कहत नाहिंन बनै, सोच रह्यौ बहु जान।
कौन चाल धौंधि न चलत, अचल चलावत प्यान॥

चौपई ॥ ५४ ॥

अभरन अभरन ही जग मोहै। अभरन भरैं सुकेसी सोहै।।
रूपवंत औ पहिरैं गहनौ। तबहिं कहौ छवि कौ की कहिनौ॥
अभरन सौं तन ठांव बनाईं। नागन कैं मनौ पंख लगाई।।
पीतंबर पहिरै जो नारी। कनक पत्र मनौ केसर डारी॥
सेत बरन सोभा यहु अंग। हेम तार कीने इक संग।।
अरुन बरून यह सोभा होत। लाल रुकम भई मिलि कैं जोत॥
स्याम बरन इम सोभित प्यारी। कौंधी बीज छटा मनौंकारी।।

दोहा-47

जोई बानिकबानि है, तामैं होत बनाव।
रूप छपाकर जान कहि, छपै न किये छपाव॥

चौपई ॥ ५५ ॥

सुनत सिंगार कुंवर सुधि भूली। नैननि माझ सांझ सी फूली।।
कीर कलाल बैन कै प्यालनि। डारयौ कंवर नेह जंजालनि॥
कंवलावति छबि मंद मैंमाती। मिलन-चौंप तहां तन हांती।।
धुकि धुकि परत कहत मुख अैसै। कहयौ कीर मिलिबौ ह्वै कैसै॥

दोहा-48

इंद छीन अति होत है, लगी बिरह उर दाह।
मिलन पून्य तैं छूटि है, गहयौ नेहु कैं राह॥

चौपई ॥ ५६ ॥

बहुर सौंह दै पूछ्यौ सूवा। मैं हार्‌यौ तैं जीत्यौ जूवा।।
जैसी कहत सांच है अैसी। किधौं बनाइ कहत बुधि जैसी॥
कीर कहयौ जौ ना पतियावहु। रूप ताहि कौ चित्र मंगावहु।।

कुंवर चतेरा वेग बुलायौ। कहि सुवटा कै साभि पठायौ॥
आगै कीर चितेरा पाछैं। जाइ लगे ढिग ऊंहि पुर आछैं।।
रहयौ चितेरा ठाढौ बाहर। सुवटा जाय चढयौ धौराहर॥

सोरठा-8

कहयौ बधाई देहु, जो चाहत है सो लहयौ।
पूरब जन्म सनेहु, तुम दहुन मैं देखिता॥

चौपई॥५७॥

हरिखवंत जब देख्यौ कीर। कंवलापति सुष भयौ सरीर।।
कहयौ कीर तुम रीझे किंहपुर। राज कुंवर कहां देख्यौ छबि गुर॥
कीर कहयौ कंवलापति सुनिये। बात सूत काननि सौं बुनिये।।
अब हूं तो ढिंग आयौ जिततें। सहंस कोस कछु आगर इत ते॥
रूपपुरी नगरी अति बड़ी। सौ मेरे नैननि मैं गडी।।

दोहा-49

रूपराइ राजा तहां, रूप रेख वड नार।
इंद बंदन तिंह पूत जो, देखै जै बलिहार॥

चौपई॥५८॥

कहा बषान सकौं कर ताकौ। नांव लेव वाकी सम काकौ।।
नर नारी मानस द्यौं कौ है। देखि अपछरा औंसुर मोहै॥
ता पर भई चांद की भंवरि। आपहिं करत फिरत नौछावरि।।
धू रीझयौ ऊहि बदन ऊधारै। अचल भयौ सभ रैन निहारै॥
अंग अंग मैं रंग अनंगी। उमंग हौइ अंग देखि ऊमंगी।।
वह छबि कर सभ जग तैं बाढयौ। मानहु चीर चंदनहु काढ्यौ॥

दोहा-50

जबहि चांद टेर तरबि आयौ; तब आयौ ह्वै टूक।
बहुरि स्यौ यै हूकनि; जुहौ रहयौ यहु चूक॥

चौपई॥५९॥

ताहि टूक कौ यह बिधु कीनौ। निज ससि रूप आनि ऊहि दीनौ।।
सुनत रूप कंवलावत खिली। दंद गयौ आनंद मिली॥
कहयौ सुवा कहु किम कर लहिये। चौंप आगि मेरो उर दहिये।।
तैं यहु रूप वाकौ रूप विचारयौ। मनहु मंत्र पढि मो पर डार्‌यौ॥

कहा कहौं कछु आई न कही। हौं तौ बौरीसी ह्वै रही।।
बात सुनत ही गति भई अैसें। देखै तैं, द्यौं ह्वै है कैसें।।

दोहा-51

कीर कहै छबि रूप तुम्ह; व्राहि सुन्यौ धर कांन।
जैहिं बिधि भैंट्यौ जाइ हौ; सो अब करौं बखान॥

चौपई॥ ६०॥

उडत उडत जब ऊंहिं पुर आयौ। मूरत मदन सदन पर पायौ।।
हौंजु जाइ ताकैं कर बैठयौ। भेदु लयौ सभ मन मैं पैठ्यौ॥
जैसें तुम बहु चित्र मंगायै। समन हुये मघि अगिन जराये।।
तैंसैं उनहूं चित्र मंगाये। समन भये जल धोइ बहाये॥
तेरी रीति सोई ऊहिं रीति। बनि है तुम मैं महा प्रतीति॥

दोहा-52

वै जल है तुम मीन हौ; वै चकोर तुमं चंद।
वै तुम्ह तुम्ह उन्ह परतिकै; निस दिन करहु अनंद॥

चौपई॥ ६१॥

जब मैं तेरो रूप बखान्यौ। कांन करत कुंवर बौरानौ।।
बहुर कहयौ जिन झूठ बनायौ। अैसौ रूप कहा तैं आयौ॥
सोच कहत तौ गहर न लावहु। रूप वाहि कौ चित्र मंगावहु।।
चित्रकार मो संगहि पठायौ। बेगि तिहारौ चित्र मंगायौ॥
मेरौ कहयौ बेग अब कीजै। निकट चितेरा आवुन दीजै।।
चितरकार यहु ऊलटिन जैहै। तब लग कुंवर महादुख पैहै॥

सोरठा-9

गहर छांडि बलि जाइ, गहरै दुख छाड्यौ कुंवर।
रंगी जीव बुलाइ, हा हा अग्या दीजियै॥

चौपई॥ ६२॥

कंवलापति बोली सुनि कीर। अैसी बात नह तै सरीर।।
आपुन पौ हूं नांहि दिखाऊं। नांव लये पर पुरुष लगाऊं॥
मोहि देखन कैं सभै ऊमाहै। चांद सूर हूं देख्यौ चाहै।।
सुवटै नाइ धरयौ सिर पाइन। हा हा बिरसं करहुं जिन चाइन॥
तुम्ह जु कहत हम मोही सुनिकै। अबहिं उधेरनि लागी बुनिकै॥
पीति लगि कैं कहा न कीजै। सरब सुबार लाल पर दीजै॥

सोरठा-10

कंवलापति जिय मांहिं, पीति जान कुंवल भई।
झिरि कछु बोली नांहिं, सुवटै लीनौ टेरि बहु॥

चौपई॥ ६३॥

दरस देखि कंवलावति नारी। पर्‌यौ धरनि सुधि बुधि-बिसारी॥
चित्र कौंन चित्रै चित गयौ। चित्र चितेरा आपुन भयौ॥
सुवटै रंगी जीव डुरायौ। नीर आनि कैं परसु धुकायौ।।
चेत चितेरा बोल्यौ मुख तें। काहे मोहि दयौ दुख सुख तें॥
सिर पर धरयौ बचन हौं तेरौ। हूंसिष भयौ गुरू तूं मेरौ॥
किहिं बिधि चितरूं मोहि सिखावहु। देख न सकौं कहां दिखरावहुं॥
बिन देखैं चितरनि ह्वै कैसैं। देखैं ह्वै हूं देख्यौ जैसैं॥

दोहा-53

बहुत बहुत कहिये कहा, थोरैं ही मैं जान।
जतन करीयेहू ना जुरै, जो जोरहु चखि भांन॥

चौपई॥ ६४॥

तबहि कहयौ कंवलावति ऐसौ। पीठि देइ दरपन लै बैसो।।
हूं ठाढी ह्वै हूं तुव पाछैं। देखि परति बिंब चितरौ आछैं॥
सुनत बात सुवटारहंसीयौ। यहै ऊपाइ चितेरैं भायौ।।
लै दरपन कर बोल्यौ आवहु। माता पाछैं दरस दिखावहु॥
कंवलत पाछैं भई ठाढी। प्रतिबिम्ब देखि पत्र पर चाढी।।

दोहा-54

चतुर चितेरा चित्रि हैं, चौंपनि चांव न चित्त।
मेरौ हूं आदर बढ़ै; मिलै मिंत सौं मिंत॥

चौपई॥ ६५॥

चितरि चितेरा घर कौं धायौ। हनू सुरति मनौं सीता ल्यायौ।।
जारि चल्यौ चिंता गढ लंका। दुख परहरि कै गयौ बिलंका॥
दहसिर बाट काटि कै ततछिन। आयौ लांबी डगन सुलिछन।।
आयौ ह्वै दरसन ऊजियारै। पूंजी पूजा देव निहारै॥

दोहा-55

जिह बिधि स्वामी सुख लहै; सोई बिस्वा बीस।
नीके निरमल फूल ते, चढ़ैं जु इसुर सीस॥

चौपई ॥ ६६ ॥

ता संग कंवलावति तजि छपनौं। पठयौ येक चितेरा अपनौं।।
तुम्ह हूं कहयौ जाइ कैं देखहुं। चित्र वाहि कागर पर लेखहु॥
दोऊ गये नगर वहि सोहन। इंद बदन बसि है जहां मोहन।।
याकौ छाडि आपुनै डैरैं। वहु चलि गयौ कुंवर कैं नेरैं॥
जाइ कहयौ मोहि देहु बधाई। दई तिहारी जोर मिलाई।।
षोलि चित्र दीनौं जब लौनौं। मनहुं कुंवर कौं कीनौं टौनौं॥
लै लै चित्र हिंगरै लगावत। फूल्यौ अंगि मझि नहिं मावत।।

दोहा-56

चित्र चाहि चिंत कुंवर कै; अति हीं भयौ अनंद।
पूरन ह्वै सोलह कला; पून्यौ पायौ चंद॥

चौपई ॥ ६७ ॥

अपनै चित्रहिं चित्र मिलायौ। भरम रहयौ अंतर नहि पायौ॥
घाट बाढ कोऊ कहयौ न जै है। ददुबन मैं समहीं छबि पैहै॥
कहत कहा दैस किहूं तौकौं। अैसौ चित्र दिखायौ मौकौं॥
लाख रुपईया ततछिन दीने और बहुत कछु देने कीने॥
रीझि रीझि मुख बोलत अैसैं। दई कस्यौ चाहत हौ जैसैं॥

दोहा-57

मन तखर ते जान कहि, ऊलही सुष की कौंप।
तुस्टभान हवै कै दई, दीनी जोई चौंप॥

चौपई ॥ ६८ ॥

अबहि जाइकैं राइ जनावहु। गहर छांडि मोहि ब्याह रचावहु।।
कहयौ चितेरैं क्यौ ह्वै अैसैं। नैहूं करैं करी तुम जैसैं॥
ऊनहूं पठयौ आहि चितेरा। मेरै हूं डेरैं ऊहि डेरा।।
वाकौं अपनै पास बुलावहु। आपन पौ चितराइ पठावहु॥
जौ ऊनहुं कैं मन कौं मोहै। तबहिं जाइ तुम्ह कहत जु सोहै।।

सोरठा-11

कुंवर कहयौ घर कानि, अब जिन गहर लगाइ तौ।
बेगि मोहि ढिगु आनि, देखि चित्र लै जाइ ज्यौं॥

चौपई॥ ६९॥

अग्या सुनि अनंदित भयौ। आइ धाइ संगहिं लै गयौ।।
जाइ जुहार चितेरै कीनौ। धरनि परयौ चित कुंवरहिं दीनौ॥
दूजैं धाइ ऊठाइ बिठायौ। कहयौ चित्र तैं भलौ बनायौ।।
तब हिंवुत बोल्यौ इस मुखतें। मोहि दूरि कीजै या रुखते॥
याकै रूप नाग हूं खायौ। धरन परयौ अति ही लहिरायौ।।
मोहि भयौ जागति ही सपनौ। चितरै कौंन मोहि (त मन) डरू अपनौ॥
हंसे कुंवर बोले यौं करिये। चित्र मोहि इंह आगै धरिये।।
कुंवर कह्यौ सोईपैं कीनौं। चित्र अपुनि ऊहिं आगैं दीनौं॥

दोहा-58

चित्र देखि ऊन चित्रियो, मन में भयौ हुलास।
आयौ महा ऊतावरौ, कंवलावत कैं पास॥

चौपई॥ ७०॥

चित्र दिखाइ बात सभ कही। भई कंवलनी अति डह उठी।।
चित्र चित्र कैं आन्यौ नैंरैं। भयौ समान भलैं करि नैंरैं (हेरैं)।।
धन धंन धन धंन भाग हमारौ। धंन धंन धंन सो सिरजनहारी।।
जि नर हमारी जोरि मिलाई। चाहत आहि बात सो पाई॥
रहें रतन बिधना यहु दीनौं। भली भई जो ब्याहु न कीनौं।।
कोट रुपइया दीने ततछिन। देने करे और सुलिंछन॥

सोरठा-12

लालन पर नग लाल, जो दीजै सो सुलय है।
वहु सो हरै जंजाल, सभ जग, दे दये न दूरि है॥

चौपई॥ ७१॥

बांभन वहै कंवलनी टोरयौ। जात जु पहिलैं मगते फेरयौ।।
जाइ कहौ राजा सौं सूधौ। कान्ह मिलायौ गोपिन ऊंधौ॥
वर चाहत सुलहयौ जगु माहीं। जौ न देहु तौ कछु बर नाहीं।।
चौंप ब्याह राजा मन आहै। जाइ कहौ। तौ अब हम ब्याहै॥
बांभन कौं सब बात जनाई। जात पांतिं बिध कुंवर सिखाई॥

दोहा-59

रूपवंत औ द्वै कुलौ; लछमी दासी ताहिं।
गुन लछिन अति ही निफुन; ऊपमा दीजै काहिं॥

चौपई ॥ ७२ ॥

बांभन जाइ जनायौ राजैं। अबहिं गहर कहिहौ किह काजैं।।
हमेहिं बुलाइ कहयौ कंवलावत। बर पायौ अपनैं नि भांवत॥
राजा सुनत कंवल ज्यौं बिकस्यौ। कंवलावत मुख अैसौ निकस्यौ।।
मोकूं चिंत रहत यह भारी। कंवलावति कूं देखि कुंवारी॥
पंडित तुम्हं कछु जानत को है। अैसौ कौंन जु या संग सोहै।।
तब पंडित यौं बात ऊचारी। रूप पुरी नगरी ऊजियारी।।
रूप राइ राजा तहां सोहन। इंद बदन तिंह सुत मन मोहन।।
रूप वाहि कौ चित्र मंगायौ। चित्र आपुनौ तिंह ढिगु लायौ॥
नरि सिषलौं पिरि फिरि निरझायौ। काहू बिधि कछु घाट ना पायौ॥

सोरठा-13

सुनत भौंचक्यौ राइ, बांभन बोल्यौ ऊठतौ।।
अैसो जन्यौ न माइ; जो वाकै ढिग सोभि है॥

चौपई ॥ ७३ ॥

जब लग मोहि न आनि दिखावै। काहू भांति न मन पतियावै।।
बाभन धाइ बेग लै आयौ। देखत ही राजा मुरछायौ॥
कहयौ नैन कंवलावत धंन धंन। इह सम और निहारयौ जन मन।।
राजै कहयौ कछु यह जान्यौं। पायौ कौंन चित्र किंह आन्यौ॥
बाभन कहयौ कंवलनी गायौ। उडत फिरत सुवटा कहं पायौ।।
कहयौ बहुरि ऊहि ऊलटि पठावहु। कहि पठ बहु ब्याहन कौ आवहु॥

सोरठा-14

पंकज कैं सुष प्रानि, भयौ लषैं ऊदोत ससि।
पठयौ सुवा सुग्यान, कहयौ अवोट माघ हरि कर॥

चौपई ॥ ७४ ॥

कीर रहंस ऊपजी जिय माहीं। पांषन माझ समावत नांहीं।।
मुखहि भई दुनी अरुनाई। मानहु भोरि कोई गुरलाई॥
हर्‌यौ बरन् भयौ दूनौ हर्‌यौ। सावन मैं तिन ज्यौं गहबख्यौ।।
मनहुं पंषि पांषन कैं लाई। जाइ बनाई बनी बनाई॥
कहयौ कुंवर मोहि देहु बधाई। बात भई तेरैं मनि भाई।।

सोरठा-15

पंकज की यहु रीति, रहै ऊमाहै चंद कैं।
देषहु पैमु अनीति, इंद कंवल कौ चाहि है॥

चौपई॥ ७५॥

ठाढौ भयौ कुंवर ऊठि चाइन। धाइ परयौ सुवटा कैं पाइन।।
रह्यौ हुतौ सुष तर मुरझायौ। सो तैं जल बैननि सरसायौ॥
रूध्यौं हौ जिय सोच अधारै। सो तैं कीनौ चैन ऊजारै।।
बिरह समुंद पै हौं हारयौ। बूडत आनि नाव सुष तार्‌यौ॥
कीर कह्यौ अब गहुर न लावहु। जाइं बात सभ राइ जनावहु।।
इंद बदन राजा पैं आयौ। आवन-जांन सूवा कौं गायौ।।

सोरठा-16

परझुलत भयौ राइ, कहयौ वहै जिय चौंपही।
तोहि ब्याहि कौं चाइ; अपनै नैननि देखिहूं॥

चौपई॥ ७६॥

कीर बुलाइ बिदा तब कीनौं। दोइ मास कौ साहौ दीनौं।।
कह्यौ कीर तुम्हकौ कहा दीजै। जो भावत सोई अब लीजै॥
कीर कह्यौ जो आसि तिहारैं। सौ हम जानत आहि हमारैं।।
यौं कहि ऊडयौ ऊहां तें पंषी। आयौ बेगि पास हर नंषी॥
बहुर जाइ राजा सिर नायौ। दोइ मास को साहौ ल्यायौ।।

सोरठा-17

जिय मैं भयो हुलास, ब्याह रचायौ चौंप सौं।
हरिष फूल की बास, राजै मधुकर तन रमी॥

चौपई॥ ७७॥

जाचिग जग जन बोले बहु राजै। पंच सबद राजैं दरवाजै।।
कंवलावत मांझै बैठाई। मलिन रहत पैं दिपत सबाई॥
कियै ऊबटनौ अैसी सोभित। कहां चली पुरषन धन लोभित।।
छबि मैं छबि बाढ़त मन रंजन। मनहुं चांद कौ कीनी मंजन॥
इत इन ऊतहिं संवारत ऊनकौं। जोति जोति मैं होत दहुनकौं।।
ऊतहुं पंच सबद नित बाजैं। मंगलचार गवावत छाजैं॥

चौपई॥ ८४॥

तमचर बोलि दुहाई दीनी। कछु इक कान कुंवर तब कीनी।।
येतें चिरियां चरचा कीनौ। कुंवर लजाई बसन तब लीनौं॥
कोतवाल हरि आनि छिड़ाये। भये षीन बल घाव लषाये।।
सखिन आई कैं दरसु धुवायौ। बागौ नींकै बानि बनायो॥
बार गूंद सभ भांति संवारी। पैलछिन रस छपहि न प्यारी।।
लछिन सुरति छयैं तन माहीं। जौ सौंधा प्रगट ह्वै जाहीं॥

दोहा-62

जातनन कियैं नाहिं न बुझै, रतन सुरति की जोति।
छपि छपि दुरि दुरि कीजिये, परगट अरगट होति॥

चौपई॥ ८५॥

इंद कंवल दहुंवन सुष पायौ। बिरह समुख डिस्ट न आयौ।।
काम कलोल रैन दिन बितवैं। चितवनि यहै और नहिं चितवै॥
संगी कहै बहुत दिन बीते। चलहु हमहि हारे तुम जीते।।
राजा औ रानी तरसत हैं। मिलन चौंप के घन बरसत हैं॥
जौ छांडि इत तें ऊत जैहै। जोरस इतहि सोई ऊत पै है।।
कहयौ जाइ देषहु सुमहूरत। जा दिन चलें लहै सुष मूरत॥
कहि कंवलावति कैं ढिंग आयौ। पौढि रहयौ पलिका संचु पायौ।।

सोरठा-23

ही रैन मरतवरन, कहयौ सुरनि सौं चाव यहु।
दंपति रूप निधान, ल्यावहु ह्वै देखहिं सभा॥

चौपई॥ ८६॥

आया सुनत बहुत सुर धाये। भूव लोक ढूंढन कौं आये।।
ढूंढि ढूंढि फिरि गये सम पुर। लहयौ न वैसौ देषे पुर पुर॥
येक देव आये यह रूप मैं। इंद कंवल सोवत है सुष में।।
देखित कंवलावति मुरछायौ। पर धरि धीरि ऊठि नीरै आयौ॥
पलही मैं यहु सुन्दर जोरी। लै सुरपति कैं आगैं छोरी।।
देखत रीझ्यौ हरि पर बीनौ। वहु सुर सिर असुरनि सुरकीनौ॥
सभा देखि दोऊ भरमाये। कौन ठांव हम कैसें आये।।

सोरठा-24

बहुत राग और रंग, अनगन बाजे बाजी हैं।
देखत होइ ऊमंग, चिंता कछु जिय ना रहै॥

चौपई॥ ८७॥

गीत भेद बैठे बहु गावत। जान नाव कछु येक जिनावत।।
येलाः बलिनी चरिज्या लुंचक। तूंबीः दंती मंगलः त्रोटक॥
भुजंग प्रयात अरगल। डूं बर्यालिताः घोरः धवलः।।
ढीकीः तपासम ग्राहकः। त्रिभंगपुट, तंडक कुंवलय त्रिपदी ध्रिपदी रासक॥
स्त्रग्विनी हलचारी गहय घूरतक। मात्रांरती चौपदी दोधक।।
गारुधमाल षटपदी चंचरी। करन भंवुन वीरक, ढोलरी॥
बसंत तिलकः राहरी सुनावै। आप रीझि सुरपति हिं रिझावै।।

दोहा-63

माठा प्रीति माठाः ध्रुवा; चिन्ह वरतनी स्यांमा।
गाव्रत हैं परबंध औ; त्रिवट मिलि नर बाम॥

चौपई॥ ८८॥

औ अनेक बाज तहां बाजत। मधनई कंपुरि अति हीं छाजत।।
तरज तूर समर धुधुज तंता। मुरली सुनत पद्यौ जानु तंता॥
बेनवः बेसः बीन मिरदंग। मंदल मुरजः होत अति रंग।। कासिः सुषिरः बलकी आनंध। फुकरः त्रिधा जसपाट सुख फंध॥
संष भेर दुंदभिः बंसादिक। आनक ढे। ताल भुजादिक॥
बिपची झलरीः तालादिक धन। प्राभितकः औ, तोदहर नमन॥

दोहा-64

हा हा हू हू निफुन गुन, सभा पगावै पाग।
आ खंडल ढिग गाइ है, कुटंब सहित षट राग॥

चौपई॥ ८९॥

कहत जान अब नाव बषानूं। बरन बसन हूं तामैं आनूं।।
है जू भेद सागर संगीत। परगट करिहूं वाही रीत॥
परथम सिरी राग पहिचानहु। बाहन हंस तीन मुष जानहु।।
आठ हाथ औरंग है सेत। रूपवंति सोभा अति देत॥

सीव चकर मंडल कर सोहै। तुंवर अंम्रिती अति मन मोहै।।
आंकुसः कंवलः चक्रः औ गदा। लिये रहत ये कर मध सदा॥
केदारा गौरी अतिकारी। आंगी पीति भई छबि भारी।।
गौरी बन जनमी यहु रीति। कर सुवटा औ रंग है पीति॥
गावत गीत मालुवा बन मैं। कीर रंग निस आइ सदन मैं।।
रामकरी कंचन तन भावै। परि परि पाइ बलाल मनावै॥
तीन पुत्र याकै धरि कांन। अबहि वाहि कौ करौं बषान।।
कोलाहल अति ही छबि भारौ। बसतर पीति बरन रतनारौ॥
अंध्या स्यांम बरन है बन में। बसतर सुकल ताहिं कैं तन मैं।।
दरबारी बगरंग ऊजियारौ। बाइस बरन बसन तन कारौ॥
कौस कपिठा याहि कौ जानहु। बसतर स्यांम पीति रंग मानहु।।
माता देव गंधारी कारी। आंगीन पीति कछुक रतनारी॥
याकौ ससुर त्रिबिधा कारौ। पहिरयौ गरैं बसन रतनारौ।।
व्यासरूपनी अधिक छबीली। कनक बरन तन आंगी नीली॥
आहि कान रौ याकौ भईया। षरग दंत कर रंग कन्हईया।।
बिहागरा भावज ऊहि मानौ। आंगी पीति स्याम तन जानौ॥
और सहाना सूहै बागैं। कंचन बरन देषि चषि लागैं॥
और अडाना चातुर नारी। सकल बरन आंगी तन कारी॥
दस षर षट सिर अरुन बसंत। पिक बाहन चाढ्यौ मैमंत।।
चक्र तवर डेरु संष आहि। कंवन अंब्रिती गदकर ताहि॥
मासूरू कंचन गात बिराजै। स्याम बरन आंगी अति छाजै।।
रूपवंति है सोरठ नारी। पीति बरन आंगी तन कारी॥
नारि सींधवा तन की कारी। आंगी पीति अरुन है सारी।।
पीति डाहरी आंगी कारी। बन मैं रोषै निस अंधियारी।।
सींधल स्याम बसन तन गोरैं। काफी जाहि कहत चित चोरैं॥
अआंगी कारी बनी हुसैंनी। पीति बरन तन मूरत मैनी।।
पुत्र याहि जानहु देसार। पीति गात बसतर रतनार॥
और (सरीर सिरी गौरा रंग गोरै। स्याम बसन जगत है भोरै।।
सघ्रन वाहिक्कत तनकारौ। बसतर सेत पीति रतनारौ॥
मात नाव जानि तिहि रारी। पीति बरन आंगी रतनारी।।

पढम सुसर ताकौ पहिचांनौहुं। बसतर सेत स्याम तन जांनहु॥
देवी सास सुवासी नारी। बसतर सेत बरन रतनारी।।
संकरा भरन ताहि कौ भ्राता। पीति बरन बसतर तन राता।।
कालेरा भावज्ञ तिह जानहुं। स्याम बसन तन पीति पिछानहुं॥
सींधू गौरी नीकी नारी। पीत गात चोली रतनारी।।
अति ही तुछ्छ मेघरी बांम। पीत बरन तन बसतर स्याम॥

चौपई॥ ९०॥

येक सीस बाहन है बैल। भैरों अैन कंपरदी छैल।
सींवच: कंवल गदा अहि बीन। माला अष्ट हाथ तिहधीन॥
सुकल बसन परभाती तारी, आंगी स्यांम. पीति है सारी।
परज अरुन बसतर अति नाचै, पीतबरन तन गीत हि बांचै॥
स्याम बरन भूपाली नारी, पहरि रही आंगी रतनारी।
बरन पीति तन पंकज बास, पति स्यौं कीला करै बिभास॥
देस कार रतनारै रंग, पीत बसन जिय माहिं ऊमंग॥
चखि ढांपें सुमिरत गंधार, तपसी भेस बिथारै बार॥
पूत वाहि कौ पठात हिं जानौ, स्याम बसन तन रगत छिछांनौं।
और हंस निरमल ऊजियारौ, सुकल बरन तन बसतर कारौ॥
और कांछ पीतंबर ताकैं, स्याम भेषि कीये नट वाकै।
जानहुं वाकौ पिता तिलंग, बसन सेत बाइस के रंग॥
मात तेलनी है अति कारी, पीत बरन आगी रतनारी।
सुसरा गंधरव पलासी, पीत बसन पग चांपत दासी।
सासू कारी भींव पलासी। पीत वसन पग दाबत दासी॥
दीपग भाई की यहु रीति, चंदन ढिंगु औरंग है पीति॥
सूहब भावज बसतर स्याम, अरुन बरुन तन मूरति कांम।
और बगाला है रंग सेत, बैनी लांबी सोभा देत॥
जैतसिरी नारी ऊजियारी, पीत बरन आंगी है कारी।

चौपई॥ ९१॥

पंचम स्याम सीस हूं पंच। दस कर गज बाहन सिंह बांच।।
आकुस गदा अंबिरती तुंबर। सीवच कंवल नाग औ चँवर॥
ये सभ पंचन कैं कर सोहैं। चारि सुकल षट स्याम बिमोहैं॥

पर्थम नारी जानहु गुंड। बसतर पुहप स्याम है तुंड॥
औ सामेरी बसतर स्याम। पीत बरन पौढन सौं कांम॥
जंगली बसन, स्याम-तन। सेत, घर छाड्यौ बनही सौं हेत॥
भीम स्याम-तन बसंतर पीरे। द्वै तरवर जानहुं तिहं नीरे॥
बीन बजावंति गौरै रंग। रैनं दिना यहु गति सारंग॥
सेत बरन मधु माघ सुहावै। निकटि येक नर बीन बजावै॥
मधुकर पुत्र बसन तिहं स्याम। पीत बरन जागै सभ जांम॥
चोष सेत रंग बसतर पीति। हथि चक्र या की यह रीति॥
सातुक निरमल बदन बिराजै। बसतर अरुन महा अति छाजै॥
देवक पिता ताहि मन मोहै। बसतर पीत स्यांम तन सोहै॥
माता अरुन बरन देपाली। बसन स्याम नैननि बहु लाली॥
सुसरा हा हा गौरैं गात। स्याम बसन जागै परभात॥
स्याम बसन सासू कांमरी। आंगी पीत सदन मैं षरी॥
भईया याकौ आहि कल्यान। बसन पीत तन स्याम पिछान॥
भावज कौतिग या रतनारी। स्याम बसन गिरवर ढिगु भारी॥
औ हमीर रंग हेम विराजै। अरुन बरन आंगी अति छाजै॥
औ धनासरी की यह सूरत। हरयौ वरन चित्रत पिय मूरत॥

चौपई॥ ९२॥

मेघ स्याम बाहन सिषी सोहै। सेत असेत आठ कर मोहै॥
चित्र फूल पंखा संख आहि। गादा अंब्रिती करननि ताहि॥
गोरी ललित गरै मैं माल। पौढी पग चांपति ह्वै बाल॥
स्याम बरन दरपन निरझावै। बिलावली अभरन ऊतरावै॥
टोडी इंद बरग कै बरन। बीन बजाई रिझावत हरन॥
रूपमल गौरौ दे साष। नाभ गंभीर ऊतंग तिहं भाषा॥
आसावरी स्याम गिर पास। कर मघ आहि ढिग चंदन बास॥
बीन बजावत है गूजरी। कुंदन बरन महा ऊजरी॥
पुचवाहि कौ लालठ छबीलौ। बसन पीत रंग अरुन रंगीलौ॥
लावक पीत बसन हैं कारे। आस पास गिर तरवर भारे॥
स्याम स्याम कर बीन बजावै। पीत बसन देष्यौ अति भावै॥
स्याम बरन सुर वाकौ तात। बसतर पीत बने अति गात॥

माता ताकी आहि इंद रानी। गंग बसन, तन जमना पानी॥
स्याम बरन सुसरौ तिहं पारौ। पीत बसन कर बैठी सारौ॥
रोहाठी सासू तिंह जानौं। बसन स्याम तन पीत बषानौ॥
भाई वाहि पूरबी गौर। षसननि सहित स्यांम सभ ठौर॥
भावज ताहि आहि बैरारी। गोरी चंवर ढुरावत नारी॥
औ परदासिरि कच बिथुराये। स्यांम वसन तन षौर लगाये॥
और बनी अति ही है अधर से। अरुन बसन मुख आहि बरन ससि॥

चौपई॥ ९३॥

नटनाराइन कंचन रंग। हाथ चतुर बाहन नर संघ
चक्र संष पंखा कर सोहै। और अंब्रिती अति मन मोहै॥
कर मुरली नारी बड हंस। स्याम बरन मानहु अरि संक॥
और बसन पीरे सुध नाट। बरन स्याम सलिताकै घास॥
स्याम बसन पहरे सुध अंग। बैठी सदन कंचन कै रंग॥
पीत बरन कर कंचन कंकन। स्याम बसन सोभित है टंकन॥
चतुर सीस ओकर खंभावत। बरन गगन बनही मेघावत॥
पुरबिया रतनारै गात। आगी पीरी अधिक सुहात॥
ईवर पुत्र बसन तिह पीरे। स्याम गात कर मैं है हीरे॥
दूजौ पुत्र नाऊ तिहां नाटिक। स्याम बसन तन सोभा हाटिक॥
औरि ईभ तन बसतर कारे। पीत बरन ढिग द्वैतर भारे॥
देव गीत जानहु अहि तात। बसतर सेत स्याम है गात॥
माता वाहि पीत कइलासी। स्याम बसनं गेरवर को बासी॥
स्याम बसन हू हू तिह ससुर। पीत पटंबर को पूछत कुसर॥
निखमी सास बरन की कारी। आंगी पीति अरुन है सारी॥

दोहा-65

अैसै पुरमैं लै गयौ, मानस को तित नांहि।
नास रूखन ऊतरि षेर है, नाको बैठै छांहि॥

चौपई॥ ९६॥

तहां येक चौराहर नार। कूजर महारथी जहां नार॥
रैन दिना डरपत दुख पावति। भै भंजन मुख ना दरसावति॥
ज्यौ ज्यौ फिरि फिरि देवहि चितवत। भरि भरि नैन नीर सौ रितवत॥

सुरहि कहत मैरे कर लावहु। तौ मौकौ तुम्ह जीवत न पावहु॥
जीभ खांडि कै ततछिन मरिहू। हौं अपनै जिय तै नहि डरि हूं॥

सोरठा-25

भाजी हरिषा चौंप लाल, वोट विनु अति विकल।
दही लहलही कौंप, देवा दुसहितु सार हवै॥

चौपई॥ ९७॥

सुन पापी सुर को लह जीजै। मीत ही मीत न हां तो कीजै॥
हम तौसौ कछु बुरो न कीनौ। काहे आनि बिछोहा दीनौ॥
चकई भोर चवे पति पावै। हमकौ निसि दिन बिकल बिहावै॥
हम पर बली होइ तूं फूल्यौ। अबिनासी हूं कौ डरू भूल्यौ॥

चौपई॥ ९८॥

देव कहयौ सुनि जिय की भासौ। सेवक भयौ साम ज्यौ राखौ॥
काहै कौं वै तौ ये तो अकुलात। वहु मानस हौं देव सुजात॥
यह तुमहूं जानत फिर जानहु। सुर समान मानस जिन मानहु॥
कंवलावत बोली जो जग पर। वारि कारि डारौ वहि पग पर॥
देव कहयौ तुम्ह रहि हौ तबहि। कुंव हिं मारि आई हौं जबहि॥
बात सुनत हुं अति डरु गहयौ। जीभ तोहि कांटू जिय कहयौ॥

दोहा-66

बली होइ जो आप पर, तासौं लरयौ न जाइ।
मुखहूं बुरौ न कहि सकै, तोऊ जिय न रहाइ॥

चौपई॥ ९९॥

जौ सुर तुम्ह चाहत हौ मोकू। सोई करहुं कहत जो तोकूं॥
देव कहयौ जो कहयौ सु करि हौं। वैन तिहारे सिर पर धरि हौं॥
बसन मोहि कछु हौं बस तेरैं। अनरस अनरस रस तेरैं॥
जौ मेरैं तूं मन मैं भाई। तो मैं इंद्रपुरी दिखराई॥
छलन काज पलट्यौ सुर रूप। ढिगु हवै बैठ्यौ महा अनूप॥

दोहा-67

जेतक बानि कांबानि है, मोहत ना ऊहि प्रान।
संहस कला सूरज भरयौ, ना इंदीवर ग्यान॥

चौपई॥ १००॥

कहयौ द्यौस जिन आवहि नेरौ। रैन भयै सोवत मोहि हेरौ॥
कैसें वोर तिहारी तकि हूं तीसीछन दिस्ट नाहि तकि सकि हूं॥
यहै कीन्ह सुरि दिन दिन पैठौ। निसहि आनि धौराहर बैठो॥
दूरहि देखि देखि सुख पावै। सभ निस मैं पल पल कनि लावै॥

दोहा-68

चंद मनहु कंवलावती, सुर है अैन चकोर।
ध्यान नै कुटा रतनहीं, दूर ही देखत वोर॥

चौपई॥ १०१॥

कंवलावती कौ दुख सभ गयौ। अबहि कहौ जिम ऊन दुख पायौ॥
कुंवर, जागि षोलीं चषि दूनौं। देखै कहा सदन भयौ सूनौं॥
हाइ हाइ करकैं भयौ ठाढौ। बिरह आय पैठयौ तन गाढौ॥
ठांव ठांव ढूंढी समधर की। मैं इच्छा पूजी नहीं मन की॥
टूकि टूकि बसतर करि डारै। सभै डासनै पलका फारै॥
धौई धौई भीतन सिर मारत। कंवलावत ही मुखहिं पुकारत॥

दोहा-69

प्यारौ डिस्ट न आई हैं, रह्यौ बहुत अति झांकी।
गुर औरतन गये मनौ, कनि धांथ औरांक॥

चौपई॥ १०२॥

कहत कहा गति कीनी दईवा। काहें कौं आन्यौ पुनमईवा॥
कहौ अबहि जीवनि किंह स्वास्थ्य। जर्म मोहि सुभ भयौ अकारथ॥
मोहि यहै चिंता सुख हीनी। नांव दयाल दया नहिं कीनी॥
सुख दारक तुमकौं जगु भाख्यौ। कहां नांव दुष कौ सुष पाठ उलटी॥
आनि मिलावहु मीत हमारौ। गरथ कहा कछु लगै तिहारौ॥
अबहिं मीत मेरो मोहि दीजै। आप करै की लज्या कीजै॥

दोहा-70

चरन चेर तुम्ह हूं लख्यौ, यहु अपराधी आहि।
जानि बूझि अैसौ करयौ, कहां देत दुख ताहि॥

चौपई॥ १०३॥

तुम्ह सपूरन पुजवन साधनि। जिन देवहुं मेरे अपराधनि॥
कहा दोस भागनि कौं दैह। वैहू बुरै करै सौ तैहू॥

तू समरथ तोतें सभ सरि है। बुरे भाग करि नीके करि है॥
अब हिंय है मनुहार हमारौ। मोहि मिलावहु मेरो प्यारौ॥
कहा कहूं कहत न आई। सभै लाज तुम्ह आहि गुसांई॥
करत बिलाप कुंवर सुधि गौनी। सिस्ट परत नहि मूरति लौनी।

दोहा-71

कबहूं कुंवर अचेत ह्वै, कहत जु मुख तें आइ।
कबहूं जिय मैं आनि डरु, बिधि कौ फिरि पछिताइ॥

सवईया॥ २॥

अंसुवा ढरत द्रिगु रकत बकते वहुरा। हाई हाई हाई तैं करतार तैं कहा कीयौ॥
मैंरै रोग की तैं काहे औखद छपाई, मो तैं मीत को बिछोहा निरमोही मोहि क्यों दीयौ।
नैन कौ ऊदोत प्रान कौ आधार हां तो कीनौ। दया हू न आई अति ही कठिन है हीयो॥
कहै जानव और कोऊ दष दैं तौ, तोहि ताकौ तैंरै दुष दयै कौन ताकौ कोऊ ना जीयौ॥

सवईया॥ 3॥

लाज नहीं आवत दयाल जु कहावत हौ, यह कौ बदया मीत मीत तें बिछोरि हौ।
यह लै तौ नेहु कै समद सुख नाव आन तारौ अंत दुख कौ भंवर लाइबोरि हौ।
जौ पै अपराध मेरे देखि कै संताप देह काहे को क्रिपाल आपको हत्या चहोरि हौ।
कहै कवि जान यह लालिच न तोहि साजै घांघ पैते गुर रांक तें रतन चोरि हौ॥

सवईया॥ 4॥

जाकौ तन जरत है तांते ताती आंच आवै, मेरे कहिबे कौ बिधि बिलग न मानियौ।
बिरह बियौग कैं अमल सुधि बुधि खोई सुरति न रही नैक निहचैं कैं जानियौ।
बावर ह्वै रह्यौ कछु समझयौ न जात कहयौ मन मध्य दहयौ आन यहै जिय आनियौ।
कह कवि जान अब यहै तो पै मांगत हूं जैसे दुख दयौ फिरि तैसै सुख बानियौ॥

चौपई॥ १०४॥

कुंवर कहयौ नीकै जौ मरियो। धौराहर परते धरपरिये॥
तेह छिन सुवटा आयौ रोवत। कहयौ कहा ऊपजी सुख सोवत॥
कुंवर मींड करनमुनि पछितावै। यहै कहै कछु कहत न आवै॥
कंवलावत जौ नाहिं न पाऊं। कौन काज हौं आप जिवाऊं॥
कहि धरोहर चढ़यौ परन कौ। सुवटा लगि रहयौ चरनन कौ॥
कहयौ कुंवर ऐसी नहिं कीजै। बहुत मिलैं प्यारौ जौ जीजै॥

दोहा-72

सुख पाछैं जौ दुख लहै, तौऊ जिन पछिताहु।
जिहि मुख मीठौ खाइयै, तिहं षासै हूं खाहू॥

चौपई॥ १०५॥

कुंवर कहै जीवन जिन मानहुं। मरबे तें आगर करि मानहुं॥
मरने येक बेरि दुख लहियो। बिछुरै रैन दिना ऊर दहिये॥
कीर कहयौ धीर दे मन कौं। हौं ढूंढू पुरपुर बन बन कौं॥
भूव लोक मैं काहूं पुरि है। तौ भोते केहू ना दूरि है॥
कुंवर कहयौ तौ ढील न लावहु। मतर हमारै भाग न पावहु॥

दोहा-73

कीर कहयौ दिन बीस की; अवधि किये हूं जाऊं।
जौ पईयै तौ आई हौं; ना तर मुख न दिखाऊं॥

चौपई॥ १०६॥

कीर ऊडयौ ढूंढत कंवलावत, देस-देस ढूंढत नहिं पावत॥
कुंवर ध्यान सुवटा न हीं टारत। रैन दिना आकास निहारत॥
बीती अवधि सुवा नहिं आयौ। तबहि कुंवर यह भेष फिरायौ॥
बसतर ठांव भसम तन पहरी। पाग ठांव जूरी दी गहरी॥
कंवर पनौ तजि कैं भयौ जोगी। भोग गये कीनौ विधि जोगी॥
निकस्यौ बाहर अरध निसाकूं। मन सोचत मग कौन दिसाकूं॥
यहै कहत बिधना कित जाऊं। ढूंढूं पचूं तौऊं खोज न पाऊं॥

सोरठा-26

नाहि न संगी साथ, ना मारग की सुधि परी।
बिधु क्रिया को हाथ, तौजन टारि ॥

चौपई॥ १०७॥

रोवत कंवर कहत करतार। मेरे तूं ही सिरजन हार॥
मात तात मो तें सम न्यारे। तुम्ह जिन हाते हो हु पियार॥
अब मोकौ लै मारगि लावहु। दई कहा बहि क्यौ बहिकावहु॥
ये तै माझ सुनी कछु अैसी। पंषी कहत कुंवर बुधि कैसी॥
कोऊ समझावै ससि मुखि कौ। पीठ दई कंवलावत रूष कौं॥
सुनत कुंवर पाछै की दिस कौं। धाइ गयौ बहु निस ही निस कं॥
इक बनि छाडि आन बन जैहौं। पलहू मारग मैं नहि छै हौ॥

दोहा-74

पैंडै मैं सोऊ तरिसै, चाहै सुख दयौ पान।
सो काहे मगढे हरै; गनै न ज्यौ की हान॥

चौपई॥ १०८॥

संगी कुंवर खेड झिरि मये। मात तात सुनि बौरे भये॥
सोक भयो राजा की नगरी। मदनपुरी रोवत है सगरी॥
रूपपुरी दुख की धुनि गावै। मदनपुरी दुख साज बजावै॥
रूपराई भोजन नहीं पैहे। मदनराइ सू अति दुख पैहै॥
रूपरेख नित झुरि झुरि मरि है। मदन कला हू दुख मैं जरि है॥
बढयौ संताप महा दह देसन। तिन के बासी मैले भेसन॥
रूपराइ जग बहु ढूंढयौ। इंद बदन कहंवा नहिं पायौ॥
मदनराइ बहु सुधि कीनी। सुता सुरति काहू नहिं दीनी॥

दोहा-75

दूबौ देसन माझइन, यौं बीतत कहि जान।
कथा कुंवर की बिता की, अबहि सुनहु धरि कान॥

चौपई॥ १०९॥

कुंवर जाइ सघन बन पैठयौ। तरवर देखि छांह तिंह बैठयौ॥
तहा येक मातौ गजु आयौ। मनुष देखि मारन कौ धायौ॥
कुंवर कांपि मुख तें यौ भायौ। पील वानहु नाहि जु राखौ॥
आयौ निकट विकट भयौ भाजन। ज्यौ हूं गयौ न पायौ साजन॥

दोहा-76

मुदगर सौं कंछु ना चलै, जंत्रन मंत्रन तंत।
गज गमनी पाई नहीं, (धस्यौ) जुगजमैं मंत॥

चौपई॥ ११०॥

येते मांझ यहै बुधि आई। रूंख चढूं मति जीव बचाई॥
वह तर चढयौ करी तर आयौ। रोस होइ तर जरहिं गिरायौ॥
कुंवर कहयौ कछु होत न मोएं। अबहि दई हौ बांचौ जो तैं॥
सुनत बीनती दई दयायौ। डार पात कुंवर बौरायो॥

सोरठा-27

धनि धनि सिरजनहार, कौंन कौंन छल बल करें।
पल मैं लावैं पार, बूडै कौं कवि जान कहि॥

चौपई॥ १११॥

भाज्यौ कुंवर सुमिर मन सांईं। मानहुं चरननि पंष लगाई॥
गज तें बचि दुरि जब्र गयौ। सांस लेन मग ठाढयौ भयौ॥
आगै पाछै आंखि पसारी। देखत ही ऊपज्यौ दुष भारी॥
येक नाग आगैं तें आयौ। येक नाग पाछैं तें धायौ॥
कुंवर यहै कीनौ जिय माहीं। अबकै केहूं बचिबौ ना हीं॥
निकट रुंख इक देख्यौ भारी। बहुर जाइ तिहं चढयौ मुरारी॥

दोहा-77

जिहि सौदै सुख पाईये, तिह फिर चाहै प्रान।
लाभ हानि गति ना लहै, हवै धौं कहां निदान॥

चौपई॥ ११२॥

ऊपर सीह मुरग डिठ आयौ। तातें कुंवर महा थररायौ॥
बहुर मनायौ सिरजनहारौ। तुम बिन कोऊ नांहिं हंमारौ॥
ज्यौ बाच्यौ पहिलै ऊहिं ठाऊं। अबकैं बहुर दान ज्यौ पाऊं॥
रिस ऊपजी दुहुंनि सापन मैं। जुद्ध मचायौ फिरि आपुन मैं॥
जबहिं भयौ अति ही जुध भारौ। यक नाग जम पंथ सिधार्‌यौ॥

दोहा-73

जुध करत इन जुगल कौं, बीतीं धरीं अनेक।
तबहिं जाइ इन मैं चल्यौ, महापंथ कौं सेक॥

चौपई॥ ११३॥

दूसर रह्यौ सु कुंवर हि धायौ। रोस मांझ तरवर लपटायौ॥
ऊहि तर जर न्यौरा कौ बास। तक्यौ सोर सुनि सीस निकास॥
चलत रूंष आहि देख्यौ कारौ। गहि कैं पौंछ पछार्‌यौ भारौ॥
नाग जूथ जम पंथ लगानौं। सीह मुरग तरू छांडि उडानौं॥

सोरठा-28

मुवो नाग दुख दैन, न्यौरा पहुचायौ दई।
भयौ कुंवर चित चैंन, नयौ जरम फिरि कैं लह्यौ॥

चौपई॥ ११४॥

न्यौरा फिर घर मै सिर दीनौं। कुंवर ऊतर अपनौ मग लीनौं॥
बहुर कुंवर बन धंन पै देख्यौ। मानस खोज कहूं न परेख्यौ॥

चलत चलत तर तर ठहरायौ। पूंछ फेरि सिर नाहर धायौ॥
कुंवर आपुनैं मन मैं लाज्यौ। रोपे पांव भाजिबो भाज्यौ॥
तबहै भाजि बंचायौ जीव। जीवत रहै मिलै मति तीय॥
अबहौ सोच न करि हौं कोई। जो बिधि चाह्यौ होइ सु होई॥

दोहा-79

सिंध कोप कर कुंवर पर, भभक्यौ है बल आस।
चक्र चलायौ चौंप सौं, करयौ सीस कौ नास॥

चौपई॥ ११५॥

अस्ट पांव हरि हनि कै चल्यौ। पुंडरीक मानौ मल्यौ॥
यह बन छाडि अनंत बन गयौ। बिटपी, जूथन नागिन भै गयो॥
हरहि गढि ऊजरडि आयौ, इन जान्यौ बसि है ऊठि धायौ॥
पौरि माहि पैठयौ यह बौरा। धौराहर आयौ डिठ धौरा॥
प्रेतनि सावर, दानव दैत। मुख गय गाइ चुरैलैं अैत॥

दोहा-75

द्वै द्वै करके दंत मुख, दूने नासक कान।
भै रूपी भारे महा, फिरे चहूं दिस आन॥

चौपई॥ ११६॥

येक बेर कुंवर हि सुधि भूली। सरसौंसी चषि आगैं फूली॥
बहु चेत कै चक्र संभारयौ। फेरि फेरि भूतन सिर मारयौ॥
कोऊ प्रेत न पावंहि नाक। कोऊ कांन न से बहु डाक॥
कौ दारा पै दसन ढुढावै। कोऊ सींग सूंडि नहिं पावै॥
येक येक सब कैंच पुहचांई। पाप सैन डरि कै ठहराई॥

दोहा-81

टौंटे नकटे कन कटे, मुरले लूले दैंत।
सीक सूंड सिर बिन परे, भई कुंवर की जैंत॥

चौपई॥ ११७॥

चल्यौ जात मग थाहि न आवै। नाकौ मासस दरस दिखावै॥
कुंवर सोच या बात हिं रोयौ। कहत यह सुवटा हूं षोयौ॥
कह्य करौं निस दिन कयौं टारौं। चित्र नाहि जौ वहै निहारौ॥
कर कर रूदन पग न डगि भरि है। कबहुं लटपटाइ धरि परि है॥

जानत नाहिं कहा बन कहिये। सो निस दिन बन ही मैं लहिये॥
पवन न लागन देत निहोरै। रैन दिना तिंह पवन झकोरैं॥

दोहा-82

मात तात छिन ये कहूं, भैंट न देतन धाम।
अबहि सदा तिंह कंवर कौं; परयौ धाम सौं काम॥

चौपई॥ ११८॥

जाकौ देखन कोऊ न पावत। ताहिन को आपौ दिखरावत॥
जब लगि पहिलै बिरह न सहिये। तब लग बिरह हरन ना लहिये॥
जौ लौ ज्वाला माहि न दहिये। तौ लौ कुंदन षरो न कहिये॥
बाती जौ आपहि न जरावै। तौ ऊदोत छबि नाहि न पावै॥
दरपुन जौ आपहि न मंजावै। तौ कोऊ कर नाहिं चढावै॥
जो मिहदी आपंहि न पिसावै। म्रिग नैनी कर पाइ न लावै॥

दोहा-83

पहिलै तनहि पिसात फिरि, पानी बडक खाइ।
भरजीवा जावक भाई; क्यौं न लाल पगवाइ॥

चौपई॥ ११९॥

जौंक गही करबत न धरावै। तौ कोऊ सिर नाहि चखावै॥
माटी चढित न चाक फिरावै। तौस भकोऊ न लै मुख लावै॥
जबहि पलास स्याम मुखि करि है। तब अरुप्पाई आंकौ भरि है॥
तब लग गहिरै नीर न जैहै। जब लग हीरा लाल न पैहै॥
जौ ऊबटनौ न आप जरावै। इंद मुखी तन नाहि लगावै॥

दोहा-84

पहलै आप जराइ कै, पाछै तनहि बिसात।
येक्रम साधत ऊबटनौ, क्यौ न लगै तिय गात॥

चौपई॥ १२०॥

कुंवर प्रान असौ दुष दहिये। जानत नाहि कहा सुख कहिये॥
चल्यौ जात दरसहि अति तरसै। नैनन मांहि मेह सौ बरसै॥
मार मैन तरवर परे बैठयौ। पंखी येक देखि डर पैठ्यौ॥
भै रूपी औ महा डरारौ। मनुष कहा गजहूं तिहं भारो॥
पंषी देखि सो धांन सांजु कछु कह्यौ। धाइ कुंवर परनाम धुकर्‌यौ॥
गयौ ऊडाइ तहा लै पंखी। भूधर बिनु कछु आइ न अंखी॥

दोहा-85

आगै बैठयौ हो गरुड़, परयौ देखि कै धाइ।
पंछी मारयौ चौंप सौं, दीनौ कुंवर छिडाइ॥

चौपई॥ १२१॥

कुंवर जाइ तिहि तरवर बैठयौ। गरूड़ आइ वाही तर पैठयौ॥
तिहि छिन वाकी बोली नारी। मनुष ही भषह अबहि ऊहि बारी॥
गरुड़ कहयौ तैं भिन सुर गायौ। कैसै हनौ सरन हम आयौ॥
सीह मुरग पैं षात छिडायौ। सो कैसे मोहि भावै खायौ॥
जौ तुम कथा बिथा यह सुनि हौ। नीर ढारि चखि सीसहिं धुनि हौ॥
कहयौ कहौ हा हा हम चाहैं। सुनि बैंकें चित भयौ ऊमाहैं॥

सोरठा-29

कह्यौ सुनहुं धरि कान, इंद बदन इहं नाव है।
राजाननि राजांन, रूप राइ याकौ पिता॥

चौपई॥ १२२॥

मदनपुरी यह ब्याह्यौ रावत। नांव याहि धन को कंवलावत॥
येक रात ये पौढे सुख मैं। जागे परे दोऊ भये दुख मैं॥
येक देव रीझयौ कंवलावत। तितहि गयौ लै जित चित भावति॥
नगर येक धौराहर भारी। पैऊंजर राषी तहां नारी॥
देखि देखि देवहिं दुष पावत। कुंवर कुंवर कहि कहि बिललावत॥

सोरठा-30

दई बिछोहा बान, काहू कै जिन लाइ है।
बिरहै की तीव्र षरसान, चढयौ सुक्यौं जिय छाडि है॥

चौपई॥ १२३॥

सुरहिं कहयौ दिन कौ जिन आवहु। रैन आई पौढी निरझावहु॥
यहै कहत हौं मुये बिसेष। जौ चखि जोरि वोरि तोहि देषूं॥
नैक देव दिन नगर न आवै। रैन देखि दूर हि सुख पावै॥
इन जब जागिल ही नहिं प्यारी। भेष धरयौ यहु, देषहु नारी॥
सुनत गरूरकी बोली नारी। इन्हीं मिलाये पुनि ह्वै भारी॥

दोहा-86

जौ काहू तन देखिये, ज्वाला बिरह जराइ।
सुरग लहै सो जान कहि, जो जल लाल दिखाई॥

चौपई ॥ १२४ ॥

कहा होइ ऊन कहयौ मिलायें। यातें देव टरत नहिं पायें॥
येक बात पूजै ऊहि सुरकौं। जो सेवै गोरष मनि गुर कौं॥
कोस तीन सैं इत तैं रहि हैं। निकटि जाइ वह ताकौं गहि हैं॥
लील जाइ झिरि ऊगलै तबहीं। मांगहु जो चाहत सो अबहीं॥
जो मांगै सो ततछिन पै है। णन इंच्या गोरषमनि दै है॥

दोहा-87

संकट, सुकत मुकत पर, कंचन रहयौ विराज।
निकस है बिनुने कहू, निकट न आवै काज॥

चौपई ॥ १२५ ॥

यह हू जौ आप ही लीलावै। अगलि कहै गोरष कहा भावै॥
तबहि कहै गोरष बलि जाऊं। जटा मांझ की मूरी पाऊं॥
वह मूरी जौ मुहि यह कर आवै। तब हि देव की समसर पावै॥
ऊहि मूरी तें यहु गुन पै है। चाहै जहां तहां ऊडि जैहै॥

सोरठा-31

दीजहि दमका कोर, अैसी मूरी आहि आहि।
कीजहिं लाष निहोर, जो केहूं कर आइ है॥

चौपई ॥ १२६ ॥

ऊहि धन बोली हम पग लागै। याहि ऊडाइ छाडि ऊहि आगै॥
गरर कहयौ अब तौ अहु जागत। तबहि ऊडाऊं जब पल लागत॥
कुंवर सुनत ये बात सिराये। नैन मूंद बड स्वास चलाये॥
तन मन सोवत हे सु जगाये। नैन जागत हे सुलगाये॥
जब गरर यह सोवत जान्यौ। ऊतहि उडाइ गुरु ढिग आन्यौ॥

दोहा-88

परयौ रहयौ सब रैन अति; नैन भोर कैं ध्यांन।
दई दई कैंनिस गई, दरसन दयौ बिहांन॥

चौपई ॥ १२७ ॥

कुंवर देखि गुर कौं ऊठि धायौ। भली भई वहु बोल्यो आयौ॥
यह हूं निकटि गयौ करि पोरष। लील गयौ भै रूपी गोरष॥
बहुर ऊगल। पूछयौ कहा चाहौ। टूठ्यौ देऊ जाहि ऊमाहौं॥
कुंवर कहयौ जौ बाचा पाऊं। तौ मांगत हौ नाहि लजाऊं॥

सोरठा-32

दीजै बाचा बोल़, पतियारौ ह्वै प्रान कूं।
जो मन माहि कलोल, सोई तुम्ह पैं मांगि हूं॥

चौपई॥ १२८॥

बाचा दीन्ह कहयौ जो तुम्ह मन। देऊ सभै जिम अपनै ज्यौ तन॥
कुंवर कहयौ तेरे गुन गाऊं। जस माझ की मूरी पाऊं॥
कहयौ ठग्यौ पै बाचा कीनी। मूरी काढि कुंवर कर दीनी॥
कुंवर महा हरखायौ मन मैं। गुरु परसाद मावत तन मैं॥

दोहा-89

जान कहै मन भाव तौ, गुरू बिन लहै न कोइ।
मांखी हूं जो गुर लहै, तो मुख मीठो होइ॥

चौपई॥ १२९॥

कर गहि, मूरी यहु जिय आनी। जांवुं जहां कंवलावत रानी॥
जे तक माझ पलनि पल लागै। ठाढौ भयौ जाइ ऊहि आगै॥
कंवलावत देखत भरमानी। जागत बात सुपिन करि जानी॥
कुंवर कहयौ कंवलावत प्यारी। तब जान्यौ यहु प्रान अधारी॥
धाइ लगे गर प्यारौ प्यारी। देह सिरानी दुख की जारी॥
देव न हौ घर होइ निसंक। दोऊ सुख बैठै परजंक॥
बिरह बिधा बीती ऊन माहियो। सो सब ही महिल की छाहियां॥

सोरठा-32

बिथा भूलि सब जाइ, बिथा हरन ज़ौ पाईये।
जैसे चात्रिग भाइ, स्वाति लहैर बौर हैं॥

चौपई॥ १३०॥

कह्यौ कुंबलनी कारि मुष फीकौ। इरहिं मिलिबे तैं बिछुरन नीकौ॥
कहौ कहा। सुखं कीहै मोकौं। अबहिं आइ सुरहनि है तोकौं॥
तोहि हनै हौं जियहि बिसारू। जीभ खांडि कै आपहि मारूं॥
अबलौ मिलन आस हौं ज्याई। जौ यौ ह्वै ज्यौ तन न रहाई॥

दोहा-90

तुम बिन छिन सुख ना लहयौ; निस दिन गये ऊदास।
पैंतन मैं जियरा रहयौ, बहुरि मिलन की आस॥

चौपई ॥ १३१ ॥

अबहि भलै निहचैं कैं पायौ। मेरौ काल तोहि लै आयौ॥
कुंवर कहयौ तुम्ह नाहि न जानी। मूरी येक गुरू सैं आनी॥
ऊहिं मूरी कौ, जौ कोऊ लहि है। ऊडता फिर कोऊ नाहिन गहि है॥
चलहु अबहि इतते ऊडि जैहैं। पीहर तेरौ पल मैं पैहैं॥

दोहा-91

कंवलावत भरिस्वास यौ; कहयौ कुंवर धरि कान।
जब लग जीवै देव यहु; दैहै बिरहु निदान॥

चौपई ॥ १३२ ॥

अैसौ कछू ऊपाव बनावहु। जिहिं उपाव सुरासन गंवावहु॥
कुंवर कहयौ निस कौ जब आवै। दूरि हि बैठ दरस परसावै॥
निकट बुलाई मान ऊहि दीजै। काल भेद वाकौ सभलीजै॥
सूर छप्यौ ससि मुखि हूं छर्‌यौ। देव आनि धौराहर तक्यौ॥
और बेर छिन मुह न लगावत। ऊहि निसि कहयौ क्यौं न इतआवत॥
निकट भयौ सुनि। सुर अति फूल्यौ। कपट कलप सभ चित तें भूल्यौ॥

सोरठा-33

मिंत बुलावै पास, तबहि चिंत कछु ना रहै।
पावै फूल सुबास, कंटक भूलै मधुप कौं॥

चौपई ॥ १३३ ॥

कंवलावत बोली कछु जानत। मेरो मन किम तोहि न मानत॥
याहि सोच हौं होत दुहेली। तोहि मुयें हवै जाऊं अकेली॥
तेरै मात सु सा नहि पाऊ। तुव पाछै जिहं जीय रमांऊं॥
हंसि बोल्यौ सुर सुनि कंवलावत। मोहि काल की खोरि लगावत॥

दोहा-92

घटै न मेरी आर आयु बल, लटै न कबहूं जोर।
इन बातन तें जानियें, कंवलावत बुधि थोर॥

चौपई ॥ १३४ ॥

अैसौ कौंन जु मोकौं मारै। जिन सीयौ सौ नीकैं फारै॥
सागर येक दूरि अति इतते। बाढ मोलि नग आवहिं जितते॥
ता मधि येक कंबल अति भारौ। तिहं पषुरिन मैं षटपद कारौ॥
तिह दुरेफ मैं जीव हमारौ। कौन जाइ हनिस कै जुगारौ॥

दोहा-93

आडंबर करता करै, सो सति सोभा पाइ।
और जु आडंबर करै, सो निहचैं पछिताइ॥

चौपई॥ १३५॥

पौढि रही कवलावत सुनि कैं। बात धरी यहु जिय मैं चुनि कैं॥
भोर भयौ गौन्यौ सुर बाहर। तबहि कुंवर आयौ धौराहर॥
बात कही कंवलावत नागर। कुंवर गयौ मूरी लै सागर॥
हरष्यौ कंवल निहारत कंवरहि। और सुन्यौ मुन्नावत भंवरहि॥
ऊदधि पैठि तिरि पान पसारयौ। अति ऊमंग सौं कंवल ऊषारयौ॥

दोहा-94

कहत यहै मन मैं कंवर, कंवर भंवर लै जाऊं।
तौ निरभै निरचिंत ह्वै, कंवलावत कों राऊं॥

चौपई॥ १३६॥

कंवल ऊपारि बेग लै आयौ। तबहि प्रान सुर कौ अकुलायौ॥
आबू कहयौ कंवलावत हा हा। मधुकर छाडि देइ कहूं नाहा॥
तौ ऊडि इंद्रपुरी महि जैं हौं। तुमकूं कबहूं ना दुखु दैहौं॥
जेतो फेरि फेरि बिललावै। अरि परि कोऊ नाहि दयावै॥
कुंवर काढि अलि भौंरयौ मार्‍यौ। आपहि देव भौम पर डार्‍यौ॥
दहुंवन प्रान दये इक साथ हि। परे देव अलि जम के हाथ हि॥

सोरठा-34

पूजी इंछ्या प्रान; करता दीनौं दान सुख।
प्यारौ आयौ पान; करता सुख हरता बिरह॥

चौपई॥ १३७॥

इह बिधि देखि महामन लाजै। बिरह बियोग आप कौ भाजै॥
कुंवर कहयौ तजि धौराहर। चलहु जांहि अब तेरै साहर॥
कंवलावत कहे सुनि प्यारौ। मेरे पीहर कौं पग धोरों हरौ॥
तरसत है बहु प्रान पिता कौ। औ अति चाहूं देखूं मा कौ॥
येक बार चलि इत तौ जांहिं। लै दहेन तब ऊत कौ धाहिं॥
वैह जानै नीकै जानै आये। येहू जानै भलै पठाये॥

दोहा-95

जैसै इन यहु देस मैं, दुख ऊपज्यौ सुख होइ।
तैसै चलिज्यौ दहुंनि मैं, दुखहिं मेटि सुख होइ॥

चौपई॥ १३८॥

मूरी गहि कै दोऊ धाये। अति ही चपल मदनपुरी आये॥
राजा रानी जाइ जुहारे। देखि सिराने दुख के जारे॥
बहु दिन की ही तपति जु तन मैं। निकसि गइ पलहि परसनि मैं॥
बिथा पूछि सुनि कैं भर मान्यौ। धन धन दइ यहै मुख आन्यौ॥
मंगलचार गवाये राजै। पंच सबद रंग लीयै वाजै॥

सोरठा-35

जाकी होइ न आस, सो प्यारौ करतार है।
याते बहुत हुलास, कहो कहा जग होत है॥

चौपई॥ १३९॥

कुंवर कहयौ जिय चिंत हमारैं। मात तात कैसे दिन टारैं॥
बेग बान इक जन दौरायौ। मात तात कौ कहि जु पठायौ॥
जिन करता हम कौ दुख दीनौ। तिन ही अब फिरि कैं सुख कीनौं॥
अब जिन भूलि रहौं तुम्ह दुख मैं। सुख मैं रहियौ हम है सुख मैं॥
जाइ कहयौ पंक्षी जब जाग्यौ। रूप राइ ऊठि पाइन लाग्यौ॥
रूदन करत है नैन गवाये। ते फिरि कैसे पूरन पाये॥

सोरठा-36

चैन भयौ सभ गांव। रूप राइ जल धर मनौ।
हरयौ करयौ सभ गांव, दमकन की बूंदै बरिख॥

चौपई॥ १४०॥

रूंख पखेर हूं अति हरसाई। घर घर घर घर बंटी बधाई॥
पंथी सौ राजै यौ भाख्यौ। मै तोतें कछु नाहि न राख्यौ॥
तोहि देत मन सोच न करि हौ। ज्यो मांगहु तौ नाहि न करि हौ॥
नैन दान मोकौ तैं दीनौ। कहयो इंद मुख आवन कीनौ॥
इंद ऊदोत आइ तैं कहयौ। प्रान कंवल कीनौ डह डहयौ॥
अैसौ कछु देउलट पठायौ। बहुर दरिद पथिक नहिं पायौ।

दोहा-96

प्यारै कौ आवन सुन्यौ, कहै कहा दीजिये ताहि।
दरब कौन कै ग्यान मैं जुगति प्रान की आहि॥

चौपई॥ १४१॥

लिखि दीनी पथिक कर पाती। कहयौ तेल बिनु बुझि है बाती॥
इह नगरी कोऊ छीनन मोतें। बिरघ भयौ औ बिछुरयौ तोतें॥
तोहि नैन जो नैन मिलाऊ। तौ फिरि कैं तरनापुन पाऊं॥
ह्वै दयाल हरि गोकल आवै। तौ नी कै गोपी सुख पावै॥
मुरली टेर सुनत नहिं जब लौ। सुरमिनी सैल न भावै तबलौ॥
पथिक जाइ कुंवर समझावहू। गहर करें तो हमहि न पावहु॥

सोरठा-37

बहुत गये दिन बीत, कैसें कैं जीवन बनैं।
काल लेत है जीत, अब बाजी हम आवकी॥

चौपई॥ १४२॥

चल्यौ पथिक सखि मुख पै आयौ। ऊत कौ राग साध सुर गायौ॥
पाती दई बिथा जिह गाढी। अछिर पिता देखि सिर चाढी॥
बहुरि षोलि जौ बाची पाती। राखी रही न ऊमगी छाती॥
कुंवर नैन झरना से बहे। सास ससुर दोऊ देखत रहे॥
कहयौ कुंवर आंसू कत डारे। देखत ऊमगे नैन हमारे॥
कहयौ, पिता बहु बिथा सुनाई। तातें नैननि बरिषा आई॥
ऊन दुख बांच आंच सी लागी। पौढि रही चिंता झिरि जागी॥

दोहा-97

अबहिं यहै हौं कहित हौं, बिदा बेगि मोहि देहु।
रोम रोम तन बिसतरयौ, मात तात को नेहु॥

चौपई॥ १४३॥

मदन राइ हइ बहुत मंगाये। औ कुंजर नहि जात गनाये॥
ऊंट लाख कछु अजहूं आगर। भरि दमका दीने ऊन नागर॥
हीरालाल बूंद समधनि है। मुहर रूपईया कोधौं गनि है॥
बसतर बहुत दये बड़ मोले। बहुत दिनन के बांधे खोले॥
सीपज बडडे औ बहु पानी। ऊडिन झिलक तिंह देखि लजानी॥
दै दहेज नीकै अति सोहन। बिदा करे दोऊ मन मोहन॥

दोहा-98

जोई छवि कंवलावती, इंद बंदन कौं सोइ।
नष सिख लौ दोऊंनि फुनि, घटै बढै नहि कोइ॥

चौपई॥ १४४॥

मदन कला बोलींयौं कंवर हि। जग मैं बहुत मालती भंवरहि॥
तुम्ह याकी बासहि जिन तजि यहु। स्त्री आधरन लेत मन लजियहु॥
कुंवर कहयौ अैसै जिन जानहु। मोहिया हियेै करि मानहु॥
यहु तजि और फूलि हौं नेरौं। तौ अलि बरन होइ मुख मेरो॥
कंटिक प्रीति गडयौ मन अैसौ। ऊडि न सकौ देखत हौ जैसौ॥

दोहा-99

भंवर लहै जौ केतुकी, तजै न कबहुं भूल।
जीबौ मरिबौ वाहि संग और न जाने फूल॥

चौपई॥ १४५॥

मजन बात सुनि मो चित लजि है। को आपै अपनपौ तजि है॥
जा दिन ऊन हम कीये बिनानी। माटी येक ठांव की आनी॥
नीर येक सागर कौ आन्यौ। येकै प्रान दोइ घट बान्यौ॥
दहुंवन मै कोऊं भेद न पावत। जोई इंद सोई कंवलावत॥
कहिबे कौं वह नर वह नारी। ग्यांन किये यै आकारी॥
कंहंन सुनन की चिंता नांहीं। पीत पुरातन हम इन मांहीं॥

दोहा-100

पूछयौ जब करतार हूं; हौ तुम्ह सिरजंनहार।
तब येकू संग हां कहयौ; हम दहुवन नर नार॥

चौपई॥ १४६॥

कहि बिछुरे, दोऊ मग लीनौं। रूप पुरी सनमुख मुख कीनौ॥
इंद बदन कंवलावती रानी। ठांव ठांव यह भई कहानी॥
दिस बिदसा यहु परगटी बात। यहै कथा दिन कूं यह रात॥
पूरब मैं तो यहै अपूरब। पछिम हूं प्रगटी जौंधूरबि॥
नई रीति यह नैरित दिशा कहिये। अगन ईंहूं औतर न लहिये॥
सदस भये ऊतर पुनि पछिन। बांइबंई सा नहि ये लछिन॥

दोहा-101

पीति रीति नाहि न दुरै; कीजै कौ दुराइ।
कौंलौं ससि बादर दुरै; जब तब छबि प्रगटाइ॥

चौपई॥ १४७॥

कंवलावत की सुंदरताई। नगर बगर डगरन मैं छाई॥
राजा येक नांव बल सागर। सुन्यौ रूप कंवलावति नागर॥
ऊपज्यौ पेंमु खेमु मिटि गई। देही बिरह पेम ज्यौं तई॥
चिंता के चामी कर फूले। नीदरिया, जल भोजन भूले॥
बितवत है गन गन निसंतारन। भयौ राइ घर आंगन आरन॥

दोहा-102

घर घरनी घेरौ कियें, घरी न भावै संग।
अनग भरीं अंगना सुनी, अंग अंग बढयौ ऊमंग॥

चौपई॥ १४८॥

कुमुक करन कौं राइ बुलाये। अन गन दल बल लै लै आये॥
कुंजर धोरा पैक अपार। कुहक बान पुनि जंत्र जंजार॥
करि दल बल बल सागर चल्यौ। महा प्रबल धर नभ हलहल्यौ॥
रौर परि है आठौ दिस मैं। छिनहूं नासौ वैहिं अरि निस मैं॥
पंथ मांहि चलि दल बल आयौ। झूझ करन कौ साज बनायौ॥

दोहा-103

बलसागर ब्याह न चढयौ; अति चित चौंपऊ माह।
इंद बदन अब देखि है; धौं किम करै बिवाह॥

चौपई॥ १४९॥

इंद बदन नीसान दिवाये। जोधा क्रोध बिरोध न धाये॥
नर हम गम कीने पख रैत। मांग चढयौ बिधिना पै लेख॥
द्वै दल मिलि कैं करी धमाल। छिरकाये तन रंगत गुलाल॥
कुहक बान तें ब्याह हुचाई। चरडी चक्र चहू दिस धाई॥
खुरनि खेह सिर मंडप तान्यौ। मेहू ब्याह बल सागर बान्यौ॥

दोहा-104

और बानौ कैं ज्ञान कहि, कर पग जावक होइ॥
याके कर मिहंदी रंगे, सभ संग रहयौ न कोई॥

चौपई ॥ १५० ॥

इंद बदन छबि सागर दोऊ। निकसे क्रोध जु होइ सू होऊ॥
ऊनि वाकै, वाकै ऊनि दीनी। कंवलावत दहुवन मन भीनी॥
भर अंकवार दयौ झकझोर। हवोई हथलेवा गठजोर॥
जुगिनि किल किलाहि सुख मानै। सोई पंडित बेद बखानै॥
भयौ जगीस सीस की माला। ईस असीस लहचौ हरियाल॥

सोरठा-38

इंद बदन कर वारि, फरीक्षा त्रह टूक करि।
गिरी, बनैं की नारि, किये धरनि, धन रस परस॥

चौपई ॥ १५१ ॥

दुसह राह मारयौ गोबिंद। हरषि लयौ तब मार गईंद॥
चले जारि दोऊ रंग महियां। केल करैं सुख तरवर छहियां॥
पंथ माझ आयौ इक सागर। नाव .आनि बैठै नर नागर॥
जबहि नाव आई मधि पानी। दहुन अभागनि भौंर डुलानी॥

सोरठा-39

होत चैन की नांहि, आवहि द्यौंस अभाग जब।
भूजे हूं ऊडि जाहि, सकल रीति बिपरीत है॥

चौपई ॥ १५२ ॥

फाटि नाव दस बांटन भई। इंद कहूं कंवला कहूं गई॥
सगरौ संग बूडयौ मघि पानी। जीवत बचे राइ और रानी॥
ये बिछोह अैसो बिधि दीनौ। मरिबे हू ते आगर चीनौ॥
बहत बहत कंवलावत रानी। सुसर पुरी कौ जाइ लगानी॥

दोहा-105

बैठे है बघिक ऊतहि, देखि कहयौ जिय माहि।
राजा ढिग जौलै चलै, दरिद दंद सभ जाहि॥

चौपई ॥ १५३ ॥

वै चाहत हे सोई भयौ। काठि टूक याको ऊत गयौ॥
ले गौने जब ऊन बस भई। राजै देखि मना यौ दई॥
बहुत कछू बध कनि कौ दीनौ। कंवलावत सौं कहनौ कीनौं॥
हौं नहिं हाथ लगाऊं तेरैं। सुता करी, बैठी रहु मेरैं॥

आइ दरस दैगौ जब मौकौं। इंद बदने ब्याहूंगौ तोकौं॥
पथिक भाख्यौ मग में आवै। आज कल्हि मैं दरस दिखावै॥
वै ससि है तू हूं ऊजियारी। तुम्हं ऊन जोर होइ है भारी॥

दोहा-106

चंदबंसी तूं कंवल है, वै आपुन है चंद।
तूं खिलि है ऊन देखि कै, दूर सूर हवै दंद॥

चौपई॥ १५४॥

सुनत नांव कंवलावत रोई। धर पर परी सुधि बुधि सभ खोई।
बहुरि कहयौ कबहू वहु नाहीं। येक नांव है बहु जग माहीं॥
पैहौं जाऊं धौराहर माहीं। चित्र वाहि कौ आहिकि नाहीं॥
जाई चढी धौराहर नारी। देखि चित्र सुधि बुद्धि बिसारी॥
कहयौ भयौ वहु मोतें न्यारौ। इही गांव कौ बासी प्यारौ॥

सोरठा-40

हौं तिह पुरहिं जराऊ, पीर हरन जिहं नालहुं।
ऊहि बन कैं बलि जाऊ, जामै प्यारौ पाइयै॥

चौपई॥ १५५॥

सुसर पास कंवलावत नारी। कहि पठियौ हौं बंधू तिहारी॥
नांव लेत मैं जब ही जानी। और चित्र पाई सहनानी॥
हमही आवत है इत सुख मै। नाव फटी कीने बिधि दुष मैं॥
हम तौ बहत बहत इत आयौ। कुंवर न जानहि कहां सिधाये॥
सुनत बात राजै सिर कूटयौ। कहयौ दई हौ बहुरचौ लूटयौ॥

दोहा-107

येक बार हूं आंच दुख, सह न सकत है कोइ।
तब जीबौ अति कठिन है; दुख पर दुख फिरि होइ॥

चौपई॥ १५६॥

ध्रन परयौ रज लागी अैसैं, तपसी झोल चढ़ावै जैसैं॥
सेतधार अंसुवन चखि टूटी। मन हुई ससिरि गंगा छूटी॥
अैसै गिरयौ राइ बैरागी। तरजरहीन पवन जान्हा लागी॥
यौं परसेद राइ तन झरि है। सूरज देखि द्योस जिम परि है॥
यह ज बिधा राजा की गाई। रानी की कछु अधिक सवाई॥

दोहा-105

कहिबे कौं जीवत रहै; ग्यांन किये तें नांहिं।
पांव न लगै यौं डोलि है, अंग डुलैं जिम छांहिं॥

चौपई॥ १५७॥

ऊतहिं कुंवर डोल्यौ अति भटक्यौ। अंत जाई गिरवर सौं अटक्यौ॥
गिर पर चढयौ, देखि भर मान्यौ। मूरी बिन कर मलि पछितान्यौं॥
नीके धौराहर डिठ आये। औ नीके पर जंक डसाये॥
पीक चुनौती औरंग पानंन। डिठ आवैं कछु सुनियें कानन॥

दोहा-109

महल महा, मानस नहीं, धरनी बिनु घर आहि।
पलका पौढन हार बिनु, रहयौ चहुं दिसि चाहि॥

चौपई॥ १५८॥

देखत ही सब द्यौस गंवायौ। सांझ भये, कछु जोर जनायौ॥
कुंवर डर्यौ, सोच्यौ मन सांई। देखै कहां अपछुरा आई॥
बैठी परजंक बैसभ सोहन। कुंवर डिस्ट आयो तब मोहन॥
देखत सभ अधिर मुस्कांई। कहयौ दयौ बर हमहि गुसांई॥

सोरठा-41

लीये बहुत सुबास, आई अछ्छिर चौंपस्यौं।
इंद बदन कै पास, येक येक तें सोभि है॥

चौपई॥ १५९॥

यहै कहै पलि का पग धारौ। हम नारी तूं पुरख हमारौ॥
कुंवर कहयौ मौकौ जिन छेरौ। तुम्ह जानत नांही दुख मेरौ॥
जो मोहि दुख की सुनहुं कहानी। पलक मांझ ह्वै हौ बौरानी॥
जौ मोहि दुख की परि है छांही। गिर फाटै तौ अचिरज नाहीं॥

दोहा-110

बिरह हुतासन बरत है, जैसी मो तन मांहि।
जीभि जरै जौ भाषि हौ, तरजग बांचै नांहि॥

चौपई॥ १६०॥

तुम्ह जानहु यहि जीवत डोलै। बोलत सुनहु सु प्यारौ बोलै॥
हौ तौ बहुत दिनन कौ नांहीं। देखत घट सुलाल परछाहीं॥

तुम्ह जानहुं हम कीला करि हैं। याकौं हसि हसि आकौ भरि हैं॥
कहा होइ मिरतक गर लायैं। सुख न होइ तपत सिरायैं॥

सोरठा–41

ताहि न सूझै और, जिहिं नैनहि प्यारौ बसै।
परगट सब ही ठौर, झांकै झांईं लाल की॥

चौपई॥ १६१॥

कंवलावत बिन धन जग माहीं। कीला कहा नितारू नाहीं॥
सुनत बात चित परिनि रिसाये। भौंम धसन कैसे बल षाये॥
झूठि हिं झूंठ कहयौ तोहि षैहैं। टूक टूक करि कैंलै जै हैं॥
कुंवर कहयौ डरपावत येहूं। इन बातनि हौं डरौं न केहूं॥
ज्यौ न आहि जातें कछु डरिये। माटी ज्यौं भावै त्यौं करिये॥
जौ मोकूं कबहु तुम्ह षेहौ। सुरग ठांवनि हवैं तौ पैहौ॥
काहे मोष दुरावन पावहु। विरहि अगनिं तें मोहि छिडावहु॥

दोहा–111

बड़ी परी बोली रहयौ, मास याहि दुख दाघ दग्ध।
अंचयेंसे नाहिं न पचै, उपजै रोग असाध॥

चौपई॥ १६२॥

परि न कहयौ हम बहुत डरायौ। मैं नंहि पान हमारैं आयौ॥
अबहिं ऊडाइ मेर सौं मारौ। कै कहूं राषक्ष आगै डारौं॥
गुरजन कहयौं न राखस देहु। ना गिरवर हनि हत्या लेहु॥
जहां पंथ निकसन कौ नांहीं। लै डारहु बहु गिरवर माहीं॥
ऊतहिं आयु ही फिरि फिरि मरि है। कै कोऊ पंछी भोजन करि है॥
ऊततें तबहीं परि न ऊडायौ। बहुत गिरन मैं आनि गिरायौ॥
झिरि झिरि कुंवर जितौ निरझावै। गिरनि बिना कछु डिस्ट न आवै॥

सोरठा–42

बिछुरन की करवार, जाकै लागी सो लहै।
कहा लखै ब्यौहार, जि कांटै तन ना छिद्यौ॥

चौपई ॥ १६३॥

कुंवर यहै मुख कहि कहि रोयौ। गहरे पानी मानिक खोयौ॥
वार न पार गहर गंभीर। तिंह सागर कयौ लहिये तीर॥

माता पिता नाती बंध भाई। जिह लग तजे न सोकर आई॥
कुंवर कहै करतार गुंसाई। ये दिन जिन लेखे में लाई॥

दोहा-112

ये दिन तीछन है महा, कहा दिनाई आहि।
मुहरौ मंत न मानि है, मनि फुनि चढै न ताहि॥

चौपई॥ १६४॥

जांकै लीन बहुत दुख पायौ। सो फुनि कर ते दई गंवायौ।
अंरध निसा कौं बाहर आयौ। काहू मानस कौ न जनायौ॥
ढूंढि रहयौ मारग नंहि पायौ। तबहिं निरंजन पै बिललायौं।
रुदन करत करतार दयायौ। पंछिन पै मारग समझायौ॥
बहुत दिनन लौंबन में डोल्यौ। मानस सौं भेटयौ न बोल्यौ।

दोहा-113

बड़मोले बसतर तजे, खंथा सहुंगी लीन।
तज्यौ भूपपन वाहि लग, आपहि भिछक कीन॥

चौपई॥ १६५॥

परथम करी कोप तर गेरयौ, पाछैं द्वै विषधर हौं घेरयौ।
बहुर जुध पंचानन करयौ। पुनि भूतन प्रेत नसौ लरयौ॥
पाछै पंछी पकरि ऊडायौ। तापै तेहूं गरर छिडायौ॥
गरर ऊडाइ गुरू पै लायौ। ताप हि मैं आपहिं अंचवायौ॥
फुनि सागर तें कंवल ऊपारयौ। देव महा भै दाता मारयौ।
पाछै बल सागर तें लरयौ। सागर तें दुख सागर परयौ॥
ये दुखि देखि पियारी पाई। सो अब विधना बहुत छिडाई।

दोहा-114

और न कोई दूसि ये, छूटि आपने भाग।
ससि तें होइ चकोर सुख, चकई कौं बैराग।

चौपई॥ १६६॥

अब ऊहु गरर पंख ना पाऊं। गरर हूं नाहि जुतन लीलाऊ॥
ऐसो लिख्यौ पुरानानि महियां। दुख सुख येकू तरकी छहिया॥
सुख पायें दुख जानहु नेरौ। दुख पाये सुख कौ मग हेरौ॥
मौकों तौ हेरत मुख सुख कौ। डिस्ट परै झिरि झिरि मुख दुख कौ॥

जब पूछौं तूं कौन कहावै। तबहि कसौटी नांव जनावै॥
कहै जु मेरैं नीरैं आवै। चोखै बिना नहीं ठहरावै॥
मोहि मिलै सपूरन हिये। बारह बानी ताकौ कहिये॥

दोहा-115

जिंह ऊपाव पिय भैंटिये, सो नहिं देखत कोई।
जीवन मूरी हू गई, जीवन कि है बिधि होइ॥

चौपई॥ १६७॥

बारह मास कुंवर कौ रोवत। बीते जल आंसू कर धोवत॥
बारह मास ऊत ही कंवलावत। बीते जेम सुनहु हु गावत॥
बरिषा रित जिंहं भांति बिहानी। सौ हौं सगरी कहूं कहानी॥
बहुरौ करी अनीत जु सीत। सौ हौं सभै बखानौ रीत॥
बहुरौं ग्रीषम तिय जिम दही। सो सुनि लेहु कथा सभ कही॥

दोहा-116

द्वादस मास तलास तिय, रही न भयौ हुलास।
आस पास बिरहा मदन, तजी मिलन की आस॥

चौपई॥ १६८॥

मास असाढ आय हरि गरज्यौ। पीर न जान तरह तोन बरज्यौ॥
निठुर महा यहु सोच न हिये। गरज सुनैं बिरहनि किम जिये॥
धन बरसत सरसत संयोगन। तरसत औ निरसत बियोगन॥
करहि कलोल लाल संग हारनी। पटयौ बर न मोहि औ धरनी॥
हौं भई किसन भोम भई हरी। सूक गई हौ वह हू गहबरी॥
पिक चात्रिग कोकिल औ मोर। करत कलोल सुनत घनघोर॥

दोहा-117

हंसत ऊमंगित दामिनी, संग लयें भरतार।
हौं निस दिन रोवत रहौं, बिन मन पोष निहार॥

चौपई॥ १६९॥

फुनि सावन जग आइ जनायौ। महा संताप लेत संग आयौ॥
बरन बरन बादर भये भारे। सेत घूमरे पियरे कारे॥
पिय पिय करत गहचौ यहु खेल। चात्रिग अनल ढरावत तेल॥
घन घहरांन महा भै दाता। तिय डरपत संग लालन ग्याता॥

घटा आडि ह्वै रोक्यौ चंद। तिय घेरी बिरहै दुख दंद॥
वह कबहुं पल निकस न पावै। तिय पल छूटि नाहि दुख तावै॥

दोहा-118

पिक चात्रिग दादुर सुने, प्रान करते हैं गौंन।
कैसें कै जीवन बनैं, जारै ऊपर लौंन॥

चौपई॥ १७०॥

भादौ रजनी है रज रैनी। सूझत नाहि बिरह जरैनी॥
रज नर ही कौंधा भेदैनी। जल न रहयौ आवत रजनैनी॥
दुख बेसन धन बरसि भगायौ। अज बाहन ज्यौ ता पर छायौ॥
मान सरोवर लाल न पायौ। सुखिन पलुल ढिग रहत न भायौ॥
गरज्यौ सुनत रहत नहिं थिरज्यौ। धीर न धरत परयौ बहु डरज्यौ॥
पिक चात्रिग दादुर औ सिखी। पीर जु देत जात नहीं लिखी॥

दोहा-119

रैन दिना बरख्यौ करहिं, पिय बिनु धीर न टेक।
येक आंखि सावन भई, भई भादुवा येक॥

चौपई॥ १७१॥

महा कुंवार जबहिं जग आयौ। बरिखा गठि कैं सीत जनायौ॥
इंद कुवंड गगन मैं तानी। छिन रहिहै छिन बरषत पानी॥
मो नैननि तें जल न रहाई। अहिनिसि अंसुवा ढरि ढरि जाई॥
झूले कास अधिक बन मांहीं। सारस ररहि नांह संग नांही॥
बोलहि कुंज, हंस सरछाये। टेर सुनत जानों मारन आये॥

दोहा-120

रैन दिना कीनी बहुत, चात्रिग जेम पुकार।
पैं मोकौं दीनौ नहीं, स्वांति लाल करतार॥

चौपई॥ १७२॥

कातिगसीस निरमल ह्वै आयौ। चंद बंसी पंकज सरसायौ॥
मो मना पुहप खिलत नहिं तौलौं। पिय मुख ससि परसौं नहि जौलौं॥
पहलै बिरह सैन लै धंन की। हरी हरिष सभ पिय बिन तन की॥
अब सीतर रस लै कै धायौ। पिय बिन क्यौं जिय जाइ जिवायौ॥
बिरह बली बलवंत हरावै। अबला किम सनमुष ठहरावै॥
करत बिलाप बकत वह नारी। दई दिखावहु प्रान अधारी॥

दोहा-121

अनमिलिबौ अनमिल करौ, मिलिबौ बेगि मिलाइ।
पिय बिछुरन तें जान कहि, बिछु बिछुरन बिछराइ॥

चौपई॥ १७३॥

अगहन सीतर कौ कर गहै। कहयौ चलहु कोऊ पिया बिनु लहै॥
ठाढे भये आनि मोहि आंगन। मानहुं जम आयौ ज्यौ मांगन॥
देखि मोहि अगहन हरखायौ। सीतर मेरै पास पठायौ॥
कहि पठयौ तूं पिय कै संग। नाहिं बदत मोहि काम ऊमंग॥
अब हौ बैर काढि हौ अपनौ। सोवन देऊ न देषिहि सपुनौ॥
नींद मिटी अगहन गई। सपुनौ हूं देखन तें रही॥

दोहा-122

सारस सारस बोलि है, जारस जिय कौ दुख।
कुंज पुंज हनिबांहि है, तन जारहि चुख चुख॥

चौपई॥ १७४॥

आयौ सीत पूस कौ चाजन। धीर बंधावत कोऊं न आंजन॥
भाजन बडौ न पईये भाजन। गहिलै जा घर साजन साजन॥
निकस न सकिये गहर गंभीर। तिर तिर रहे न लहिये तीर॥
निसोबा सुरत न मन भेंवरावै। प्रानपती बिन यार न पावै॥
पिय खेवी अजहूं नहिं आवै। बिरह भौंर सुख नाव डरावै।
बूढत बहि गहया प्यारौ। बिधना मोकूं देहि हमारौ॥

सोरठा-43

पल पल परि है नाहि, कल की कल करते गई।
याहि सकल कल मांहि, बिकल न मौसम आनि तिय॥

चौपई॥ १७५॥

आयौ माह न आयौ नाह। आये नाह न लखिये माह॥
सीत संतावत अनकन भांति। तन मन बढयौ संतपन सांति॥
सीतर देय महातर रोग। तन बिन औखध नांहि संजोग॥
अंन पानी कछु जाहि न भावत। सकल रैन छिन नींद न आवत॥
मूरी जरी सहेली सखी। बहुत करी पै सांति न लखी॥
जौ ऊठि आप धनंतर आवै। पिय विनत ऊन सेम गंवावै॥

सोरठा-44

टारी टरहि न रैन, भई छमासी लाल बिनु।
झांकत हौ दिन रैन, आनहू ऊडिगन अन गनै॥

चौपई॥ १७६॥

फागन लाग्यौ खेलहि फाग। ते पिय संग करि है अनुराग॥
ऊभग नि डफ बासुरी बजावै। अगर अंबर गुलाल ऊडावै॥
केसरि केसू छिरकहि नारी। नाद करहि छाडहि पिचकारी॥
लये रंग बाजहि मिरदंग। संयोगिन कै जियहि ऊमंग॥
होरी जिम मेरौ तन बरि है। खेलत देखि महा पर जरि है॥
बिधना अबहि मिलाहु कंत। जौ हम जानहि भयौ बसंत॥

दोहा-118

फागन की नागन पवन, डसत सखी मोहि गात।
मंत्र मिलन पिय ना पढ्यौ, तातें जिय लहरात॥

चौपई॥ १७७॥

चैत लागी चिंता भई चौंनी। दुख की डेढी सुख की पौनी॥
फिर बोली पांपनि पिककारी। दुख जारी हौ बहरौ जारी॥
अपनै बरनहि बरन मिलायौ। नैन बरन चखि रगत ढरायौ॥
मौरै आंब देखि जग रीझै। निरखि निरखि मेरौ मन खीझै॥
येते पर मधुकर मननावै। गहरी दुख की तान सुनावै॥
मधुरित मोहि बिरह की खाटी। बिहबल भई न छाडै पाटी॥

सोरठा-45

मो चित अलि ना चैन, बिनु मुरति तिय केतुकी।
सुनिहूं मीठै बैन, तबहि सटापन दुख भजै॥

चौपई॥ १७८॥

बैसाख हितर हूं फर पायौ। मैं सुख कौ फर लाल गवायौ॥
तरवर बनफल लगि धुकानें। बिरख मोहि सुख के मुरझानें॥
बन तरवर सरसत है दिन दिन। मोतन मन तरसत हैं छिन छिन॥
भैंट न बरिखा रित नहि आवै। कैसे पिय धन सुख बरसावै॥
मेरो ज्यौ तर तब ही बाढ। पिय जल आप अंग पर चाढै॥

दोहा-124

सगरे बन बनि बनि रहे, तन मन होत हुलास।
मेरी बनी न ललिन सौ, अनबन रही निरास॥

चौपई॥ १७९॥

ऊहि देव अरि ते दई छिडाई। अबहि जेट तौ आनि संताई॥
केहू सिसर दई जे टारयौ। सास न आवै इन तन जारयौ॥
ननद चै न द्वै द्वै बिन गोबिंद। ना हम चैन होइ है बिन इंद॥
भावज याकै अति ही ताते। मामा अगिन करत है जाते॥
जै तौ घसि तन चंदन लाऊं। जेठ पवन तें चैन न पाऊं॥

दोहा-125

जेठ लगै लूवन करयौ। अरुन बरुन मुहि फीक।
नाथि •नाथि तन जारि है, बदत न चंदन लीक॥

चौपई॥ १८०॥

ये कहयौ स रोवत कंवलावत। देख्यौ येक पत्री आवत॥
जौ नीकै करि कै निरझायौ। वहै रात न सुवटा आयौ॥
सुबटा धाइ परचौ पग जोवत। कंवलावती लीनौ कर रोवत॥
कहयौ कीर कछु जानत नांही। लाल हमारै किह पर माही॥

दोहा-126

बहुत द्यौंस दरसन बिना, बीत गयै बिन चैन।
कबहूं वह दिन होइगो, जरत सिराऊ नैन॥

चौपई॥ १८१॥

कीर कहयौ हौ बहु बन डोल्यौ। पंख पला सौ सभ जग तोल्यौ॥
येक ठांव इक दिन पग धारयौ। भै रूपी ऊद्यान निहारयौ॥
जहां बहुत गिरवर कौ घेरौ। तहां जाइ हम भयौ बसेरयौं॥
तहां गरुर बोलै आपुन मैं। मै हू करन धरयी ऊनि धुनि मै॥

दोहा-127

अजु कुंवर डोलत इत हि, इंद बदन जिंह नांव।
सुरहि मारि कै नारि लै, गयौ ससुर कै गांव॥

चौपई॥ १८२॥

तब मैं सुनत महा सुख पायौ। भोर भयो तोहि पीहर आयौ॥
ऊतहि सुन्यौ तुम्ह गौने साहर। हम ऊडि आये यह धौराहर॥

इतहि आइ तुम्ह कौं यौं पायौ। बहुरि। बिरिह मुख आनि दिखायौ॥
पीर तुम्हारी हौ बहु पीरयौ। बिरहै आर तुम्है चीरयौ॥
अरुनाई मुख की भग गई। स्याम बरन तुम की छबि भई॥
भैपीत भयौ तन हरयौ जु सोभित। कीर कीर कही कोई न लोभित॥

सोरठा-46

कहत जान कवि सांचु, गौरै तै ह्वै सांवरै।
जबहि बिरह की आंचु, आनि अंग मैं बिसतरै॥

चौपई॥ १८३॥

अबहि कहौ ज्यौ बहुरौ धाऊं। दरस दिखावति अधिक लजाऊं॥
कहयौ गरर खंखि नहीं जाऊं। बहुर भेद जिन ऊनि तें पाऊं॥
ऊत तैं ऊडि वाही तर पैठयौ। जिंह तर गरर तिही पर बैठयौ॥
पाछै राति रही तब थोरी। गरर कहयौ तब सुनि हौ जोरी॥
कहा होइ काहू कै कीनै। लेख न मिटै दई जो दीनै॥
वह जु कुंवर कंवलावत लैके। गयौ हुतौ वाही कै मैके॥

दोहा-128

सुर मारयौ आनंद भयौ, पूजी इछया प्रान।
केतक दिन सुख होइ फिर, सुनहु जु भई निदान॥

चौपई॥ १८४॥

बहुरौ चल्यौ अपनी नगरी। सुसरै दाई धरोहर सिगरी॥
मारग मै पैठै इक सागर। नाव फाटि बिछुरे नर नागर॥
बहत बहत वह साहर गई। कुंवर तहि आन्यौ फिरि दई॥
परि न ऊडाइ आनि इत डारयौ। छाडि दयौ गिर सौं नहि मारचौ॥
द्वादस मास भयै इह बन मैं। मन ब्याकुल औ बहु दुख तन मै॥
भोर भये सुवटा ऊठि धायौ। ढूंढत फिरत कुंवर कहूं पायौ॥

सोरठा-57

देखि रहचौ भरमाइ, यह वह हौ अब यह भयौ।
मावस भयौ सुभाइ, पून्यौ तेहि मकर टरयौ॥

चौपई॥ १८५॥

पाहन लग्यौ देह मुरझानी। मनहु रुंखि चढि लता सुकानी॥
पीति लागि कैं बहु दुख देख्यौ। पीत पात सौ पत्री पेख्यौ॥

नैन नीर बहि पाहन भांजै। झरना देखत झरना लाजै॥
सुवटै जाई राइ कै गायौ। कौन पाप तुम्ह आगै आयौ॥
सुवटै जाई राइ कै गायौ। कौन पाप तुम्ह आगै आयौ॥
धाइ सीस पाइन मैं दीनौ। इंद फलादन कर पर लीनौ॥
अनुबादी कछु यहु गति पाई। कंवलावत किंह देस हि छांई॥
कहयौ हौ जुं तम्ह पै अब आयौ। ऊनही ढूंढन काज पठायौ॥

सोरठा-48

कहयौ कीर तुम्ह जाह, जौ कहुंवा प्यारौ लहै।
आरौ भयौ ऊमाह, रैन दिन तन चीर है॥

चौपई॥ १८६॥

वह बैठी है अपनै साहर। मग निरखै बैठी धौराहर॥
बारह मास ऊनिहि जिम गये। तै फिरि सुबटै कीने नये॥
जिह जुग तन वह बिथा बिहानी। सो सब सुवटै कही कहानी॥
सुनत सुनत कुंवर बौरायौ। बहुर चेत अपनौ दुख गायौ॥

दोहा-129

जमकंपुरी दुख राग की, गायौ कुंवर सुधार।
सुर आंसू भिन ना भयौ, बाजै साज पहार॥

चौपई॥ १८७॥

धन चखि कीर महा बरसायौ। मेघ राग मानहु ऊनि गायौ॥
कीर अबहि तौ बात बिचारौ। जिंहि बिधि लहिये परम पियारौ॥
कीर कहै देखत हूं आयौ। मानस खोज कहूं नहि पायौ॥
ना को डगर नगर नाहि नेरौ। तहां अनि बिधि दयौ बसेरौ॥
हौ ऊडाई ले जाइ न सकि हूं। तैरै हूं पांखै नहि तकि हूं॥
किंह बिधि मिलन होइ सुख मूरत। बिछुरे महा कठिन कुमहूरत॥

सोरठा-49

बिछुरे सलिता नीर, झिरि मिलबौ अति कठन है।
पिय बिछुरे की पीर, दई मिटावै तौ मिटै॥

चौपई॥ १८८॥

पैहौ जाइ कहूं जीयतु है। वड घूंटन विख दुख पीयत है॥
लिखि दीनी पत्री कर पाती। तामै बिथा लिखी अति ताती॥

जो दिन कोऊ हि समुद्र बहायौ। कहयौ फिरत हूं पार न पायौ॥
आस पास गिरवर सुख नासी। तहां किये बिधना हम बासी॥
रोवत ऊजियारै औ तम मै। बाद परयौ झरना औ हम मै॥
छिन छिन मै जिय अधर न अैहै। मिलन आस ले फिरि तन जैहै॥
बिरह अमल गर घुटि घुटि जाई। मिलन आस मनौ दीन खटाई॥

दोहा-130

बिरह घोटि मोहि काढि है, बालापन कौ खीर।
मरत नांहि सो याहि लगि, आस बंधावत धीर॥

चौपई॥ १८९॥

बिरह नाग डसि डिस लहरावै। मिलन आस मन बहुर जिवावै॥
जुर बियोग दिन होत सवाई। दरस सुदरसन बिना न जाई॥
बिरहा बिष मोहि मारन करि हैं। आस अमी ताकौ झिरि हरि हैं॥
गज बिरहा मारन कौ धावै। पीलवान झिरि आस छिड़ावै॥
बिरह काल ज्यौं काढन आवै। आस आव तिह ऊलट पठावै॥

दोहा-131

काल रैन दिन डिस्ट पर बोझिल आव छपाइ।
बारि खारि तकै चंद, ज्यौं झांकि झांकि दुरि जाइ॥

चौपई॥ १९०॥

बिरह प्यास ह्वै गरौ सुकावै। मिलन आस ह्यै ज ह्वै सरसावै॥
विरह सैन सज मारन आवै। मिलन आस पर बीच छिड़ावै॥
कहां करूं हूं पंख न पावहुं। मूरी हूं नाहि जु आवहु॥
जौ ढूंढत सै बरस गवाऊं। मानस खोज कहीं नहीं पाऊं॥
दुख सागर कोऊ पार न पावै। कहां लिखू कछु लिखत न आवै॥

दोहा-132

बिथा मोहि को लिखि सकै, अति ही अपरंम पारि।
गुपति चित्र हूं जौ लिखै, दैहै लेखन डारि॥

चौपई॥ १९१॥

पत्री लेइ गयौ जब पांती। कछु मलीन कछु निरमल छाती॥
कहत कुंवर जीयत हम पायौ। कठिन ठांव पै जात न आयौ॥
पांती पढि कंवला बिस्तानी। और सहेली हूं मुरझानी॥

नैन नीर बहि पाहन भांजै। झरना देखत झरना लाजै॥
सुवटै जाई राइ कै गायौ। कौन पाप तुम्ह आगै आयौ॥
सुवटै जाई राइ कै गायौ। कौन पाप तुम्ह आगै आयौ॥
धाइ सीस पाइन मैं दीनौ। इंद फलादन कर पर लीनौ॥
अनुबादी कछु यहु गति पाई। कंवलावत किंह देस हि छांई॥
कहयौ हौ जुं तम्ह पै अब आयौ। ऊनही ढूंढन काज पठायौ॥

सोरठा-48

कहयौ कीर तुम्ह जाह, जौ कहुंवा प्यारौ लहै।
आरौ भयौ ऊमाह, रैन दिन तन चीर है॥

चौपई॥ १८६॥

वह बैठी है अपनै साहर। मग निरखै बैठी धौराहर॥
बारह मास ऊनिहि जिम गये। ते फिरि सुबटै कीने नये॥
जिह जुग तन वह बिंथा बिहानी। सो सब सुवटै कही कहानी॥
सुनत सुनत कुंवर बौरायौ। बहुर चेत अपनौ दुख गायौ॥

दोहा-129

जमकंपुरी दुख राग की, गायौ कुंवर सुधार।
सुर आंसू भिन ना भयौ, बाजै साज पहार॥

चौपई॥ १८७॥

धन चखि कीर महा बरसायौ। मेघ राग मानहु ऊनि गायौ॥
कीर अबहि तौ बात बिचारौ। जिंहि बिधि लहिये परम पियारौ॥
कीर कहै देखत हूं आयौ। मानस खोज कहूं नहि पायौ॥
ना को डगर नगर नाहि नेरौ। तहां अनि बिधि दयौ बसेरौ॥
हौ ऊडाई ले जाइ न सकि हूं। तेंरै हूं पांखै नहि तकि हूं॥
किंह बिधि मिलन होइ सुख मूरत। बिछुरे महा कठिन कुमहूरत॥

सोरठा-49

बिछुरे सलिता नीर, झिरि मिलबौ अति कठन है।
पिय बिछुरे की पीर, दई मिटावै तौ मिटै॥

चौपई॥ १८८॥

पैहौ जाइ कहूं जीयतु है। वड घूंटन विख दुख पीयत है॥
लिखि दीनी पत्री कर पाती। तामै बिथा लिखी अति ताती॥

जो दिन कोऊ हि समुद्र बहायौ। कहयौ फिरत हूं पार न पायौ॥
आस पास गिरवर सुख नासी। तहां किये बिधना हम बासी॥
रोवत ऊजियारै औ तम मैं। बाद परयौ झरना औ हम मैं॥
छिन छिन मै जिय अधर न अैहै। मिलन आस ले फिरि तन जैहै॥
बिरह अमल गर घुटि घुटि जाई। मिलन आस मनौ दीन खटाई॥

दोहा-130

बिरह घोटि मोहि काढि है, बालापन कौ खीर।
मरत नांहि सो याहि लगि, आस बंधावत धीर॥

चौपई॥ १८९॥

बिरह नाग डसि डिस लहरावै। मिलन आस मन बहुर जिवावै॥
जुर बियोग दिन होत सवाई। दरस सुदरसन बिना न जाई॥
बिरहा बिष मोहि मारन करि है। आस अमी ताकौ झिरि हरि है॥
गज बिरहा मारन कौ धावै। पीलवान झिरि आस छिड़ावै॥
बिरह काल ज्यौ काढन आवै। आस आव तिह ऊलट पठावै॥

दोहा-131

काल रैन दिन डिस्ट पर बोझिल आव छपाइ।
बारि खारि तकै चंद, ज्यौं झांकि झांकि दुरि जाइ॥

चौपई॥ १९०॥

बिरह प्यास ह्वै गरौ सुकावै। मिलन आस ह्वै ज ह्वै सरसावै॥
विरह सैन सज मारन आवै। मिलन आस पर बीच छिड़ावै॥
कहां करूं हूं पंख न पावहुं। मूरी हूं नाहि जु आवहु॥
जौ ढूंढत सै बरस गवाऊं। मानस खोज कहीं नहीं पाऊं॥
दुख सागर कोऊ पार न पावै। कहां लिखू कछु लिखत न आवै॥

दोहा-132

बिथा मोहि को लिखि सकै, अति ही अपरंम पारि।
गुपति चित्र हूं जौ लिखै, दैहै लेखन डारि॥

चौपई॥ १९१॥

पत्री लेइ गयौ जब पांती। कछु मलीन कछु निरमल छाती॥
कहत कुंवर जीयत हम पायौ। कठिन ठांव पै जात न आयौ॥
पांती पढि कंवला बिस्तानी। और सहेली हूं मुरझानी॥

बहुर चेत कंवलावत नागर। कागर आनि लिख्यौ दुख सागर॥
जिंह समंद तें तुम्ह ते समदे। हमहूं राख्यौ है ज्यौ जम दे॥

दोहा–133

सुख अमोल तुम्ह संग गयौ, दुइ सहु गा रहयौ आइ।
वह लखि भेद ना लहूं, सहु कौडी नांब बिकाइ॥

चौपई॥ १९२॥

जिन बसनन तुम्ह ते भये हांते। नाहि ऊतारे धोये नाते॥
सास ननंद बहु सखी सहेली। पै हूं तुम्ह बिन रहूं अकेली॥
सैबा दुरचा चात्रिग पर वरसै। स्वात बूंद बिन कहु न सरसै॥
बरखि बरखि धन कदली जैहै। बिन स्वाति कपूर न पैहै॥
दीपक बाती तेल बनावै। पैं बिन ज्वाला जोत न पावै॥
पानी कौ भाजन भरि दीजै। पै पंखी जल सर बिन छीजै॥

दोहा–134

भावंता, हां तौ भवै, दिन दिन घटै आनंद।
पून्यौ तें जब बिछुर है, तबहि पूछिये चंद॥

चौपई॥ १९३॥

घन बरसै बहुत सुकित माही। स्वाति बिना सीज ज हवै नाही॥
कपी कोटि जौ आप संवारै। लंक हनुमान बिनु नहीं जारै॥
जौ बग लाख आइ ढिग बैठौ। हंस बिना चित माही न पैठौ॥
इंछ हमारी तुम्ह ही सरि है। बाइस कहा काज पिक करि है॥
ऊडि न सहंस मिलि मिलि झिलकावै। ऊडि गनपति झिलक न पावै॥
जौ दिन रैन इंद झरि कर है। स्वाति कुंवार बिना नहि परि है॥

दोहा–135

खिन खिन मै गिय आइ है, निकस न मन मैं आन।
चित्र तिहारौ देखि कै, बहुर जाइ घट प्रान॥

चौपई॥ १९४॥

रूसि गयौ मोहि चैन संगाती। निकट न आवै धीरज नाती॥
ये संग नांही जु कबहूं हंसावै। नेहु बिरहनित रूदन करावै॥
कल भाखै तुव पास न आऊं। कहै चटपटी छाडि न जाऊं॥
येक रसन कैसे दुख गावै। सेस भयै हूं गन तन आवै॥
नींद सहेली मो तें रूसी। कबहूं आवत नाहि अदूसी॥

दोहा-136

बिरहनि तिय चकई भई, नीद चकवा आहि।
आव आव जौ वह कहै, नाहि कहत वह ताहि॥

चौपई॥ १९५॥

दै सुवटा कर ऊलट पठायौ। ऊडत ऊडत सुवटा ऊत आयौ॥
पाती कंवलावत की दीनी। देखि कुंवर नैन धरि लीनी॥
बाचि बिरह जारयौ झिरि जारयौ। मनहु हुतासन मैंध्यौ डारयौ॥
रोई रोई मेरन सिर भारै। हाइ हाइ कहि यहु पुकारै॥
गांव हमारै ही मैं प्यारौ। देखत नाहि भाग हमारौ॥
अपनौ गांव आप कर नांही। क्यौ सूझै पिय की परछांही॥
करमहीन सौ कैसे पावै। डिस्ट मंद कैसे निरझावै॥

सोरठा-50

अपनै ही घर यार, यै कै हूं डिठ ना परै।
सूझै सब सैंसार, चखि बिना मुख आपुनौ॥

चौपई॥ १९६॥

कुंवर कहै सुवटा कछु कीजै। जातें बिरह बैच सुख लीजै॥
सुवै कहयौ अैसौ बन जारौ। और नाहि बिन सरजन हारौ॥
वहु नीकै यहु सौदौ करि है। दूसर कूऊ डिस्ट न परि है॥
हौ हूं बहु सौच्यौ जिय मांही। कछु ऊपाव पै पायौ नाही॥
येक बात कीने सुख पइये। गरर निकट है जहि ढिग जइये॥
इन्ह के बचन जाइ हम लहि है। देखैं कहा कहा धौं कहि है॥

सोरठा-53

सुनत गरर को नाव, चैन भयौ चित कंवर कौं।
जिन अब फिरि सुख पाव, पहलै हूं ऊन ते लहयौ॥

चौपई॥ १९७॥

नीकौ महा ऊपाव बतायौ। पहले हूं ऊनते सुख पायौ॥
चलत चलत ऊहि तर तर गये। जिंह तर गरर पंख घर छये॥
कुंवर कहयौ सुनि सुवा भ्राता। यह तौ वहै गरर सुख दाता॥
अबलौ यहु हम भेद न पायौ। जेही काम हि आप गंवायौ॥
जौ हौ पहिलै यह गति पावत। तब ही सिर पग करि आवत॥

सोरठा-52

जबहि परै दुख आइ, तबहि सुरत हू मंद ह्वै।
कीजै कोटि ऊपाइ, जौ सुख मांझी बिचरिये॥

चौपई॥ १९८॥

अरध निसा बीती ही जबहि। खोल्यौ गरर पंख मुख तबही॥
कहयौ सुनहु जोरा मन मान्यौ। यहु मानस तुम्ह ना परिचान्यौ॥
नारि कह्यौ भाखौ यहु कोहै। वहै कुंवर जो जग कौ मोहै॥
नारि पाहि याही कै पुर मैं। इंह इत फिरत बिरह की जुर मै॥
धीर बैद बहु किये ऊपाइ। पै दिन दिन बाढत ही जाइ॥

दोहा-137

जुर बियोग ना मिटै, जौ कीजै कोटि ऊपाइ।
लाल दरस औखद परम, जब लौ हाथ न आइ॥

चौपई॥ १९९॥

गरर पंखधनी बोलै अैसै। अबकै बहुरि करहु की जैसै॥
गोरख मनि ढिगु बहुरौ पारहु। कै या कै घर ही लै डारौहु॥
पहलै कहत देव इहुं मारौ। अब बहु गयौ जु जगतें डारौ॥
आयौ ताकि न करहु भलाई। तौ यामै कहु कहा बडाई॥

सोरठा-53

सदा न जीवै कोइ। जो जरम्यौ या जगत मै।
अमर सांचु वहु होइ, इंछया काहू पूरि है॥

चौपई॥ २००॥

कहयौ मौहि कीजै बलिहारी। ना तरवर नर नांह नारी॥
कठिन भई वह सुनि कै नर कौ। फिरि फिरि लग्यौ संवारन पर कौ॥
लै कैं ऊडयौ ऊहां तें पंखी। आन्यौ जहां तहां हर नंखी॥
बैठी ही बहु दुख की जारी। भरमी राधा देखि मुरारी॥
कह्यौ सांचु प्रगट तुम्ह आये। कै हम किधो ध्यान फलु पाये॥

दोहा-138

सावधान ह्वै ध्यान मैं, वहै रसन मन माहि।
पिय मूरत परगट मिलै, तौ कछु अचिरजु नाहि॥

चौपई ॥ २०१ ॥

सपुनौ तौ जु कहत जग माही। बिन पीढै कोऊ देखै नांही॥
मोहि खौंह बहु द्यौस गवाये। लालन बिना नैन नहीं लाये॥
येते मांझ धाइ दुख मारन। भरम भजायौ भरि अंक वारन॥
बोलै दोऊ धन धन दयौ। कै वहु दुख कै यहु सुखु भयौ॥

दोहा-139

अंक माल गाढी भरत, फिरि फिरि याहिं सुभाइ।
नैक विरह जौ रहयौ हू, तौ निकसै अकुलाइ॥

चौपई ॥ २०२ ॥

माता पिता पै कुंबर सिधारे। बिनु लकुटी दोऊ देखे हारे॥
धाई दयौ पाइन मै सीस। फूले दोऊ बिसवा बीस॥
बहुत बेर लौगरै लगायौ। यहां तपति ऊर दहुन सिरायौ॥
इंद बदन इंद जब तें मिले। कंवल नैन राजा कै खिलै॥
बिरधपनौ पल मांझ गंवायै। फिरि कैं तरनापनपौ पाये॥
राजै अनगन दमका दीने। जाचिग सभै अजाची कीने॥
पंच सबद बाजे अति रंग मैं। राजा रानी दोऊ ऊमंग मैं॥

सोरठा-54

दूरि भयौ दुख धाम, भेंटन संझा डिठ परी।
लाग्यौ अपुनै काम, सूर बिरह ससि सुख ऊयौ॥

चौपई ॥ २०३ ॥

इंद बदन रानी कंवलावत। काम कलोल करत सुख पावत॥
चैन दयौ अबिनासी अैसौ। ना जानत बिहुरनि हवै कैसो॥
जे सुख कौ जानत नहीं भूल। ते अब बिरह न जानै मूल॥
रूप पुरी सुख ही सम ठांव। सुख ही भरयौ मदन पुरी गाँव॥

सवईया ॥ ५ ॥

आंधिरे की अंखिया है, पागुरे के पूरे पाइ, हारे की लकुटिया है बालुकु कौ खीर है।
बूडत की बांहिकौ गहईया अआहि रोगन की औखद परम है ऊधारन कौ चीर है।
ब्याकुल की कल निरबल बल जान कहै घांघन कौ गुर है औ रांकन कौ हीर है।
आस है निरासनि हुलास है ऊदासन की, सांचे करतार जू अधीरन कौ धीर है॥

चौपई ॥ २०४ ॥

कहत जान देखहु करतार। कौन कौन कीने ब्यौहार ॥
पहलै दुख ज्वाला मैं जारे। पाछै चैन नीर पर तारे ॥
वाकै काज भलै वहु जानै। और कहा कोऊ मन आनै ॥
अगम अगोचर आरंभ पार। पैरा पैर रहै ऊरवार ॥
वाकी अबिगति कैसै लहि है। अगिन झरफ कोऊ कैसै गहि है ॥

दोहा-140

यह जिय मैं नहि आनिये, वह कै सौंधौं आहि।
जान कहै जौ नैन है, देखहु रचना ताहि ॥

सवईया ॥ ६ ॥

कोऊ कैसै भेद पावै कौ दिखावै पौ न गहि कोऊ कहै जल मूठि बांधू तौ अल्यौ बकै।
सपने कै चीन्ह काहू कै न प्रगट हो हि नींद पीये कोऊ कहौ जागि क्यौ छकै।
कहै कवि जान वाकि अबिगति कैसै लहै गहरी जमन का है आड नैन क्यौ तकै।
जेतौ पचि पचि रचि रचि कोऊ कहयौ चाहै करतार की रचना नरस ना कहि सकै ॥

दोहा-141

सभ काबिन सौं बीनती, करी जान सत भाइ।
सुमिल अमल तें जिनि मलहु, लीजहु अनिल निलाइ ॥

दोहा-142

द्वादस दिन मै जान कबि, करी सुमिरन जगदीस।
तब हिसन यौ कहत है, येक सहस तेईस ॥
॥ इति कथा कंवलावती की संपूरन भई संवत सतरह सौ ॥
१७७० मिती असाढ बदी १४ ॥ दसतखत फतेहचंद की ॥

कथा सतवंती चौपई

प्रारम्भतः जगन्नियन्ता का स्तवन एवं गुणगान से विरत होने के बाद कवि ने नवी, महंमद, इस्माईल, युसूफ, मूसा एवं दाऊद आदि पीर पैगम्वरों का स्मरण किया है। कवि की समग्र रचनाओं में लगभग इसी शैली का अवलम्बन किया गया है।

सौदागर मनसूर की रूपवती एवं पतिव्रता भार्या सौदागर के व्यापारार्थ परदेशगमन के कारण दुखी है। एक धूर्त अपनी कामपिपासा-शमनार्थ पनवारन, कलाली, मालिन एवं जोगिन आदि दूतियों को उसके पास भेजता है ताकि वो चारों कोई उपाय कर सतवंती के सतित्व को विचलित कर उसे उक्त कामी के प्रति समर्पित कर दें। चारों कुट्टनियां अलग-अलग सतवंती से मिलकर उसे विचलित करने का प्रयास करती हैं किन्तु उन्हें इस कार्य में असफलता ही प्राप्त होती है। सतवन्ती इन चारों को ही मारपीट कर अपने घर से निकाल देती है।

चारों 'दूतियों' के परास्त होने से खिन्नमना धूर्त परदेश जाकर किसी सिद्धपुरुष की अहर्निश सेवा करता है। सिद्धपुरुष के प्रसन्न होने पर धूर्त उनसे रूप बदलने की विद्या सीख जाता है और राजीखुशी अपने देश लौट आता है। नगर के बाहर ही वो मनसूर का रूप धारण कर सतवंती के पास चला आता है। धूर्त के हावभावों से सतवंती को शक हो जाता है कि वो उसका पति न होकर कोई बहुरूपिया है। अतः वो उसे दो दिन धैर्य धारण करने हेतु मना लेती है। इसी बीच सतवंती के असली पति के लौटने से असमंजस की स्थिति बन जाती हैं। अन्ततोगत्वा राजा के समक्ष दोनों की उपस्थिति में सही पति के हक में निर्णय दिया जाता है। फलस्वरूप धूर्त का शिरोच्छेदन किया जाकर नगर के चौराहे पर लटका दिया जाता है।

संक्षेपतः सतवंती का आदर्श पतिव्रत्य एवं स्वपति के प्रति अनन्य निष्ठा ही कथा का प्रतिपाद्य है। अतः विषयवस्तु की दृष्टि से यह एक सामाजिक आदर्श प्रधान काव्य है। इसमें सतवन्ती के विरह का हृदयग्राही वर्णन है। वर्षा ऋतु के

कुछ पद्य द्रष्टव्य हैं:-

"सुनि सतवंति वरिषा आई। अब पिय बिनु कैसै रह्यो जाइ॥
दादुर कोकिल मोर पुकारै। बैन बान विरहिन कौ मारै॥
अरध रैन वोलत है चातग। मानहु कामदेव के छातिग॥

वर्षा ऋतु में दादुर, मयूर चकोर एवं चातक बोल-बोल कर सतवंती की विरहाग्नि में वृद्धि कर रहे हैं। वस्तुतः इसी माध्यम से विरहजन्य दुखबोध को और अधिक मार्मिक एवं प्रगाढ़ बनाया गया है। आगे क्रमशः शीत, ग्रीष्म आदि षड्ऋतुओं का मर्मान्तक विवेचन किया गया है।

बारहमासा वर्णन की परम्परा संस्कृत साहित्य में दृष्टिगोचर नहीं होती है। लोक जीवन से गृहीत यह परम्परा अपभ्रंश से हिन्दी साहित्य में आई है। जायसी, मंझन, उसमान, नूर मोहम्मद एवं जान आदि ने बारहमासा वर्णन के सन्दर्भ में सुन्दर प्रकृति चित्रण किया है। इस माध्यम से विरहिणी नायिका का विरहोद्दीपन एवं विरहवेदना का हृदयस्पर्शी निरूपण है। यहां विभावों, अनुभवों के साथ प्रकृति से तद्रूपता स्थापित की गई है।

कामदेव के मर्मान्तक बाणों के प्रहार से वियोगजन्य सतवंती के अंग-अंग में जलन हो रही है। कवि उत्प्रेक्षा करता है कि भला एक कोमलांगी कैसे इस ताप को सहन कर सकेगी। शब्दालंकार की छटा द्रष्टव्य है:-

कठिन मदन की मार, नारि कैसे सहि सकै।
अंग-अंग करत अंगार जारि जारि प्यारे विना॥

काव्य में कवि ने कथानक रूढ़ियों का भी अवलम्बन किया है। सतवंती के सत को विचलित करने हेतु धूर्त कामी उसके पति मनसूर का रूप धारण कर लेता है, फिर भी उसको अपने उद्देश्य में सफलता नहीं मिलती है। वस्तुतः स्वरूप बदलने के उदाहरण हमारे प्राचीन ग्रन्थों में यत्र-तत्र द्रष्टव्य हैं। रामकथा में मारीच का स्वर्णमृग बनना प्रख्यात है। महाभारत में कर्दमऋषि एवं उनकी पत्नी के मृग-मृगी रूप धारण कर केलि करने का वर्णन है। मृगावती में पशुपक्षी स्वरूप धारण करने वाली कथानक रुढ़ि का प्रयोग है तो कुतुबन में भी ऐसे प्रसंग है।

निष्कर्ष

आलोच्य रचना 51 चौपाइयों व इतने ही संख्या में सोरठों में विरचित है। काव्य की भाषा प्रवाहपूर्ण एवं परिमार्जित व्रज है। एतादृश अन्य काव्यों की तरह यह काव्य भी तत्कालीन सांस्कृतिक चेतना को परिपुष्ट करता है।

जान कवि कृत कथा सतवंती चौपाई

चौपाई ।। १ ।।

परथम सुमिरौ सिरजनहारा। अलष अगोचर ये़ ऊंकारा॥
अधम ऊधार अधार निरंजन। मलिन रसन सुमिरन तिहि मंजन॥
ब्याध असाध महा अपराध। बिधि सुमिरन ते होत समाध॥
जिहि रसना सुमिर नर सरसी। प्रगट भयौ ज्यौ सविता ससी॥
सुमिरन रसना रसना पीजै। तिंह रसना षटरस कत दीजै॥

सोरठा ।। १ ॥

हौरिहार समरारि, पारावा़र अपार कह्यौ।
कैसे करै विचार, जान कवि इक रसन सौं॥

चौपाई ।। २ ।।

दूसर सुमिरौं नांव नबी कौ। सर्ब रसूलनि कौ है टीकौ॥
रच्यौ महंमद सबते आदि। रचना सकल ताहि परसादि।।
आदिममू हबि बिराहिम सीस। लूत और सालिह इंदरीस॥
इसमाइल युसुफ औहूद। मूसे ईसे पुनि दाऊद॥
सकल नबी जौ जगु मै आये। हेत महमंद कै प्रगटाये॥

सोरठा।। २ ॥

तेकू तुव परसाद, जे रसूल आगे भये।
झूठौ करिहैं बाद, तुव़ पाछैजु कहाइ है॥

चौपाई ।। ३ ॥

कहतन जो सुन्यौ सुआन्यौ। सतवंति कै सतहि बखानौ॥
रूपवं़त दूसर ह्वै सती। तिहि माथै विधिहिन की रति॥
रूपव़ंत को गनिहै कोई। नारी सोजु संतव़ंती होई।।
रूपव़ंत जो सति मै लहिये। सोना और सुगंध सु कहियै॥
सत बिन रूपवंत जो आहि। इंदराइन फल सोभा ताहि॥

सोरठा ।। ३ ॥

कहा भयौ अधिकार, जौ गहनै कौ करति हैं।
सोभा सील सिंगार, सबतें सोभत जांन कहि ॥

चौपाई ।। ४।।

सौदागर कहियत हिंदवानौं। नाव ताहि मनसूर बषानौ ॥
तिहि धनको सतवंती नाम। रूपवंति मानौ रति काम ॥
घर मै बहु लक्ष्मी निवास। पैना तजि तबन ज अभ्यास ॥
सौदा करन चल्यौ परदेस। संग लये़ बहु मीति सहेस ॥
कियौ़ पया़न लाल अधिराति। सतवंती छाडि बिलकाति ॥

दोहा ॥ १ ॥

अरध ऊरध निस अरध मै, हि्य धक धक मुख मौन ॥
भौन भियावन जान कही, नैन सजल पति गौंन ॥

चौपाई ॥ ५ ॥

आधं आध करत निस आधी। महा असाध परत नही साधी ॥
पिय बिनु पलकनि घटन घटै है। वो़र अरध निस कैसे अै है ॥
पल पल मैं जल चलि चलि आ़वै। पिय बिनु पलकन मैं न समावै ॥
रैंन दिना सतवं़ती रोवति। इन दहुवन मैं नकु ने सोवति ॥
जौ लौ नाहि मिलत भरतार। है तो लौ ऊजर संसार ॥

सोरठा।। ४ ॥

जो सत ऊपर होई, जा की सूझत थे कही।
नाहिन देषै दोइ, जाके सूधे नैन द्वै ॥

चौपई ॥ ६ ॥

बहुत द्यौंस बीते बिनु नाह। तब इकि धूरत वढ़यौ ऊमाह ॥
सुनि सुनि सतवंती छवि कांति। वेही काम मुगध भरमांति ॥
चाहत सत सतवंती रिझायौ। सुन्यौ न पवन पहार ऊडायौ ॥
सोधत फिरत दूतिका घूरत। केहू मिलि है मिलन महूरति ॥
दूती जात वषानत जान। सुनहु संकल ज्ञाता दै कान ॥

दोहा ॥ २ ॥

कारीगर धन भेष धर, मालन दासी धाह।
पनवारन, कलवारनी, इनमैं दूत सुझाइ ॥

चौपाई ७

दूती चार लई ऊन धूरत। चारो महा कपट की मूरति ॥
इक पनवारन और कलाली। पुनि मालन जोगिन जंजाली ॥
चार कुटइनि चहु अनि ठगे। छल बल इनके नित ही लगे ॥
सकल चराचर चाचर भयौ। ऊपजायौ कहु चेटक नयौ ॥
सातो नरक बिसेषै चार। सील सतकौ डारै जार ॥

सोरठा।।४।।

तज तन सत की टेक, जो अपने पिय रंग रंगी।
अस्ती भिलहि अनेक, तऊ व नैकु डिगाई है॥

चौपाई ।।८॥

चहुअनि अपने गुन प्रगटाये। धूरत कौ अचरज दिषराये॥
कोऊ सरसौं हाथ जमायौ। कोऊ करिकै म्रिग चरावै॥
कोऊ तत छिन आंब लगावौ। कोऊ गादर गौरी दिषावौ॥
कोऊ पाहन नीर तिरावै। कोऊ अगिन बिनु दीप जरावै॥
करि दिषरावै यौ पांष परेव। धूरत कह्यौ करो तुम सेव॥

सोरठा।।६।।

दैहौ दमका कोर। पै हो इच्छा प्रान की।
कै हौ लाष निहोरि। जै हौ जौ सतवंति ढिगु॥

चौपाई ।।९॥

प्रथम तौ पठइ पनवारन। सत सतवंति डिगावन कारन॥
बचन असीस भांति बहुभाषै। पुनि बीरा लै आगै राषै॥
सतवंती दुख गहर गंभीर। गहि द्यौ षाह कौन के बीर॥
जौ मेरौ पिय नाहिन संग। काहे करिहौ अधर सुरंग॥
तेरै लये पान जौ बात। तत छिन ही मै अधर फिकात॥

सोरठा।।६॥

तत छिन अधर फिकात, आपुन मै मिलि मिलि जुगल।
पान रहै किहि भांति, पल पल मैं पिय पिय रटत॥

चौपाई ।।१०।।

रुदन करत नैना अरुनाये। मै लोचन कौ पान षुवाये॥
सूकि भयौ तन मौह्हि सुपारी। चूनौ होइ विरह रै जारी॥
मिलि मिलि असुवनि चषि रति आवै। य है पीक कौ भाव लषावै॥
इन बातिन मै खैर न कहिये। जीवन तबहि जबहि पिय लहिये॥
बिरहु चुनौती दीवी डारि। कछुन बसाइ रही हौं हारि॥

दोहा।। ३॥

जैसे ससि में दैषिये, प्रगट लछन अंक।
तैसं पिय बिन जान कहि, काजर नैन कलंक॥

चौपाई ।। ११।।

करि छल बल पनवारिन रोवति। कबहु बेढा कबहु सोवत॥
हौइ हाइ ये तो दुष तौको। कोहै कहिन पठायौ मोकौ॥
जौ अबलौ मै जीवति पाई। मरब न देहौ राम दुहाई॥
पान और मिहरी की जाति। बिनु कर मधि फेरें कुमिलात॥
पानी बिनु पानि मर जाहि। त्यौ तिय जौ पिय भेटत नाहि॥

सोरठा।। ७॥

चोली मै कुचपान, जो पाननि मै ना फिरै।
जै है सूकि निदान, जुगम न काहू काम के॥

चौपाई ।। १२।।

अबहि जाऊ जित तेरौ कंत। कहौ गहर मै दुष मै सतवंत
येक तिया कहि ऊनहि दयाऊ। अपनै संग लाइ ले आऊ।
जौ ऊनके मन दया न होई। तौ ऊनते आऊ कर धोई॥
जो आपुन कौ नाहि न चाहै। ताकै कोरी मरेऊ नाहै॥
जोबन रतन उदधि नही पइये। जो कोटक बर बूड कलइये॥

सोरठा।। ८॥

जोबन रतन अमोल, जिन जानहि फिरि पाई है।
करिले कोटि कलोल, हिलन मिलन षेलन, हंसन॥

चौपाई ।। १३।।

करौ कलोल लाल जौ पांऊ। कै यहु जोबन यूंहू गंवायहु॥
जोबन धौं केतक बात। कहा भयौ जौ येहु जाति॥
लाल नाव में बैठे षेह। येहु गयौ न गनिये सोह॥
जो पर पुरषन को मुष जोवै। वहु तिय अपनौ जोवन षोवै॥
पिय पिय जपिये जौ लौ जीजै। जोबन कहा जीव बलि कीजै॥

सोरठा।। ९ ॥

चाहत ससि न चकोर, आवत निकटि न बौलि है।
दूरहि देषत वोर वहु अपनौ हित ना तजै॥

चौपाई ।। १४ ।।

बोली पनवारनी ठगोरी। याहि ते लहियत तू भौरी॥
पीति करीतै दीप पतंगा। वहुन न वदत बहु जारत अंगा॥
मीन मरत बिन पानी पायो। नैकुन व्है पानी कै भायो॥
जिय जतन बुद्धि इन मांही। तू मानस क्यौ समुझत नाही॥
अैसो मित्रहु जिहि पग धूर। नैकु नाई पूजत मनसूर॥

दोहा।। ४॥

छबि सागर पुन आगरौ, उजियागर कुलि आहिं।
जाकौ चाहे सरब जगु, ताकौ तेरी चाहि॥

चौपाई ।। १५ ।।

सुनी बात सतवंति रिसाई। चमकी परी मानौ बिछुक षाई॥
अति रिस मांही आंष भरि आई। बलषै है विषधर की नांहि॥
रिस में बात कहत नही आई। चेरनि सौ करि सेन जनाई॥
तत छिन दासिनि घेरौ कीनो। मूकी लात दान बहु दीनौ॥
चौली को बहु पान चलायें। बसन पान नाई बगराये॥

सोरठा।। १०॥

भाजी नागै आग, गूंदी अलकै छुटि गई।
मानहु आयो सांग, वैसी अैसे बूझिये॥

चौपाई ।। १६ ।।

ता पाछे पठई कलवारी। सतवंती धन जाइ जुहारी॥
मेरौ है तोसो हित नातौ। तातौ तातौ निकस्यौ छातौ॥
अग्या होइ तौ अब ऊठि धाऊ। चोषौ मद बिनु दमका लाऊ॥
सुरा लेत जाकै संग पीय। बिन पति अनहित लागत जीय॥
पिय न संग और सुरा न पीजै। कहु सतवंति कैसे जीजै॥

सोरठा।। ११ ॥

येक नही पिय पास, दूजै सुरा न लेति है।
कहि दयी कौन बिसास, सतवंती ज्यौ तन रहे॥

चौपाई ।। १७।।

भगि अंग अंनग हुतासन। पर जरी राई आंच ऊसासन॥
बिरह कलाल होई कै आयौ। अवधि धीर गुर रांग गरायौ॥
सुमिर सुमिर अषियां जल छाई। टप-टप टपकत भाठी नाई॥
डिगति फिरति सुधि बुधि बिसारी। अैन मैन मानौ मति वारी॥
मै अैसो मद पीयो कलाली। तेरी बात लगत है ठाली॥

सोरठा

पति मदमाती नारि, सुरति गई सुरतै रही।
भूल्यौ सब संसार, भूलि गयौ पिय भूल वौ॥

चौपाई १८

कलवारिनि बोली सुनि बोरी। तोई गये दै पेमु ठगोरी॥
आपुन पर तिय पेमु पठाये। अनत ठगौरी पास ठगाये॥
जौ ऊन तेरी कबिन कीनी। तू काहे मरि है मति हीनी॥
वाके रंग और को राती। तोहि न कबहु पठवत पाती॥
ऊन तिलियनि तौ नाहि न तेला। काहे सु करत जोबन बेला॥

सोरठा।। १२ ॥

दैहौ आनि मिलाइ, गुन ग्याता भ्राता ससी।
मानहु सुष रस चाहिइ, हमहू आनंद होई ज्यौ॥

चोपाई १९

सुनत वचन उपजी रिस भारी। कालकूट बोली कलवारी॥
तब चेरनि सौं सेन जनाई। करहु याही पनवारन नाहि॥
मूकी लात तमाचन मारी। ऊठकै चलि मनहु मतवारी॥
मरदन महा जु चेरिनि कीनी। गिरि गिरि जाति भई बलहीनी॥
गिरति परति चलि है करि जोरी। सुरति न रही धाम किही वौरि॥

सोरठा ॥ १३ ॥

भये मनोरथ मंद, स्वारथ कछु पायौ नही।
चपल परी दुष इंद, यहु हथजुग कबी जान कहि ॥

चौपाई ।। २० ।।

मालन पठई ताकै पाछै। छल बल पूरन कोट कटाछै ॥
नीके नीके फूल सुवासी। सोधि लये ऊन नारि बिसासी ॥
बेल चंबेली चंपा आने। पूजा करुना ता ढिगु बाने ॥
पुनि सेवती केतुकी फूल। जहां रहत मन मधुकर भूल ॥
और केवरा जाही जूही। बौरसिरी अबास गति सूही ॥

सोरठा ।। १४ ॥

अदभुत भरे सुबास बरन बरन के बनज बहु।
सतवंती कै पास आनि धरे मालिन कुटिल ॥

चोपाई ।। २१ ।।

सतवंती बोली सुनि मालिन। पुहप दूर करि री जंजालनि ॥
नीरज मरै काज व अैहे। नै सक तन परसत जरी जैहै ॥
मालिन पुहप सेज बिहसाजै। जिहि घर लाल रसाल विराजै ॥
तैक ढिक चुनिकै ये आने। मोतन कंठि कहोइ गधाने ।।
हार नाग व्है मोहि डरावै। बास लहर नाहि लहरावै ॥

सोरठा ।। १५ ॥

हार लगत है हारि, पिवि बिनु गरु पहारते।
यहै विचार विचार, बिरहनि नारि निवारि है ॥

चौपाई ।। २२ ।।

सुनि मालन जवते पिय 'हांते। कहत सिंगार किये मै नाते ॥
नैननि को अंजुन नाही दीनौ। पाननि कै रंग अधर न मीनौ ॥
चंदन बौरव बंदन केसर। कान तरौ ना नाक न बेसर ॥
सीस फूल नहि सीस सुहावै। बैंदी बैरिनि नाहि न भावै ॥
पोवतहू नित लाजे प्रान। आंसू मुकत धागे ध्यान ॥

सोरठा।। १६ ।।

लगत सिंगार अंगार, अंग अंग पर जारि है।
बिना संग भरतार, जे सुषते सब दुष भये॥

चौपाई ।। २३ ।।

सुनित मालनी जब भरि आये। छलहाई के चषि छलहाये॥
इन ओसेरनि जौ मरिजैहै। कहि द्यौ तोहि लाल का दैहै॥
सीस काढि अपनौ जौ दीजै। पुरुष जाति तोंऊ न पसीजै॥
लाष जतन जौ करिहै कोई। काहू भांति न अपनौ होइ॥
वाके लये न षावहु चैन। आनि मिलाऊ मूरति मैन॥

दोहा ।। ५ ।।

छैल छबीलौ निरमलौ, मूरति मनौ मनोज।
बिक्रम पर दुष हरनकौ, ग्यान विसेषत भोज॥

चौपाई ।। २४ ।।

बात सुनत यह चेरी टेरी। बेगि आनि ठाढी भई वेरी॥
अब चेरी कत गहर लगावहु। यहुकौ ऊनज मल मिलावहु॥
चेरिन नीके हाथ चलाये। अंग अंग रत रंग रंगाये॥
अंग अंग मालन मुरझावे। मनहु पवन लगी पुहप सकाने॥
भाजी छांडि फूल मन भूले। फूलि फूलि सबहि अंग फूले॥

सोरठा ।। १७ ।।

प्रगट रीति संसार, जौ कछु करै रुषाई है।
सतियनि यहै अधार, नाये असती ना वदत॥

चौपाई ।। २५ ।।

मालन पाछे जोगिन चली। जाकै छल बल अवनी छली॥
बीन हाथ कांधै म्रिग छाला। गर पहरे रुद्राक्ष की माला॥
मोरपंषा मुद्रा पुनि कंथ। सींगी पत्र जोग कै पंथ॥
पाव पाव री दरसन छार। लगे अध्यारी कियौ जुहार॥
जांगे अलष सब्द यहु भाष्यौं। छाक टूक ले आगे साष्यौ॥

दोहा।। ६ ।।

टौना टामन मंत तंत, छल चटक कौ पुंज।
निरषत कछु परषत कछु, जैसी द्वै रंग गुंज॥

चौपाई ।। २६ ।।

सतवंती बोली पर बीनौ। कौन दिसा ते आवन कीनौ।।
कहा येक दिस पूछत मोकौ। दिस दिस भेद बतावत तौको॥
प्राची निरषित की इसाना। बहुरि ऊदीची बाइ बजाना॥
परती चीनै रित पुनि दाछिन। देषे सब अगनेह लाछिन।।
ओर आहिमी पुनि दिल बागी। ध्यान अलष कै दिस दिस जागी॥

सोरठा।। १८ ।।

धन धन तेरे भागु, मो देषत पाति गहरे।
हौ चंदन तू नागु, चौप चाप लपटाइ रहु॥

चौपाई २७

गवन करत इक देस सिधारी। तहां येक सौदागर भारी॥
कहत नाव ताको मनसूर। ताकै धन रंभा किधौ हूर॥
ऊतहि जाहि मै बात चलाई। अैसी रूपवंत कहा पाई॥
कह्यौ आइ इत कियो बिवाही। सतवंती की रहि न चाहि॥
याते जर्म न व्है हौ हातौ। याही के जोवन मदमातौ॥

दोहा॥ ७॥

पुहप व चाहे ओर, भौर लहे जौ केतुकी।
फिरिन फिरै सब ठौर, रहै लु विधि मिदि फद ऊतहि॥

चौपाई ।। २८ ।।

तेरी दया कया मोहि छीजै। मै फिरि कह्यो न अैसी कीजै॥
वहु बैठी तुव सुमिरन माहि। कौन न्याव तेरे मन माहिं॥
तब मोसौं रिस होइ बषान्यौ। भोग भाव जोगनि नही जान्यौ॥
आंब लहे अंबली को षैहै। दाष लहे जामिन को लैहै॥
लये पयूष प्रान तन जीवै। ऊष मयूष कौन द्यौ पीवै॥

सोरठा।। १९ ॥

भर जोबन मै मंत, रूपवति अरधंग की।
छांडि दई सतवंति, बहुरि न नटौ जरम मै॥

चौपाई ।। २९।।

सांचु जानि सतवंति रोवत। जल असुवनि कर मलि मलि धौवत॥
येक बिछोह द्रगम हो मौको। अब कैसे भरिहौ दुष दौको॥
इक हांते पुति और विहाते। जीवन कठिन भयौ है ताते॥
व होद्यौ जव्है करतारा। सुरति हमारी करि है प्यारा॥
अबतौ इक ही बार बिसारी। जानत नाहि कहा गति नारी॥

सोरठा।। ३०॥

बांई दी प्रतिपाल, फरकि फरकी बाई थकी।।
ये आई द्वै लाल, आई बाई बैद कहै॥

चौपाई ।। ३०।।

यहु बिलाप जोगिन मन भायौ। जो हौ चाहत ही सौ पायो॥
तन फूल्यौ फूली मन मांही। कंथा माहि समावंत नाही॥
सुनहु बात सतवंती बिनानी। ऊनि मूरष तू न पहिचानी॥
तेरो मरम जावै बहु जावत। तोकौ छांडि अनत कत बोनत।।
जैसी करी लाल तुव तोसौ। अैसी ये मेरे पिय मौसो॥

सोरठा।। २१॥

मै बहु दीनो छांडि, आडि न मानी कुटंब की।
करत फिरत द्र लाई, जहां जहां मन मानि है॥

चौपाई ।। ३१।।

दाषभेद बाइस कहा जानै। कल कंठा रसु आब पिछानै॥
जो चकोर कौ आगै देहै। तजि मुक्ता चिनगारी षैहै॥
कहा भयौ जो वाहिन भावै। राजहंस मुक्ता पर आवै॥
चांद न तकै आंधरो कोई। मंद चंद की जोति न होई॥
जैसौ होइ स तैसे राचै। छार बिना पर मास न पाचै॥

दोहा।।८॥

इंदोबर बहु इंद को, नर बहु धन आधीन।
तरवर कौ पंछी बहुत, सरवर कौ बहु मीन॥

चौपाई ।।३२।।

यह न बात सतवंती भाई। त्यौरी तानी भ्रकुटि भराई।
हौ जावत तै कछु सिधि पाई। पै येहु डोलत भरमाई॥
कहा भयों जो लाल न मानी। जोगिनी होइ फिरी बौंरानी॥
जौ लौ पिवको नाहि रिझावहि। या मारग मै कछू न पावहि॥
जा पर कोपवंत भरतार। ताकौ मोष न दै करतार॥

सोरठा।। २२॥

जौ न गनै जिय ग्यान, नैकु न मन में आनि है।
तोऊ ऊन कौ ध्यान, काहू भांति न छांडि है।।

चौपाई ।।३३।।

लाल सहा वैसोई सहिये। अपनी विपति न काहू कहिये।।
पिय सौ रुखै सौतिन दोष। सो तिय कैसे पावै मौष॥
जौ कछु कहै वही पै कीजै। ऊतर कठिन ऊलटि नही दीजै॥
भया करहि तौ (तौ) देह सुहाग। दिये रुषाई[1] ..... भागु॥
सो तिय जौ पिव कौन विषौरै। कोट बार जो तौरे जौरे॥

सोरठा।। २३॥

करवत राषै सीस, कै संझ्या 'सनिमास लै।।
तौ पुनि बिसवा बीस, नैकु न अंग दुराइ है॥

चौपाई ।।३४।।

जौगिनि कह्यौ झूठ यहु बाति। सही न जात सौत की राति॥
ये करै न वैसो विषु पीजै। बहुत बिछोहै कैसे जीजै॥
कहत बनाइ बनाइ जु बातै। जानत नाहि पिरम की घातै॥
सुलप बैस चिंता नही मन मै। कामदेव भयौ प्रबल तन मै॥
जिहि तन मदन सु यौ वहि भाषै। कै तौ तू बुधि घट घट राषै॥

(1) मूल पाठ पर स्याही गिर गई है।

सोरठा।। २४॥

कठिन मदन की मार, नारि कैसे सहि सकै।
अंग अंग करत अंगार, जारि जारि प्यारे बिना॥

चौपाई ।। ३५।।

ताकौ जारे मदन हुतासन। ज़ाकै तन मै सील निवासन॥
काम अगिन जौ आंच निकारै। सलिल सील सीरौ करि मारै॥
जरिहै काम अगिन मैं सोइ। जाकै कुल मै सील न होइ॥
काम अगिन तन जरि बरि जैहै। जौ भूषों तौं बिषहि वषैहै॥
नैकु न भूल तपति को नाम। तातै डरपति डोलत काम॥

सोरठा।। २५॥

जपै जु पिय कौ नाम सावधान व्है जान कहि।
लोभ न क्रोध न काम तिसना मोहि न व्यापहि॥

चौपाई ।। ३६।।

सुनि सतवंति बरिषा आई। अब पिय बिनु कैसे रह्यौ जाइ॥
दादुर कोकिल मोर पुकारै। बैन बाव बिरहिन कौ मारै॥
अरध रैन बोलत है चातग। मानहु कामदेव के छातिग॥
स्याम घटा बग पंत दिखावै। करी दंती ले मारन आवै॥
घरी घरी घन बसुतर फेरै। मलिन वसन हौ मारी तेरैं॥

सोरठा।। २६॥

गहर घनाघन घोर, घर नीकौ घेरौ करै।
अविहि कठिन कठोर, जो बिरहनि तन ज्यो रहै॥

चौपाई ।। ३७।।

बरिषा रिति कौ भेदु न पायौ। तै जोगिनि कछु और बनायौ॥
घन नावत घन गहर गंभीर। सुतौ बघावति बिरत विट धीर॥
कहत आइ रित पर हम गाजै। वैहु अवधनि आनि बिराजै॥
देषि देषि असतिन कौ लसि है। असनि घटा पटदै मुख सिहै॥
पपीहा पीय पीयजु पुकारै। देत संदेस भैट न पारै॥

सोरठा।। २७॥

आवन जान्यौ पीव, चौप बढ़ी नाचत सिषी।
मेरे तौ यहु जीव, तेरी द्यौ तू जानि है॥

चौपाई ।। ३८।।

अब सीतल रित आइ नेरी। देषै कहा होइ गति तेरी॥
वौट हीन ते बिरवा जरि है। लाल बिना बनिता नऊ बरि है॥
सौर सुपेती बहुत मिलावै। तोऊ प्यारे बिनु थहरावै॥
सीरी बात गात में षटकत। पल पल पार करत फिरि अटकत॥
अैसी रित प्यारे तै न्यारी। घालि अभाग धरी हतियारी॥

सोरठा।। २८॥

बनहि जरावति सीति, बनिता कैसे बांचि है।
निसदिन होत अनीत, का अंता सौ कंत बिनु॥

चौपाई ।। ३९।।

सीत कहा द्यौ करि है मेरौ। सुमिरत मै पीतम अहि नेरो॥
सौर सुपेति लैकत ढापौ। धरि धरि ध्यान लाल गर चांपौ॥
सीरी बात न गात कंपावै। विरहु तात सनमुष नहि आवै॥
गावै मध सील कौ कोट। पासम कोट कोट की वोट॥
लाल वीज जो बाहि न वाऊ। सुमिरन कोट तुषार बचाऊं॥

सोरठा।। २९॥

सीत लगत रोमांच, हे अंग अंग पै होत है।
हौं यो जावत सांच, पिय आवन आगम भयौ॥

चौपाई ।। ४०।।

अब ग्रीषम रित आई ताती। बरहिं वियोगिनि जौ निस बाती॥
जे तक चंदन बंदन करिहै। मदन ताप संददनि जरिहै॥
जौ विरहनि पति पंथ निहारै। ग्रीषम लू वनि लोइन जारै॥
जौ वसीर कौ सदन बनावै। लालन बिना तऊ न सिरावै॥
जोबर कौट फिरोवै कोई। पषा पषै जीवन नही होइ॥

सोरठा।। ३०।।

मनहु आहि चिनगार ग्रषम कौ तातौ पवन।
कीधौ षांडे धार, दोइ अकेली कौ करत॥

चौपाई ।।४१।।

सो जानै सो आहि अकेली। हिलि मिलि रही लाल सौ हेली॥
लाल ध्यान दरसन परसावै। पवन बीचि पैठव नही पावै॥
ढुरि मिलिबे कौ लालनु निकट। पै परगट परसन भयौ विकट॥
पल पल पिय पिय जिहि मुष आवै। षट रित ताकौं कहा सतावै॥
जहां बास बिथुरे पंचानन। म्रिगव छुवै तिनौ तिहि कानन॥

सोरठा।। ४२।।

का बिरहु का मैन, कहा विपति संपत कहा।
जिह अरुझे पति नैंन और बात सुरझै नही॥

चौपाई ।।४२।।

व्है निरास तब जोगिनि बोली। घट ओघट षंड बन-षंड डोली॥
तोसी मुगधा कहू न देषी। मूरिष बिसवा बीस परेषी॥
अैसौ जोबन षौवत येहु। वहु तजि गयो न आवत केहू॥
अजौ समुझि सठ मूढि अयानी। छैल मिलाऊ ससि की बानी॥
कामदेव तिहि देष लजावै। अछिर जूथ बेंदना आवै॥

सोरठा।। ३२।।

सुनि सतवंती रिसाइ, सैन जनाइ सषिनि कौ।
चहुँधा लागी आइ, पूजा करिहै जोगि की॥

चौपाई ।।४३।।

सींगी षपरमुद्रा फोरी। माला और अधांरी तोरी॥
कहू कथा म्रिग छाला परी। कहूं पावरी मेलि अडारी॥
पंषा जराइ बीन धरि पटकी। ये क्वै रही छार मुष अटिकी॥
सागर मैं से बूडक कै है। यह न छार तऊ मुष तै तीऊ जै है॥
मेघ ध्यान वै मलि मलि धोवै। दूति कलंक तऊ नही षोवै॥

सोरठा।। ३३ ।।

जैसे फागुन डारि, पात हीन लागत अपहि।
तैसे दूती वार बिपति पात बसतर बिना॥

चौपाई ४४

चिंता बढी बहुत मन धूरति। नाहिन मिलति संजोग महूरत॥
अब न जाहि दूती यहु पाप। चढत नांव़ व़ाकौ सुनि ताप॥
मन न रहे व़ाको नही पाऊ। देस छांडि परदेसहि धाऊ॥
महापुरुष जिनकी डिठ अै है। जात कठन बिध यऊ लैहै॥
भटकत डौल्यौ अनगन जोजन। पियो न पाव्यौ लयौ न भोजन॥

सोरठा।। ३४ ।।

येक द्यौस इक ठांव सेतंबस धूरत लह्यौ।
अबहि कहाद्यौ जाऊ, जो चाहत रहे डिठ पर॥

चौपाई ।। ४५ ।।

धाइ पाइसे तंबर परसे। धूरत धूरत दरसन दरसे॥
तंत मंत यै ना जै कहिये। अंजन चेटक वा पै लहिये॥
केतक दिन करि सेव रिझायो। तब से तंबर दूत दयायौ॥
जो मांगहि सौ देहौ तोकौ। मन इछ्या अपनी कहि मौकौ।
पलटन रूप मोहि सिषरा दऊ। तौम कहु तुम मरता जिववहु॥

सोरठा।। ३५ ।।

दीनौ मंत्र सिषाइ, चाहै ताकौ रूप व्है।
फूल्यौ अंग न भाइ, धूरत कौ धूरत मिल्यौ॥

चौपाई ।। ४६ ।।

हरषत चल्यौ आपुने देस। जाइ ऊतारो अहि सतमेस॥
निकटि जाइकै रूप फिरायौ। व्है मनसूर नगर मैं आयौ॥
आइ मिले सब नाती भाह। लेहि बलइया बहवी माई॥
सतवंती हू कियौ सिंगार। जानतहि आयौ भरतार॥
मंगल गायौं बंटी बधाइ। रैन भयेले सेज भसाई॥

सोरठा।। ३६।।

बैठ्यौ है परजंक धूरति ढिगु सतवंति लै।
नैकु न मन मैं संक रहस बढी रसु परस की॥

चौपाई ।।४७।।

सतवंति चित करत विचारा। ना पावति पति के ब्यौहारा॥
नाहि न लोच होत चित मांही। वै़ लोचन के लोचन नाहीं॥
लोचन अैन पैन बहु लोच। परी मोच चित बाद्यौ सोच॥
रूपमाही कछु अंतर नाही। पै लछिन मन मै न समाही॥
यहै कहत है सिरजनहारौ। तूं ही राषहि सत्त हमारौ॥

सोरठा।। ३७।।

भरम पर्‌यौ त्रिय माहि, रुपसु मिल लछिन अमिल।
यह व़ुहु आहि कि नाहि, कहा करौ करतार हौ॥

चौपाई ।।४८।।

दूत कह्यौ कछु ब्याही नई। काहे औंगी भौंगी भई॥
बहुत दिनन पाछे हम आये। नीकै तै करि सेव रिझायै॥
देत रुषाई ताते जान्यौ। तै मन अनत कहूं लै बान्यौ॥
ये लघु बचन तोहि मुष माही। याही ते जानत बहु नाही॥
नरक जाइ जौ बिन पिय अपनै। पर पुरुष हि राचत है सुपनै॥

सोरठा।। ३८।।

जौ तूं है मनसूर, तौकू द्वै दिन धीर धरि।
रहियौ तोहि हजूर, भरम मिटे बिनु रितु नहीं॥

चौपाई ।।४९।।

केतक दिन गये कहत कहावत। मुष बोलत पैं रति न मनावत॥
याही में प्रीतम घरि आयौ। महा ऊमंग लछि बहु लायौ॥
बैठत पौरी माहि रिसायौ। आन पुरुष घर मै डिठि आयौ॥
ऊतते बहु इतते ये धाये। कुल मिमिह्वै मनसूर छिडायै।
दोऊ ये द्वै रूप निहारै। काकी व़ोर करै किहि मारै॥

सोरठा।।३९॥

ये क्कै रूप सुभाइ बैसं ये़क गति ये़ कहीं।
कुटंव रह्यौ भरमाइ, कौ नहि धौ अपनौ करहि॥

चौपाई ।।५०।।

तिहि समये कोऊ राजा आही। तो दोऊ लै पुहचाये ताहि॥
राजा पुनि देषत भरमान्यौ। य़हर अंचभौ कित तै आन्यौ॥
भई बात अचरज की भारी। काहूको न सुनि न निहारी॥
राजै कह्यौ कौन द्यौ मास। यहु धन ब्याही करऊ प्रकास॥
जो नो भयौ कौन दौ बार। कब घर आये देह विचार॥

सोरठा।।४०॥

कागर आनि हजूर, भिन-भिन लयौं लिखाई कै।
यहै कहत मनसूर, सांच झूठ बिधि प्रगट करि॥

चौपाई ।।५१।।

दोऊ कागर पढि करि राषे। नाहि न मिले बचन भिन भाषै॥
सतवंति पै कौऊ पठायौ। वाहू पै यहु भेद लिषायौ॥
जौ मनसूर लिष्यौ सौदागर। वहै लिष्यौ सतवंती कागर॥
कागर तीन मिलाय बंचायौ। सांच झूठ दोऊ ऊघरायौ॥
मनसूरहि सोंषी सतवंती। सांचु प्रसाद करै सुषंसंत॥

सोरठा।।४१॥

काट्यौ धूरत सीस, लै लटकायौ चौहटा।
ये फल बिसवा बीस, पाये़ झंठ कुसील ते॥ १॥

सतवंती मनसूर, अमर भये या जगत मैं।
जगमगात ससि सूर, तैसे प्रगटे सील तौ॥ २॥

दौहा

सोलह से अठहंतरै, सन सहस इकतीस।
सतवंती सत जान कवि, बांध्यों बिसवा बीस॥

इति कथा सतवंती की संपूरन भई। संवत १७७७ मिति फागुन सुदी ९ सनीसरवार।

कथा कामलता

एक समय हंसपुरी के नृप रसाल अपने शयनकक्ष में निद्रामग्न थे तभी अनुचरों ने देखा कि राजा की परछाई क्रमशः घट रही है। इस घटना के फलस्वरूप राजप्रासाद के शीघ्र ही ध्वस्त होने व भारी विनाश की आशङ्का जताई गई। सारा घटनाक्रम जानकर मन्त्री ने राजा को जगाया किन्तु अप्रत्याशितरूपेण राजा तलवार लेकर मन्त्री बुद्धिवंत को मारने दौड़ पड़ा। अन्ततोगत्वा वरिष्ठजनों की मध्यस्थता से प्रकरण शान्त हुआ, राजा के कथनानुसार उन्होंने स्वप्नकाल में एक अनिन्द्यसुन्दरी के अवलोकन के साथ ही उसके समक्ष प्रेमपूर्ण संलाप भी किया है। मन्त्री के अविवेकपूर्ण व्यवहार के फलस्वरूप वे सुन्दरी के साथ संलाप नहीं कर सके। यही कारण था कि वो मन्त्री को मारने हेतु दौड़ पड़े। मन्त्री बुद्धिवंत अत्यन्त प्रज्ञावान् होने के साथ-साथ एक चित्रकार भी था। उसने स्वप्नसंदृष्ट सुन्दरी का अभिराम चित्रोल्लेख करके राजाज्ञानुसार समीपवर्ती एक महल में संस्थापित करवा दिया ताकि गतागत पथिक से चित्रगत नवौढ़ा का परिज्ञान प्राप्त हो सके। प्रचुर कालावधिपर्यन्त कोई भी चित्रगत सुन्दरी के विषय में नहीं जान सका। अन्ततोगत्वा एक पथिक ने इसे परिज्ञापित करते हुये सुन्दरपुरी नगरी की वास्तव्या बतलाया। पथिक के अभिकथनानुसार यह सुन्दरी मानवजाति से घृणा करती है। पथिक से प्राप्त अग्रवृतान्तानुसार रानी कामलता ने एक बार देखा कि प्रासाद के संलग्न उपवन में सहसा लगी आग की वजह से सब कुछ भस्मीभूत हो गया। एक पादप के कोष्ठक में एक मयूरदम्पति का आवास भी जलकर राख हो गया। शावकों के प्रति अनन्यप्रेम के कारण मयूरी अपने बच्चों के परित्राणार्थ अग्नि को समर्पित हो गई किन्तु मयूर ने उड़कर विश्वासघात करते हुए अपने प्राणों का त्राण कर लिया। मयूर के इस घोर स्वार्थपूर्ण व्यवहार ने कामलता के नारी हृदय को उद्वेलित कर दिया और उसने प्रतिज्ञा की कि मैं भविष्य में किसी पुरुष से सम्बन्ध कदापि नही बनाऊंगी। पथिक से विस्तृत विवरण प्राप्त कर राजा एवं मन्त्री जाकर सुन्दरपुरी के उपवन में ठहर जाते हैं। पश्चाद्वर्ती काल में मन्त्री बुद्धिवंत अपने चित्रकला के कौशल से नगरी में विख्यात हो जाता है और उसे राजप्रासाद में अभिराम चित्रण हेतु नियोजित किया जाता है। उपयुक्त काल में चित्रकार बने मन्त्री ने महल के झरोखे में आसीन राजा रसाल का चित्र निर्मित किया जिसमें चित्रित सघन वन में घटित जलप्लावन का हृदय विदारक दृश्य राजा रसाल को दिखाते हुये चित्रित किया गया। चित्रांकन में हरिण परिवार भी है जो जलाप्लावन में बह जाता है किन्तु हरिणी अपने शावकों के प्रति ममत्व का परित्याग कर स्वप्राणरक्षा को वरीयता देते हुए भाग जाती है किन्तु नरहरिण ममतावश शावकों सहित अपने प्राण गंवा बैठता है। रानी कामलता का हृदय चित्रसंदर्शन के बाद पुनः

नरजाति के प्रति प्रेम से आपूरित हो जाता है और वो चित्रगत राजारसाल से प्रेम करने लग जाती है। हालांकि चित्रकार ने तब तक यही निरूपित किया था कि राजा रसाल समस्त नारिजाति से उक्त घटनाक्रम की वजह से घृणा करते हैं और वे कभी भी विवाह नहीं करेंगे। रानी अधिकाधिक विरहाकुला होने लगती है और बुद्धिवंत को कहती है कि किसी भी तरह से मेरा मेल राजा रसाल से करवा दो। रानी के अनन्यप्रेम एवं समर्पण की भावना के आगे मन्त्री बुद्धिवंत का हृदय भी उद्वेलित हो जाता है और वो अपना समस्त रहस्योद्घाटन कर देते हैं। शीघ्र ही राजा रसाल एवम् रानी कामलता प्रणयबन्धन में बंधकर एकाकार हो जाते हैं। नवदम्पति चिरकाल तक सानन्द सुखी जीवन व्यतीत करते हैं।

समीक्षा

1. रचना व प्रतिलिपिकाल

संवत् 1678 में कथा प्रणयन की सूचना कवि ने निम्न पद्य में दी है। प्रतिलिपिकाल वि. संवत् 1778 वर्णित है।

सोलह सौ अठहत्तर, कथा कही कवि जान।

2. कवि की विनम्रता

षोर विषोरहु भूलि जिमि, अनबन वाचहु बांन॥

प्रस्तुत पद्यांश से कवि की विनम्रता स्पष्ट परिलक्षित होती है। कवि ने सहृदयजनों से प्रार्थना की है कि कथा में भूलवश भी दोष दृष्टि न रक्खें अर्थात् कृपाकर दोषों को दूर कर सार को ग्रहण कर लें।

3. काव्य शैली

पूर्व रचनाओं की भांति आलोच्य रचना में मसनवी शैली का अवलम्बन करते हुये प्रारम्भ में परमात्मा का स्तवन एवं तत् पश्चात् हजरत मोहम्मद का गुणगान किया गया है जिन्होंने परमेश्वर के संदेश को हृदय में अनुभव कर एक नवीनपंथ का प्रवर्तन किया।

4. कथानक रुढ़ियां

हिन्दी प्रेमाख्यानों में स्वप्नसंदर्शनजन्य प्रेमोत्पति रुढ़ि के जगह-जगह निदर्शन उपलब्ध हैं। वस्तुतः इसी माध्यम से नायक-नायिका के मिलनपूर्व प्रेम को और अधिक प्रगाढ़ बनाने का प्रयास किया गया है। जान ने अपनी विभिन्न रचनाओं में आलोच्य रुढ़ि का समाश्रय लिया हैं। कथा कनकमंजरी में नायक मधुसूदन स्वप्न में रतनमंजरी को देखकर उसकी प्राप्ति

हेतु व्यग्र हो उठता है। इसी तरह से रतनमंजरी भी मधुसूदन को स्वप्न में देखकर नायक के प्रति आसक्त हो जाती है। आलोच्य कथा कामलता में हंसपुरी के राजा रसाल स्वप्र में सुन्दरी कामलता के साथ प्रेमालाम करते हैं और जागने पर उसकी प्राप्ति हेतु प्रयास करते हैं। कामलता का चित्र बनवाकर राजपथ पर टांगा जाता है। बाद में पथिक द्वारा परिज्ञापित करने पर कि चित्र वास्तव में सुन्दरपुरी की शासिका कामलता का है- राजा अपने अमात्य के साथ जाकर नानाविध प्रयत्नों से कामलता को प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं। आलोच्यकृति में चित्र-दर्शन जन्य प्रेमोत्पति का भी विशद विवेचन है। कामलता के समक्ष मन्त्री बुद्धिवंत द्वारा प्रस्तुत एक चित्र रानी के सम्पूर्ण पूर्वाग्रहों को उच्छेदित कर देता है और वो पुनः पुरुष जाति से प्रेम करने लग जाती है।

भावाभिव्यंजना— आलोच्य कृति का प्रमुख विषय प्रेमतत्व का निदर्शन है अत: भावाभिव्यंजना भी स्वाभाविक रूप से उसी क्षेत्र तक है। यहां विशेष रूप से प्रेम का विरह पक्ष चित्रित है। अत: नायक नायिका वियोग एवम् मिलनपूर्व में आगत विविध कष्टों का जितना विशद चित्र कवि ने बनाया है उतना महत्व अन्तिम मिलन को भी नहीं दिया गया है। स्वप्रसंद्दष्ट सुन्दरी के अवलोकन के पश्चात् राजा रसाल प्रत्यभिज्ञानार्थ उसका चित्र बनवाकर राजपथ पर टांग देते हैं। कालान्तर में किसी पथिक द्वारा उद्‌घाटित होता है कि चित्रगत सुन्दरी सुन्दरपुर की राजकुमारी है जो पुरुष जाति से घृणा करती है। राजा एवं मंत्री बुद्धिवंत महिनों तक यात्रा कर नानाविध कष्टों को उत्तीर्ण कर राजकुमारी को पाने में सफल होते हैं। यहां भावाभिव्यंजनारुढ़िगत दृष्टिगोचर होती है क्योंकि जान के अधिकांश प्रेमाख्यानों में पात्र एक सी विशेष परिस्थिति में जन्म लेते हैं। एक ही प्रकार के प्रेम में पड़ते हैं और वियोग में तप्त होते हैं, बाधाओं से जूझकर गन्तव्य तक पहुंचते हैं और साध्य को प्राप्त करते हैं। अत: सभी प्रणय काव्यों में प्रेमपीर एवं तज्जनित उल्लास की अभिव्यक्ति है।

हिन्दी के अन्य प्रेमाख्याओं की तरह आलोच्य रचना में भी नखशिख वर्णन से भावोद्दीपन का कार्य किया गया है। विवाहपूर्व के अनुराग का चित्रण द्रष्टव्य है जिसमें नायिका की माँग, नेत्र, अलकावलि, नासिका, ग्रीवा, नाभि, नितम्ब, एवं कुच आदि का अभिराम चित्रण किया गया है। एक दो उदाहरण द्रष्टव्य है।

कटाक्ष—

येते पर नैननि के वानि, काजर परस देत जब आंन।
करि सुभाव त्योंरी सौं तानत, तीन लोक मारत ज्यौ जानत॥

भुजा, कटि व कुच—

जुगल भुजा म्रिनाल है, कुच जोबन फल आहिं।
रोमावल नागिन निकट, गहत डरत चित ताहि॥

संयोगपक्ष—

आलोच्य काव्य में मुख्यत: वियोग पक्ष का ही चित्रण है। काव्य के अन्त में संयोग का स्फुट चित्रण है। निम्न पद्य द्रष्टव्य है जिसमें रानी कामलता एवं राजा रसाल का संयोग चित्रण है।

काम कलोल करत दिन रैंन, पल पल छिन छिन वीतत चैनंन।
नैकुं न रही विरह की ब्याध, औषध पायौं भई समाध॥

इस प्रकार हम देखते है कि 62 छन्द-निबद्ध आलोच्य रचना में प्रेम-पल्लवन चित्र संदर्शन के माध्यम से निदर्शित है। कवि का मानना है कि दोषपूर्ण पूर्वाग्रह का परिहार कर ऐसी कथाओं से मानव को सर्वगुण सम्पन्न एवं जागृत बनाया जा सकता है।

चौपाई ॥ १ ॥

प्रर्थम सुमिरत हौं करतार, जिन चितर्‌यौ यहु सब सैंसार।
कैसे कैसे चित्र बनाये, देषत चित्र चितेरा पाये॥

चौपाई

अनगन चित्रे चित्र अपार, देषौ चित्रकार अधिकार।
येक चित्र दोई ठांवनि कीनौं, चित्र-चित्र न्यारौ रंग दीनौं।।

चौपाई अर्द्धाली

अैसौ चित्र मुहंमद रच्यौ। भयौ विचत्र पंथि उहि पच्यौ॥

दोहा ॥ १ ॥

सो बिचत्र कबि जान कहि, नबी नांव जिहि चाइ।
चित्र मुहंमद आरसी, चित्रकार परसाइ॥

चौपाई ॥ २ ॥

कहत जान चित मै यौं आई। चित्रौं कथा सुलप यह पाई।
चित्रकार चित बुधि दी जैसी। मै यहु चित्र दिषाई तैसी॥

चौपाई

यहु लघु चित्र कियौ है जांन, चित्रत नांहिं लटैं ज्यों पान।
रसना हूं नाहि न अरसावै, चित्रभेद हौंसनि सौंगावै॥

चौपाई अर्द्धाली

नीर विदूषन कौ जौ लावैहु। तौ या चित्रहिं धोइ बहावहु॥

दोहा ॥ २ ॥

प्रान नहीं वुहिं चित्र मैं; तिंह पूछत करतार।
जान कहै यह चित्र मैं; प्रान उकति ब्यौहारि॥

चौपाई॥ ३॥

राजा येक सुन्यौ हम काननं, रसना लागी ताहि बषानंनं।
कहित ताकौ नांव रसाल। सेव करहिं निस दिन भोपाल॥

चौपाई

आपुन रहत राव जिहिं ठांव, हंसपुरी है ताकौ नांव।
सेवत चेरी चेर अनेक, बनिता सरस येक ते येक॥

दोहा॥ ३॥

बनि आये हैं राई कौं, राज तेज ये दोइ।
हंसपुरी मैं पाईये, जो मन इंछ्या होइ॥

चौपाई॥ ४॥

ताकै येक बडौ परधांन, उंहिं समान को नाहिन आनं।
ताकौ नाव धर्‌यौ बुधवंत, ग्यांनी लोचन आहि अनंत॥

चौपाई

जबहि तंत्र कौ भेदु उचारै, पंडित कौ पंडित करि डारै।
बैठति जबहिं चतेरनि मांहिं, चित्रकार सब भिदरै जाई॥

चौपाई अर्द्धाली

अैसे चित्रत चित्र अमोल। अचिरज नांहि उठि तजौ बोल॥

दोहा॥ ५॥

जे गुन-पंडित चाहिये, ते सब हैं बुधिवंति।
अस्तुति वोरनि आई है, ग्यांन समुद्र अनंत॥

चौपाई॥ ५॥

येक रैंन सुष निंद्रा मांही, सोवत राव ढरी परछाहीं।
चेरा चेरी चाचर करिहैं, डरत नहीं धौराहर बरि हैं॥

चौपाई

लहैं सोच उपज्यौ परधान, सोवत राव जगायौ आन।
जाग परतहीं राइ रिसायौ, लै करवा़र हनन कौं धायौ॥

चौपाई अर्द्धाली

आगै भाजत अग्याकारी, पाछै राइ देत बहु गारी॥

दोहा॥ ५॥

भाई नाती मीत सब, बीच परे हैं आंन।
कहा करत हौ राइ जू, कौंन दोस परधांनं॥

चौपाई॥ ६॥

जौं तुम मेरे नाती भाई, बीच परहु तौ राम दुहाई।
जौलौं याकौं नाहिन मारौं, काहू भांति न रोस बिसारौं॥

चौपाई

हौं देषत, हौं सुपनौ जैसौ, काहू अब लौं तक्यौ न अैसौ।
मानहु येक कनक कौ धाम, तहां काम की मूरति बांम॥

चौपाई अर्द्धाली

हौं उहु मिलि बैठे परजंक। हंसि हंसि भरि हैं अंक निसंक।।

दोहा॥ ६॥

कहा सदन पलिका कहा, कहां छबीली नारि।
हाइ हाइ कैसैं लहौं, बहुर्‌यौ वह ब्यौहार॥

चौपाई॥ ७॥

पल पल मांहिं झगा गहि फारत, लै लै पगिया भौं पर मारत।
बैर कियौ है अग्याकारी, हांती कीनी प्रान अधारी॥

चौपाई

सुनी बात जब लह परधांन, कहि पठ्यौ दीजै ज्यो दांन।
जैसी सपुनैं निरषी होइ, वैसी चित्र दिषाऊं सोई॥

चौपाई अर्द्धाली

राजे सुनत दयौ ज्यों-दांन। निकट आई बोल्यौ परधांन॥

दोहा॥ ७॥

हौं सेवक तुम्हं स्वाम हौ, वह धौं मेरी मात।
छबि कौ सब बरनन करौ, राषौं कछू न बात॥

चौपाई॥ ८॥

परथम माग षरग की धार, स्याम जलद बिदुति चंमंकार।
गगन पंथ कैं किरन पतंग, सोहत भरी सिंदूर सुरंग॥

चौपाई

कहा करौं बारन कौ बरनंन। अतिकारे लांबे लौं चरनन।
ससि मुष अलिकैं नागिन जॉन, सुधा पियास लगी है आंन॥

चौपाई अर्द्धाली

पुहप गूंढ कीनी निस मावस, चपला माग कहत रिति पावसं॥

दोहा॥ ८॥

मांग-धार, नागिन-अलिक, कैसैं होत बंचाव।
कै वै डसि हैं घेरिकैं, कै, वहु करि है घाव॥

चौपाई॥ ९॥

मनहु लिलाट द्वैज-ससि सोहत, भौहैं नारि धनुष कौं दोहत।
नयन बान बिनु वह नहिं मारत, ये येहूं घाइल करि डारत॥

चौपाई

येते पर नैंननि के बानि, काजर परस देत जब आंन।
करि सुभाव त्योंरी सौं तानत, तीन लोक मारत ज्यौ जानत॥

चौपाई अर्द्धाली

सेत असेत लये अरुनाई। नैंन किधौं त्रिबैनी पाई॥

दोहा॥ ९॥

नैंननि में तीरथ अनत, नैना जाती जात।
जो निरषत सो जान कहि, नैन नीर मैं न्हात॥

चौपाई॥ १०॥

नासक लौंग करत है टौंना, चंपकली मैं अली सिलौना।
झिलकत क्रांति कपोल सुहावै। द्रपन ज्यौं प्रतिबिंब दिषरावै।।

चौपाई

अधर सधर अंब्रित लै धरे, स्त्रवन सीप मुकताहल भरे।
ठोडी कूप रूप गहि डारै, लै लै लेजू अलक निकारै॥

चौपाई अर्द्धाली

गरौ सु ढारत क्यौ ह्वै नेरैं। गरैं परी चिंता अति मेरैं॥

दोहा॥ १०॥

जुगल भुजा म्रिनाल है, कुच, जोबन-फल आहिं।
रोमावल नागिन निकट, गहत डरत चित ताहि॥

चौपाई॥ ११॥

नाभ कुंभ कल धूत बिराजै, कै जल के सी भौंरी छाजे।
हार नितंभ महा कटि छीनी, टूटन भर छुद्रावल लीनी॥

चौपाई

जांघैं कहूं किरंभा खंभ, रूप अनूप किरंभ अचंभ।
चरन कंवल जब रहंस उचावै, हंसराज गजराज लजावै॥

चौपाई अर्द्धाली

जब आपुन कौं बानिक बानैं, ये बानक (बीतब) कोऊ कहा बखानै॥

दोहा॥ ११॥

कबहूं राव अचेत ह्वै कबहूं चेतत आप।
पल पल गिरि गिरि जात है, करि करि विरह विलाप॥

चौपाई॥ १२॥

राव रूप कौ कियौ बषान, तैसो चित्र दयो परधान।
रीझायौ चित्र देष कैं राव, सपने को सब लयौ सुभाव॥

चौपाई

फिर फिर ज्यों ज्यों चित्रहिं जोवै। त्यों त्यों अंसुवनि सौं कर धौवै।
सुधि बुधि सब राजा बिसरानी। चित्रहिं कहत बोल मुख बानी॥

चौपाई अर्द्धाली

काहे गही हहा चुपचाप। जारत मोहि बिरह की ताप॥

दोहा॥ १२॥

चिहुट्यो चित, अचित्र सौं, चितय रह्यो चषि खोलल।
बोलै बोल्यौई करत, बोलत आनंन बोल॥

चौपाई ॥ १३॥

जब ते नेहु विरह पहिचानौ, बिसर्‌यो कुटंब ईठ बिसुरानौ।
अैसे भये पेमु झकझोरे। बिसर गये हाथी पुनि घोरे॥

चौपाई

विरहु अगनि यौ नबी ऊचारै, मीत बिना सम ज्योति जारै।
और सुरत कछु रही न तन में, मूरत बहै रही भिदि मन मैं॥

चौपाई अर्द्धाली

मनहु चित्र गुर मूरति सोहन। जामैं सूझत है मन· मोहन।।

दोहा॥ १३॥

नैन विमल जिहि जान कहि, सूझत नीके ताहि।
यह चित्र धौ आरसी, चित्रकार की आहि॥

चौपाई॥ १४॥

जब कछु चेत भई चितुराई, तबहि कह्यौ परधान बुलाइ।
मंदिर मारग मांहि संवारै, बैठे पंथी पंथ निहारै॥

चौपाई

चित्र दिखावौ जो उत आवै, जिनको पंथ लालकैं लावै।
धाम रच्यौ परधान उमंग, राजा गयो चित्र लै संग॥

चौपाई अर्द्धाली

रुदन करत राजा गिर जाइ। लै है तब परधान ऊँचाई॥

दोहा ॥ १४॥

पंथी चित्र तू देषि है, धीर न दै है कोइ।
यहै कहत हैं राइ जू, मानस जरम न होइ॥

चौपाई॥ १५॥

रोवत राव न पावत प्यारी, भयौ आंधरौ बिना ऊज्यारी।
कहि कहि राव यहै मुष रोवत, कहि जागि पर्‌यौ हौ सौवत।।

चौपाई

जौ परधान स्रवन है टेरे, कत उण्घरे बौरे द्रिग मेरे।
कान बोल दयो अग्याकारी, कत बोली रसना हतियारी॥

चौपाई अर्द्धाली

उघर परै सो नैन अभागे, कहि धौं कहा लह्यौ सुष जागे॥

दोहा॥ १५॥

बाती ज्यौं छाती जरत, दीपग ताती सांस।
होत झगा फनूस पर, सोई पांसुरी मास॥

चौपाई॥ १६॥

बहुत द्यौंस असुवनिहिं ढारत, प्यारी प्यारी गये पुकारत।
एक द्यौंस पंथी इक आयौ, राव चित्र ताकौं दिखरायौ॥

चौपाई

पंथी चित्रहिं देख बषानत, याकौं हम नीकै पहिचानत।
सुंदरपुरी सुंदरी आहि, कामलता भाषत है वाहि॥

चौपाई अर्द्धाली

वहै राज करि है ऊहि ठांव, मात तात गये जम कैं गांव॥

दोहा॥ १६॥

जौ हौं रसना सेष पै, करि हौ मांगि बषानि।
छवि अस्तुति कवि जान कहि, रहि है सेष निदान॥

चौपाई॥ १७॥

येक षोरि बाकी छबि माहिं, पुरुष नांव मुष आनत नाहिं।
ब्याह नांव जौ कोऊ ऊचारै, मारै जारै देस निकारै॥

चौपाई

रूप कह्यौ पंथी कछु जानत, किह औगुन मन पुरुष न आनत।
पंथी कह्यो न जानत काहे, सुनहु बात तुमह जाहि ऊमाहे॥

चौपाई अर्द्धाली

मंदिर ढिंगु उपवन हौ भारी, झांकत तहां झरौषै नारी॥

दोहा॥ १७॥

येक द्यौंस उंहिं बाग मैं, हुतासन भभकाइ।
कहूं विरष कोऊ बच्यौ, डारे बहुत जराइ॥

चौपाई॥ १८॥

येक रूंष अंगज हे मोर, लागी आंच जाइ उहि ठौर।
सेवते उड्यो कलापी छाडि (जिय डरु) मिटी हेतु की आडि॥

चौपाई

जरी कलाप न लाये ध्यांन, नैंक न करी हुतासन कांन।
देषि कह्यो उनि जीवन मूरी, अंत पुरुष तें परत न पूरी॥

चौपाई अर्द्धाली

अंगज नारि तजे तजि लाजि, अपनौ जीव बचायौ भाजि॥

दोहा॥ १८॥

यहै नेमु मन मैं कियो, जौ लौ घट में सांस।
मरम लह्यौ अब जरम में, पुरुष न आनौं पास॥

चौपाई॥ १९॥

पंथी हौं तेरे पग परिहौं, तू गुर हूं सिष तोतैं तरिहौं।
मरब दरब, मैं तुम पर वारौं, जौ अपुनौ मन-हरन निहारौं॥

चौपाई

ह हा मोहि लै मारग लावहु, किह औगुन कौ भेदु बतावहु।
तुम्हहौ गुर सब बात संपूर, नैसक करहुज मन का दूर॥

चौपाई अर्द्धाली

पंथ गह्यौ पंथी पंथ लाइ। पंथी भये सेवक पुनि राइ।।

दोहा॥ १९॥

सुंदरपुरी कैं ध्यान मैं, चले राइ परधांन।
इक बन छाड़त चौंपसौं, पहुंचत हैं बन आंनं॥

चौपाई॥ २०॥

बहुत द्यौस निस चलत बिहाई, सुंदरपुरी जबहिं डिठ आई।
तक्यौ गोचरैं उपवन भारी, गये राइ पुनि अग्याकारी॥

चौपाई

तब परधान कह्यौ सुनि राव, केतक दिन इत धारहु पाव।
आइस देहु नगर में जाइ। कछुक उपाव बनाऊं राइ॥

चौपाई अर्द्धाली

जब तुम्ह उनसौं देहुं मिलाइ। वा दिन की लज्या तब जाइ॥

दोहा॥ २०॥

चित्रकार कौ साज सजि, नगर गयो परधांन।
तहां जाइ ठाढौ भयौ, जहां राज-असथान॥

चौपाई॥ २१॥

ये है, कहत ठाढौ परधांन, मोसो नांहिं चितेरा आंन।
कांन, सुनौ सो, चित्र बनाऊं, देषैं बिना अैंन दिषराऊं॥

चौपाई

पंछी उडत गिगन डिठ आवैं, वैसे ही हम चित्र दिषावैं।
पसु धावत जो वन मैं देषौं, चित्रन मैं हौं उनहिं बसेषौं॥

चौपाई अर्द्धाली

निरषौ पैरत पानी मांहि। चित्रन मैं कछु छाडत नांहिं॥

दोहा॥ २१॥

चित्रकार तौ दूसरौ, मो संम ना जग मांहिं।
चित्र हमोरो जोक मूं, बोलत अचिरज नांहिं॥

चौपाई॥ २२॥

कामलता यहु सुन्यौ बषांन, अैसैं कह्यौ निकटि उहि आन।
चित्रहु येक हमारौ सदन, जाकौं देषि विमोहत मदन॥

चौपाई

चित्रकार चितही यह चाहि, सदनहिं चित्रन गयौ उमाहि।
भांति-भांति के चित्र बनाये, भाव नये चितु तें उपजाये॥

चौपाई उर्द्धाली

महल येक चित्र्यौ चितु चोखैं। बैठौं राइ रसांल झरोखैं॥

दोहा॥ २२॥

महल तरैं अति संघन बंन, चित्र्यौ उकत बनाइ।
अनगन पंछी पसु, लिखे चितवत बैठौ राइ॥

चौपाई॥ २३॥

सलिता येक कतहु तें आई, बन के रूष उषारत अंधाई।
हरनी-हरन और द्वै छौनें, परे, घेर जल लहत न गौनें॥

चौपाई

हरनी कूदि-फांदि कैं भाजी, सावक हरन तजत नहीं लाजी।
म्रिग और सावक दोऊ बहे, राजा देषत-देषत रहे॥

चौपाई अर्द्धाली

सौंह करी राजै जिय माहिं, अपनै ढिंगु तिय आनहुं नाहिं।।

दोहा॥ २३॥

जबहिं चित्र पूरौ भयौ, देषन आई नारि।
लयौ चितेरा बोलिकैं, करिधौ चित्र-विचार॥

चौपाई॥ २४॥

चित्र देषि पूछत है नारि, चित्रकार सब देहु बिचार।
जब देषत ये आई बाल, रीझी निरषत राइ रसाल॥

चौपाई

चित्रकार कहिद्यौं यहु भाव, अति सुनिबै कौ बाढ्यौ चाव।
चित्रकार जो उकति बनाई, कामलता आगैं प्रगटाई॥

चौपाई अर्द्धाली

सुनत बात रानी भरमानी। हम दहुवन की येक कहानी॥

दोहा॥ २४॥

जिहं औगुन छौड्यौ पुरिष तिहु औगुन उनि नार।
हम उनमैं नीकैं बनैं, जौ जोरै करतार॥

चौपाई॥ २५॥

फिरि फिरि, चित्रहिं चितवत नारी, पैमु आइ बिघुरयौ तन भारी।
बावर भई सदन मैं डोलत, चाहत चित्र नैकु मुष बोलत॥

चौपाई

नैक नैन करि सैन जनावहु, दै दै बाई कहा जरावहु।
जो तुम्ह पग धारे घर मेरैं। षेलहुं हंसहु नैकु ह्वै नेरैं॥

चौपाई अर्द्धाली

कामलता नित करत विलाप। जारत तनहि पैंमु की ताप॥

दोहा॥ २५॥

जोई जाकैं मन बसै, वहु वाकै मन माहिं।
यौं न होत जौं जगत मैं, विरही जीवत नाँहिं॥

चौपाई॥ २६॥

सोचत नारि जांव किहं ठांव, जानत नांहिं जु याही गांव।
गुर बिन नांहिं मिलत भौ तारन, निकट आहि पैं बिकट बिहांरन॥

चौपाई

प्रान अबूझ, अबूझ न बूझै, नैन असूझ असूझन सूझै।
चित्रकार टेर्‌यौ गुर जांन, जिनवहु करैज मनका हान॥

चौपाई अर्द्धाली

सावधान ह्वै गुर करि धाऊं। जागैं भाग लाल जिन पाऊँ॥

दोहा॥ २६॥

चित्रकार चित मैं हरिष, कीनौ जाइ जुहार।
पैमु तई लज्या गई, निकट बुलायौ नार॥

चौपाई॥ २७॥

हरनी हरन राव म्रिग छौंना, चितर्‌यौ चित्र कियौ किधौं टौंना।
भूष प्यास पुनि नींद बिसारी, होइ न चित्र, चित्र करि डारी॥

चौपाई

चित्रन होइ आहि चित-चोर, चितवत नांहिं अंघाऊं वोर।
चित्र्यौ चित्र पीय चितु माहिं, निकसि निकसि आंसू ढरि जाहिं॥

चौपाई अर्द्धाली

इहं डरु अंसुवा देत गिराइ। जिन घट रहैं चित्र गिरि जाइ॥

दोहा॥ २७॥

घंमडि उमडि छतियां जलद, नैना बूंदि बरषाहिं।
पानिप पिय छाई चषिन, अंसुंवा कहां समाहिं॥

चौपाई॥ २८॥

सुनत बात फूल्यौ परधांन, चाहत प्रांन सु आयौ पांन।
सांची पीत, तकी जब नारी, भेद कह्यौ सब अग्याकारी॥

चौपाई

कामलता अति हीं हरषाई, येक पीत तें भई सवाई।
बहु फुनि चाहति, जाकौं चहिये, दई दयाल भये बहु लहिये॥

चौपाई अर्द्धाली

अब प्रधान गहर जिन लावहु। जाइ राइ अपुनैं लै आवहु॥

दोहा

चरन चलाये चपल अति, चितु में बाढ्यौ चाव।
सकल बात चुनि चुनि कही, सुनि सुनि फूल्यौ राव॥

चौपाई

कामलता किंकर सभ टेरे, सनमुष जाहु जु सेवक मेरे।
हंसपुरी कौ आयौ राव, लै आवहु ताकौं गहि पाव॥

चौपाई

हैदल गैदल पैदल आये, सबै राज-वंदन कौं धाये।
बात कहत राजा प्रधान, ठाडे भये तबहिं ये आन॥

चौपाई अर्द्धाली

भली भई तुम्ह आये राव। अब किरपा के धारहु पाव॥

दोहा॥ २९॥

घर राये दुदंभ गहर, चाइ बढ्यौ चितुराइ।
आन बिराज्यौ महल मैं, फूल्यौ आंगन माइ॥

चौपाई॥ ३०॥

बिप्र बुलाय दिषायौ साहौ, यहै मुहूरत करहु उछाहौ।
सुदिन सुघरी महा सुमुहूरत, जुर्‍यौ संजोग सरस दोऊ मूरति॥

चौपाई

पंडित वेद पढै अनुरागैं, गांठि जोरि ठाढे किये आगैं।
दीपक कोटक आन जराये, फेरे दये बियौग बहाये॥

चौपाई अर्द्धाली

अगिन चहूंधा आप फिरायौ। घेरौ करिकैं बिरहु जरायौ॥

दोहा॥ ३०॥

सावधान ह्वै ध्यान धरि, छाडे आन विचार।
मानस केतक बात है, क्रिपा करै करतार॥

चौपाई॥ ३१॥

काम-कलोल करत दिन रैंन, पल पल छिन छिन बीतत चैंन।
नैंकु न रही, बिरह की व्याधि, औषध पायौं भई समाधी॥

चौपाई

हंसपुरी पुनि सुंदर गांव, राइ दुहाई दोनों ठांव।
जौ लौं जिये मेदनी माहिं, पलक-लगन हूं बिछुरे नाहिं॥

चौपाई अर्द्धाली

सावधान ह्वै कैं जौ धाये। पैम प्रसाद साच फल पाये॥

दोहा

सोलह सै अठहंतर, कथा कथी कवि जान।
षोर बिषोरहु भूलि जिन, अनबन बांचहु बांन॥

इत कामलता की कथा संपूरन भई संवत् १७७८ मिति कातग सुदी-९ बिसपतिवार दसतषत फतेहचंद ताराचंद का डीडवानिया, पोथी फतेहचंद कै घर की॥

कथा – सीलवंती की

सारांश :

गुणवान् जौहरी अपनी रूपवती पत्नी सीलवन्ती को शीघ्र लौटने का आश्वासन देकर व्यापार हेतु नगर से बाहर जाता है। वियोग से कातर सच्चरित्रा सीलवन्ती मन बहलाने के लिए घर की खिड़की में खड़ी हो जाती है। खिड़की के नीचे खड़ा बाजदार सीलवन्ती को देखता है और उसके अनुपम सौंदर्य पर मुग्ध एवम् कामातुर होकर मूर्च्छित हो जाता है। काम से अत्यन्त पीड़ित वह चेट सीलवन्ती को प्राप्त करने के लिए व्यग्र हो उठता है। इस कार्य के लिए प्रलोभन देकर वह दूती को तैयार करता है। दूती सुनारिन और रंगरेजिन द्वारा सीलवन्ती के समक्ष बाजदार की आसक्ति उसके प्रति प्रकट कराती है, किन्तु पतिव्रता सीलवन्ती क्रोधित होकर उन्हें मार भगाती है। बाजदार स्वार्थ सिद्ध न होने से अपमानित, बदले की भावना से सीलवन्ती के चरित्र को कलंकित करने की युक्ति सोचता है। वह बाजार से तोते के दो बच्चे लाकर उन्हें संस्कृत में दो वाक्य रटाता है– ''सीलवन्ती की पलिका पर परपुरुष और हम कुछ नहीं कहते, समझदार समझ लेते हैं।''

कालान्तर में जौहरी के लौटने पर बाजदार उन तोतों को उसे भेंट करता है। एक दिन जौहरी के पास कुछ संस्कृतज्ञ आते हैं। जौहरी उनकी आवभगत करता है, तभी वे पक्षी संस्कृत में बोलने लगते हैं। हतप्रभ पण्डित जौहरी को पक्षियों की बात बताते हैं, जिसे सुनकर जौहरी क्रोधतिरेक के वशीभूत हो सीलवन्ती के वध का आदेश दे देता है। भयभीत सीलवंती वधिकों से एक बार जौहरी से मिलाने का आग्रह करती है। वह पति से उसकी अनुपस्थिति में घटित समस्त वृत्तान्त बताती है और विश्वास दिलाती है कि यह सब उसी बाजदार की चाल है। ये पक्षी भी उसी के पढ़ाए हुए हैं। जौहरी दूती सुनारिन और रंगरेजिन को तत्काल बुलाता है और आतंकित करके सच्चाई ज्ञात करता है। तत्पश्चात् उन्हें लेकर राजा के पास जाता है। राजा बाजदार को बुलाकर पक्षियों को झूठ पढ़ाने का कारण पूछता है। अब बाजदार एक और झूठ बोलता है कि उसने स्वयं परपुरुष को सीलवन्ती के साथ देखा है, तो वह तुरन्त उसकी आँखें निकाल देता है। तत्पश्चात् दूती आदि की भी आँखें निकलवाकर उन्हें गधे पर चढ़ाकर नगर में घुमाने का आदेश देता है। साथ ही घोषणा करता है कि, ''जो भी व्यक्ति पर-स्त्री के प्रति कुदृष्टि रखे, उसका मुँह काला करके गधे पर बैठा कर नगर की परिक्रमा कराई जाए।''

कवि जॉन द्वारा संवत् 1777 में रचित यह कथा नायिका सीलवन्ती के सच्चरित्र, राजा के उत्तम न्याय, पर-स्त्री-आकांक्षी पुरुष के कुचक्र और उसके दु:खद अन्त को दर्शाती है। यह कथा चारित्रिक गुणों को प्रारम्भ से ही बल देती है। कवि शील और रूप के महत्त्व को बताता हुआ तुलना में शील की महत्ता को श्रेष्ठ बताता है। उसकी कथा-नायिका, रूप और शील दोनों ही गुणों से सम्पन्न है। वह अपने पति की प्रिया भी है। पति अर्थोपार्जन के लिए विदेश गमन करता है और उसे साथ नहीं ले जाता। यह पति जौहरी की अर्थोपार्जन की उत्कट अभिलाषा और कुल-परिवार की तथाकथित मर्यादा की सीमा को स्पष्ट करता है। परिस्थितिजन्य विवशता को भी इसका कारण माना जा सकता है। रचना में पति के विरह में दग्ध नायिका सीलवन्ती की दशा का सजीव चित्रण हुआ है। वियोग से दग्ध नायिका का घर की खिड़की पर खड़ा होना अपने प्रिय की राह देखना इंगित करता है। किन्तु उसका इस प्रकार खड़ा होना उसके लिए अपराध हो जाता है। खिड़की के नीचे खड़ा बाजदार उसके रूप-सौंदर्य को देखकर कामातुर हो उठता है। वह उसे येन-केन-प्रकारेण प्राप्त करने के लिए लालायित हो उठता है। उसकी लालसा की पूर्ति के लिए दूती आदि का नायिका के पास जाना नारी-व्यक्तित्व के एक पक्ष को उजागर करता है कि नारी ही नारी की शत्रु है। संभवत: यह असामान्य व्यवहार नारी के प्रति नारी की ईर्ष्यालु भावना का परिचायक है। सुनारिन और रंगरेजिन द्वारा श्रेष्ठ गहने और कपड़े बनवाने का नायिका से आग्रह, नारी का कपड़े और गहने के प्रति सहज आकर्षण की भावना को प्रकट करता हुआ प्रेम के आयाम श्रृंगार को इंगित करता है। इधर बाजदार का दुस्साहस उसकी कुत्सित मनोवृत्ति, चारित्रिक दुर्बलता को प्रकट करता है। पतिव्रता नायिका क्रोधित होकर दूती आदि को घर से निकाल देती है, यहां नायिका का दृढ़ चरित्र और पति के प्रति पूर्ण निष्ठा एवं समर्थन प्रकट हुआ है। सीलवंती के चरित्र को कलंकित करने की यह कुत्सित योजना और बाजदार द्वारा बदला लेने की क्षुद्र भावना तो है ही, पुरुषत्व का अहंकार भी है। कथाकार ने इस घटनाचक्र में पुरुषत्व के अहं की ताकत को दर्शाने की भावना को उजागर किया है।

जौहरी नगर में लौटता है। सीलवन्ती उससे बाजदार का वृत्तान्त नहीं बताती है। पति से बात को छुपाना नायिका की आशंका है कि कहीं उसका पति उसकी बात सत्य न माने और उस पर संदेह करे। प्रस्तुत कथा में कवि ने जौहरी के लौटने के पश्चात् नारी-जीवन के दंश को अनेक रूपों में उभारा है। पण्डितों द्वारा तोतों के वाक्यों का अर्थ बताये जाने

पर क्रोधावेश में जौहरी का नायिका के वध का आदेश तो नारी-विवशता की पराकाष्ठा है। नायक का अपनी पत्नी को पक्षियों के कहने मात्र से अपराधी मानना, सत्यता को जाने बिना प्राणदण्ड देना, वर्षों से पत्नी को अधीनस्थ मानने वाले पुरुष का अतिरिक्त अभिमान और क्षिप्रकारिता तो है ही, उसकी अदूरदर्शिता और कदाचित् दीन-भावना भी। यह प्रकरण नायक की धीरोदात्तता आदि गुणों पर प्रश्नचिह्न लगाकर उसे अति साधारण पुरुष की श्रेणी में लाकर खड़ा कर देता है। यद्यपि कथाकार ने नायक के चरित्र को गरिमामय बनाने का पूरा अवसर दिया है और वह नायिका के अनुग्रह पर सत्यता का अन्वेषण करता है। तत्पश्चात् वह उन्हें राजा से दण्ड भी दिलवाता है। पर पति के अपमान का दंश तो सीलवन्ती को भुगतना ही पड़ता है। यद्यपि वह भी क्रूर और निर्भय यथार्थ को देखती हुई क्षमता एवं सीमा के साथ विविध चक्रों से जूझती अन्ततः निर्दोष सिद्ध हो जाती है।

इस कथा में राजा का अपराधियों की आँखें निकालना आदि दण्ड देना उत्तम न्याय के साथ स्त्री-स्वाभिमान की रक्षा के प्रति दृढ़ता को प्रकट करता है। वस्तुतः कवि कथाकार ने इस में सामाजिक कुरीति और चारित्रिक दृढ़ता को आधार बनाया है और संदेश दिया है कि बुरे कार्यों का हश्र बुरा होता है। वह अपने इस मंतव्य में सफल भी हुआ है।

कथा सीलवंती की बांधी

चौपई-१

आदि सुमिरिहौं येकंकार। अलख अगचोर अपरंमपार॥
कांन सुनत देखित भरि दिस्टि। पल मै सकल रची यह सिस्टि॥
येक भांति सब जगति न कीनौ। को निरगुन काहूं गुन दीनौ॥
जैसे रचे भये सब तैसे। कोऊ कैसे कोऊ कैसे॥
कोऊ बिरहनि काहू लीला। कोऊ सीलवंत कोऊ असीला॥

॥दोहा॥

को असती कोऊ सती, अलख रची संसार।
तैसी सोभा पाईये, जैसो ह्वै ब्यौहार॥

चौपई-२

दूजैं करिहौं नब तक्कलंम। सल्लाह अलैहि वसल्लम॥
जाकौ नाव महंमद कहिये। चरन सरन तें नरक न दहिये॥
दीरघ रोग मिटत है पाप। नैसंकु किये महंमद जाप॥
क्रिपा दिस्टि जौ करिहैं वोर। पल मैं कटिहैं पाप करोर॥
कहत जांन हौं त पापिस्ट। नैकु दया की देखहु दिस्ट॥

॥दोहा॥

नबी नाव तें जान कहि, पाप कस्ट गरि जाइ।
जैसैं सूरज देखिकैं, वोस पत्र झरि जाइ॥

चौपई-३

जोबन तिय छबि लगत अनूप। सील तिलक जानहु सब रूप॥
भूलि न रूप देखि मन मांहिं। सील सलिल जौ मुख पर नाहिं॥
चाहत कर्यौ कंत बिनु केल। वाकौ रूप आहि विषु बेल॥
जौ गर लगै असीला कपटी। मनहु बिसैली नागिन लपटी॥
सलिल सील मैं बूडक खैहै। लाल सुजस सोई पै पैहै॥

॥दोहा॥

कहत जान कबि लेहु सुनि, भाखत सांचौ बैंन।
सलिल सील पीये़ बिना, मिटत न तिस्ना मैन॥

चौपई-४

कथा पुरातन अैसैं सुनी। ये़क जौहरी हौ बडगुंनी॥
ताकैं सीलवं़त इक नार। रूपवं़त कीनी करतार॥
सील रूप दोऊ बन आये़। रस बसि करिकैं लाल रिझाये॥
रूपहिं देखि स्वा़द अभिलाष्यौ। तापर सील सलिल करि राख्यौ॥
जितंहिं लै चलत तितहीं चलिहै। या़ बल सौ ही मान दल मलिहै।

॥दोहा॥

कहत जान ते सुजन जन, तिनकौ य़है सुभाइ।
ज्यौं जिहि रंग पानी मिलै, ताही रंग ह्वै, जाइ॥

चौपई-५

रूप कहत हौं सबतें नीकौ। जा पर प्यार होत है पीकौ॥
मो पर होत लाल की भांवरि। मोपर होत नितौं नौछावरि॥
जाति य़तन मै मोकौ लहत न। ताहि पिया़ प्यारी करि गहत न॥
जामै नांहिं रूप की झांई। ते तिय़ काहे कौ जगु आंई॥
देखत मोह्नि होत चखि सांति। मोमै है करता की कांति॥

॥दोहा॥

जेते बानिक बानिहै, बनिता या़ संसार।
सेव़क आभूषन सकल, रूप भूप सिंगार॥

चौपई-६

सील कहत सुनि रूप बिचार। तोहि देखि राचत संसार॥
वा़मै तौ कछु अचरज नाहीं। तूं निरगुन पै गुन मो मांहीं।
मो बिनु घर-घर फिरिहि असीला। दमकी लेत देत हैं कीला॥
जामैं हौं न सील यौं बोलत। घर-घर रूप बिकावत डोलत॥
रेयै़ असीला रीझि जु रूप। देख तरैं बापरौ कूप॥

॥दोहा॥

नैन प्रान बिनु ना बनै, बड़ी बात हैं दोइ।
नारि वृहै कबि जान कहि, रूप सील घट सोई॥

चौपई-७

अवृधि सीलवृंती सौं कीना, बेग आइहौं धीरज दीना॥
चल्यौ जौहरी जौहर काज। बैठ्यो हित सौं जाइ जिहाज॥
सीलवत्ति रोवति दिन रैन। जिय कौ चैन न निद्रा नैन॥
अंसुवा ही नैनन में छाये। अंजन नीद जुगल बहि गए॥
रसना रसु पीवत पिय पीय। अवधि अधार जिवावति जीय॥

॥दोहा॥

पीटि मरत सिर सर्प ज्यों, बिनु पायें मनि जोति।
बिरहंनि बपरी क्यों जियृत, अवृधि अधार न होत।

चौपई-८

येक द्यौंस बिरहै बौराई। देखन पंथ झरोखैं आई॥
बाजदार ठाढ़ौ हौ तरै। कर पर बाजराइ कौ धरै॥
तक्यौ झरोखा सीस उचाइ। देखत वृोर पर्‌यौ मुरछाइ॥
सीलवृंति देखत अति लाजी। तत छिन छाडि झरोखा भाजी॥
जबहिं सुचेत कछू इक भयौ। बाजदार उति डेरा गयौ॥

॥दोहा॥

बहुत द्यौंस ठाढौ रह्यौ, बाजदार उत आइ।
बहुरि न कबहूं डिठि परी, कर मलि मलि पछिताइ॥

चौपई-९

बाजदार रोवृत ही चितवै। चितवृन वृहै झरोखा चितवै॥
रूप कूप चिंता कैं डार्‌यौ। बिदुति क्रांति कोप करि मार्‌यौ॥
आभूषन चंमकंन झंनकार। अंग-अंग जारे (जरि) होइ अंगार॥
भूषन देखैं भूख न प्यास। नींद तबि बिरहुनी की नास॥
चिंत मिंत की अति अनियारी। कहा सांग द्यौं कहां कटारी॥

॥दोहा॥

नैकु दुरायें ना दुरत, यहै पैंमु कौ काज।
पीति बरन अैंना (नैंना) अरुन, हरन नींद सुख लाज॥

चौपई-१०

बाजदार जब बहु दुःख पायौ। तब चित यहै उपाइ ऊपायौ।।
पठऊ दूती ज्यौं लै आवै। तिय कौ हठु कैसैं ठहरावै॥
पठई दैकैं कछू सुनारी। इन बातनि प्रगटहीं भारी॥
जाकौ यहै काज दिन राति। और न जानत दूसरि बात (बाति)।
भाषत बचंन मानहर डिढ हरता। मनहुं दूतहीं कौं की करता॥

॥दोहा॥

टौंना टांम न जानिहै, बानति अनगन बांन।
दूत बचन ·चितु चिहुंटिहै, घटत माननी मान॥

चौपई-११

सीलवंति ढिगु गई सुनारी। कियौ जुहार चौंप सौ भारी॥
सीलवंति की अग्या पाऊं। भांति-भांति गहनौ गढि लांऊ।
सीसफूल बेंदी नकबेसर। गढू देखि डिढ मिटै महेस्वुर॥
अैसौ गढिकें आनौं टीकौ। हेत ही मोहंत मन पी कौं॥
जाकौ हौं गढि दैहौ गहनौ। धंन धंन धंन तिंह धंन कौ लहिनौं॥

॥दोहा॥

बहु गहने गढि जांनिहौं, करत न आइ बखांन।
जब तुम देखहु तब भलहि, पावहु बुधि परवान।।

चौपई-१२

सीलवंत बोली सुनि नारी। हौं कंद्रप कुंदन करि डारी॥
नेहु नाहु कैं अैसैं तई। कंचंन तें अब कुंदन भई॥
नेहु गही हौं सुरति संन्यासनि। लै डारी बिरहा हुत्तासंनि॥
ये करती रति ना तन मांही। चाव रहत सुख चांवर नाहीं॥
गुंज बरंन मन भयौ हमारौ। अवधि अरुन बिरन तें कारौ॥

॥दोहा॥

नेहु अंग कुंदन कर्‌यौ, सुरति हुतासन ताइ।
बिरहु हुतासन अब सखी, मझारत ताहि झराइ॥

चौपई-१३

सुनंत बात मारयौ कर हिये, धन सुनार रोवति छल किये॥
अंग अंग तोहि बिरह यौं ताये। दाहे, मोहि बोलि कैं कह्यौ न काहे॥
बाजदार राजा की आहि। कहूं दिस्टि आई तूं ताहि॥
ता दिन कौ भरिहै बौरानौ। पियत न पानी खात न खांनौ॥
अब वा ऊपर क्रिपा कीजै। महाधरम सुख लीजै दीजै॥

॥दोहा॥

सीलवंति सुनि रिस भरी, ही पतिबरता नारि।
चुपरि निकारी धांम तें, दूती तिया सुनारि।

चौपई-१४

पाछैं गई नारि रंगरेज। सीलवंत सोवति ही सेज॥
जागि वोरि जब देख्यौ नारि। कीनौ तिय रंगरेज जुहारि॥
यहै कहत जौ बागौ पाऊं। नीकौ रंग आनि पहिराऊं॥
बरन बरन के रंग बनाऊं। रूप बढाऊं लाल रिझाऊं॥
अैसौ रंग कसूंभल भरिहौं। पति की पीति मजीठी करिहौं।

॥दोहा॥

अैसौ हौं पंचरंग रंगी, देखत रीझै पंच।
रचि रचि पचि पचि ढूंढिये, खोर न निकसै रंच॥

चौपई-१५

सीलवृंति बोली सुनि आली। चटक कसूंभै की है ठाली॥
हौं तौ रंगी लाल रंग गहिरौं। रहति सुरत कौ बागौ पहिरौं।।
बिरहु रैंन रैंनी करि डारी। निकस्यौ मो अंग अंग रंग भारी॥
रोवति रक्त गहर रंग अरुनं। कीनौं बिरहु पीति मुख बरुनं॥
चटक कसूंभ दोइ दिन नीकी। मटक पीति छिन होत न फीकी॥

॥दोहा॥

सीलवृंति कबि जान कहि, रंगी लाल कै रंग।
जौंलौं जीवें ना मिटे, पीति चटक अंग अंग॥

चौपई-१६

बोली तिया तबहिं रंगरेज। बाजदार हौं दीनी भेज॥
यहै कहत मो मरत जिवावहु। अपनै रंगहि रंग मिलावहु॥
तुम बिनु मोकौं कौन उबारत। नेहु बाज मन पंछी मारत॥
तेरे नैंन ममोल निकाज। तरफत है मेरौ मन बाज॥
सीलवृंति सुनि अधिक रिसाई। अंखिया कौंधा ज्यौ कौं धाई॥

॥दोहा॥

मारी अति रंगरेज घनि, रक्त चल्यौ अंग अंग।
चुपरत चेरी चौंप सौं, पानि रंगे सुठ रंग॥

चौपई-१७

सीलवृंत मारे पर दार। कत आंवन दी अैसी नार॥
जब पाछैं जौ दूती आई। घर मै पैठन नाहि न पाई॥
बाजदार यौं जियहि बिचारी। याकौं दोस लगाऊं भारी॥
इन दुःख दीनौ मोहि याकौं। तातें अधिक देऊ, दुख याकौं॥
बाजदार बधिकनि पैं धायौ। बचा दोइ सुवटा के लायौ॥

॥दोहा॥

सतमास लौं रैंन दिन, बीते बकत बकात।
संसक्रित भाषा पढे, तबंहिं कीर द्वै बात॥

चौपई-१८

येक कहत हौं रह्यौ निहार। सीलवंति पलिका परदार॥
दूजौ कहत न हम कछु कहैं। पंडित थोरै तें बहु लहैं।।
बनि आई उनपैं यहु भाषा। लागे दैंन झूठ हीं साखा।।
बरस द्यौंस धन रोइ बिहाये। जौंहर लये जौंहरी आये॥
भयौ परमसुख भैंटै प्यारैं। मिली सीलवंति दरस उजारैं॥

॥दोहा॥

गिरवर ज्यो गाढे चरन, डिगत न कंद्र पत्रास॥

चौपई-१९

बाजदार राखे लै कीर। कह्यौ लेहु जू ये द्वै हीर॥
तुम हीरा सागर तें लायो। द्वै अमोल हम इति हीं पायो॥
बोलन लगे सुहाये कान। दयौ जौंहरी बहुतैं दांन॥
संसक्रिति भाषा कौ भाव। जौ समझत तौ करत न चाव॥
बिनु समुझें कीनौं बहु प्यार। सबद सुनत जानत न बिचार॥

॥दोहा॥

येक द्यौंस पंडित बहुत, आये करन जुहार।
लै गर आये जौहरी, भेट्यौ अति करि प्यार॥

चौपई-२०

कीर लगे ताही बिच बोलन। पंडित सीस लगे तब डोलन॥
पंडित लग्यौ जौंहरी कान। कीर बचन कौ कर्‌यो बखांन॥
सुनत जौहरी अति परिजर्‌यौ। मतौ नारि मारन कौ कर्‌यौ॥
कह्यौ जाहु जिन आवहु छाड़ि। सीलवंति कौं आवहु गाड़ि॥
सेवक गये हनन कौ घर मै। देखत भई सीलवंति डर मैं॥

॥दोहा॥

सीलवंति सुनि बात सब, कह्यौ गहूं तुम पाइव़।
ये़क बार भरतार कौं, मेरैं ढिगु लै आव़॥

चौपई-२१

सेव़क आइ चरन लै रहे। बैंन सीलवंती के कहे॥
सुनत जौंहरी घर मैं आयौ। सीलवंति सब भेद बतायौ॥
बाजदार की बात बताई। अरु दूती की जाति लखाई॥
उन ये़ कीर दये़ तुम आंनि। काढ्यो चाहत है रिसु प्रान॥
पूछहु तुम पंडित कौं जाइ। संसक्रित्त मै द्वै हीं भाइ॥

॥दोहा॥

संसक्रिति पंडित कहैं, जौ है अति बिसतार।
दोइ सब्द ये़ जानिये़, हुवा कपटी ब्यौहार॥

चौपई-२२

पूछ्यौ जब पंडित कौं आइ। कह्यौ संसक्रित पार न पाई॥
ये़ जु दोइ हीं बोलत बैंन। या़ मै कछू कपट है अैंनं॥
तबंहिं सुनारी धन रंगरेज। जुगल बुलाई मानस भेज॥
जबंहिं बहुत अति त्रास दिखाई। पुरी बात सबहीं प्रगटाइ॥
लै संग गयौ जहां हौ राइ। बाजदार पुनि लयौ बुलाइ॥

॥दोहा॥

कहत राइ तैं कौंन गुंन, झूंठ पढाये़ कीर।
बिन देखी काहे कही, धिग तुव़ जरम अधीर॥

चौपई-२३

बाजदार बोल्यौ सुनि राइ। झूठ कहन कौ नांहिं सुभाइ॥
मैं इन अपनै नैंन निहारी। आनं पुरष संग याकी नारी॥
बाज हाथ तें लपक्यौ भारी। जबंहिं कह्यौ इन नैंन निहारी॥
दैकैं झपट आंख ली काढि। करता न्याव् कर्‌यौ करि गाढि॥
सांचौ न्याव् दई दिखरावै। जैसौ करै सु तैसौ पावै॥

॥दोहा॥

कहत जान सब जगु सुनहु, सील न छाडहु कोई।
कपट दिस्टि पर तिय् तकै, बाजदार ज्यौं होइ॥

चौपई-२४

न्याव् देखि राजैं भयौ चैन। धन करता भाख्यौ यहु बैंन॥
दूतिनिहूं की आंख कढाई। कारौ मुख करि ग्रधाब चढाई।।
भलें बिगूचे अैसे डाटे। कांन नाक तिहुंवनि के काटे॥
सांचु सील नाहीं घटि दोइ। सो अैसी बिधि काहि न होइ॥
बोलत झूठ नहीं मन लाजै। ते रासिभ चढ़ि क्यौं न बिराजैं।।

॥दोहा॥

जो चाहै पर तिय तकूं, खर चादूं भरतार।
सोई फिरि रासबै चढै, यहै रीति करतार॥

सोरह सै चौरासिये, दोइ द्यौंस करि खेदु।
भलै बखान्यौं जान कबि, सीलवंति कौ भेदु॥

इति कथा सीलवंती की संपूरन भई। संबत १७७७ मिति फागन सुदी 10 सनीसरवार।

पुहप-वरिषा

श्रीनगर के चौहानवंशीय सम्राट् भोपाल एवं पटरानी पार्वती सन्तानाभाव से दुःखी थे। दानपुण्यादि के फलस्वरूप उन्हें पुत्ररत्न की प्राप्ति होती है जिसका नाम पुरुषोत्तम रखा जाता है। पुरुषोत्तम अत्यधिक कुशाग्र बुद्धि का था। गुरु के द्वारा श्रवण मात्र से ही उसको शास्त्रज्ञान हो गया था। एक समय राज्य के सभागार में एक विचित्र बहुरंगी पक्षी आया जिसके सुवास से ही सारा सदन हर्षित हो गया। फलस्वरूप जाल डालकर पक्षी को पकड़ लिया गया। एक दिन उस विचित्र पक्षी ने राजकुमार पुरुषोत्तम को बताया कि वह प्रेमपुरी के राजा जगमन एवं रानी रूपनिधि की आत्मजा सुकेशी है। मेरे सौन्दर्य के बारे में कंचनपुरी के राजा उदयसिंह के पुत्र सुरपति को एक वृद्ध ने बताया। तभी से सुरपति मेरी विरहाग्नि में जल रहा है। अपने मित्र महानन्द के साथ वह मेरी खोज में निकल पड़ा। इसी बीच समुद्र में तूफ़ान आने के कारण महानन्द बह गया। एक दिन उसने वन में पलंग पर सोती हुई निरमलदे नामक युवती को देखा जो राक्षस की कैद में थी अतः उस राक्षस को मार डाला व सुन्दरी को साथ लेकर चतुरपुर की ओर चला वहां उसकी भेंट परमलदे से हुई वहां उसका मित्र महानन्द भी मिल गया। इसके पश्चात् पुष्पवाटिका में मेरी व सुरपति की भेंट हुई और हम दोनों एक दूसरे के प्रति आकर्षित हो गये। मेरी माता ने लोकलाज के डर से मुझे चिड़िया बना दिया। तब से निरन्तर अपने प्रिय की खोज में मैं वन वन भटक रही हूं। तत्पश्चात् पुरुषोत्तम ने सुकेशी (चिड़िया) को स्वसावत् अपने घर पर रखा और वह स्वयम् सुरपति के अन्वेषणार्थ जगह-जगह गया। प्रेमपुरी में सुकेशी को पाकर उसकी माता हर्षित हो उठती है। तत्पश्चात् सुकेशी एवम् सुरपति का विवाह हो जाता है। राजकुमार पुरुषोत्तम एवं निरमलदे तथा महानन्द एवम् परमलदे भी प्रणय बन्धन में बंध जाते हैं।

समीक्षा— मसनवियों के ढंग पर लिखित आलोच्य काव्यारम्भ में विधाता के अलावा मुहम्मद, अबूबक्र, उमर उसमान और अली आदि चारों मुस्लिम धर्मोपदेशकों का स्मरण किया गया है। तत्पश्चात् हांसी के पीर शेख मोहम्मद, हजरत मोहम्मद साहब, धर्मोपदेशक आजम साहब का स्मरण करते हुए उनसे अपेक्षा की गई है कि वे कृपाभाव बनाये रखें।

सम्राट् शाहजहां एवं स्वपूर्वजों का गान

सुनि वषान अब छात्रपति कौ, चिरंजीवु चगता कौ टीकौ।
साहिजहां साहिन कौ साह, जहांगीर सुत जगत पनाह॥

बादशाह शाहजहां के उमरावों में जान का पूर्वज आसिफखां भी था।

आसिफ षां थंभनिपति साही। अैसौ दीनौं ग्यांन इलाही॥

बादशाह के निधन के समय दौलतखां चौहान (क्यामखां का पोता) ने अपार कौशल एवं अद्भुत वीरता से कांगड़ा के उपद्रवियों का दमन कर राज्य को सुदृढ़ता प्रदान की। फलस्वरूप दौलत खान को बावन गांवों की हुकूमत देकर सम्मानित किया गया।

दौलतखां को बावनी। दै करिहौं समताहि॥

उपरोक्त तथ्य ऐतिहासिक दृष्टि से सत्य है।

काव्य का नामकरण–

नांव धरयौ वरिषा पुहप, पैं देखौ अधिकार।
कवहूं मुरझावत नहीं, वास अमिट सैंसार॥

जान की दृष्टि में पुष्पवर्षा नाम पूर्णतया सार्थक है क्योंकि वर्षण काल में सुमन कभी भी अपने गुण प्रभाव में न्यूनता प्राप्त नहीं करते। कथानक के तीनों नायक नायिकायें अन्त में अपना अभीष्ट प्राप्त कर सुमनवत् प्रफुल्लित हो जाते हैं।

काव्य का सृजन

शाहजहां के शासनकाल में संवत् 1685 वि. तदनुसार 1628 में इस काव्य का प्रणयन किया गया था। प्रतिलिपिकाल वि.सं. 1778 कार्तिक शुक्ला सप्तमी है।

सन सहंस सैंतीस मैं। कथा कथी यह जान॥[1]
संवत् सोलह सौ पच्चासी। मन सागर ते रंभ निकासी॥
प्रथम पंचमी सावन मास। कीन वरिषा पुहप हुलाष॥

सतरहि सै जु अठहंतरै, कातग सतमी जानं।
फतेहचंद सुदि मैं लिखी, ताराचंद सुतमान॥

अर्थात् फतहचंद ने विक्रम संवत् 1778 में यह प्रतिलिपि की।

छन्दोविधान— आलोच्य कृति में 174 दोहे व 172 चौपाईयां हैं अर्थात् रचनाविधान 346 छन्दों में निबद्ध है।

---

1. हिजरी सन् एक हजार सैंतीस में आलोच्य काव्य का प्रणयन किया गया।

परम्परागत वर्णन शैली— राजधानी श्रीनगर की सौन्दर्य-व्यञ्जना में दुर्ग, हाट, कूप, बावड़ियों के साथ-साथ पनघट का भी मनोहारि वर्णन है।

लाग्यौ रहत रैंन दिन पनघट, देखि ताहि बाढत है मन घट।
नारि चारि पानी कौ आबहिं, चार-चार सिंगार सुहावहिं॥

भरि गगरि जल घर कौ धावैं। नैन सेन यह बात लखावै।।

जैसैं ये गगरि भरि, बहु पानी इन मांहि।
तैसैं हम पानपु भरी, कंत समुझत नांहिं॥

तालाब बावड़ियों से जल भरकर सद्य गन्तव्य की ओर प्रयाण करती नवयौवनायें नेत्रसंकेतों से स्वरूप सखियों को कह जाती है कि लक्ष्य प्राप्ति के पश्चात् अब गृहगमन हो रहा है। नेत्र संकेतों से यह भी व्यंजित हो रहा है कि पूरित गगरियोंवत् हमारा शरीर भी यौवनसम्पूरित है। वस्तुत इस संसाररूपी पनघट में आत्मायें (नदियां) साध्य की अवाप्ति के पश्चात् पुनः परब्रह्म में विलीन हो जाती है। संभवतः ऐसा ही कुछ कवि संकेत करना चाहता है।

प्रकृति चित्रण— भांति भांति के कूप, तडाग, उपवन, विविध फूलों व फलों का बाहुल्य, चहचहाते पक्षी, नृत्यरत मयूर, कूजन करती कोयलें, पद्माकरों में प्रफुल्लित कमल, जल में क्रीडारत मछलियां आदि वैविध्य अंकन से प्रकृति में सजीवता साकार हो उठी है।

मारत हांकि कोकिला कारी, नाचत मोर उमंगनि भारी।
मैना पबई बोलत छाजैं, रूप मुनिईयां अधिक बिराजैं॥

नारंग दार्‌यौ दाख सुहाई, बहुत नासपाती मन भाई।
बिही जंभीरी केला सेव, मानस कहा विमोहै देव॥

पक्षीदूत संस्कृत एवं हिन्दी साहित्य में शुक का प्रेम सम्बन्ध संयोजन में महत्वपूर्ण स्थान है। संस्कृत के कादम्बरी, नैषध महाकाव्य, कथासरित्सागर आदि में विविध कथानकों के माध्यम से शुक की महत्वपूर्ण भूमिका निदर्शित है। जानकृत कथा कंवलावती में नायक के हाथ पर आसीन शुक मदननगर की राजकुमारी मदनाकलाकी पुत्री कंवलावती के रूप गुण की प्रशंसा करता है तथा नायक के हृदय में प्रेम के बीज डालकर चला जाता है। इसी तरह से आलोच्य कृति पुहुपवरिषा में भी राजकुमार पुरुषोत्तम की राज्यसभा में एक शुक आता है जो अपना परिचय प्रेमपुरी के शासक जगमन एवं रानी रूपनिधि की पुत्री सुकेशी

के रूप में देता है जिसे भाग्य ने पक्षी बना दिया है। पक्षी विस्तार से कंचनपुरी के राजा उदयसिंह के पुत्र सुरपति की कथा कहता है जो सुकेशी के वियोग में नानाविध कष्टों को समुत्तीर्ण करता है और अन्त में अपनी प्रेमिका को प्राप्त करता है।

अलौकिक घटनाओं का संयोजन— कथा कनकावती, कला-कलावती एवम् कथा पुहुपवरिषा में अलौकिक घटनाओं पर आधारित कथानक है-यथा सुकेशी एवम् अन्य नायिकाओं का अप्सरा कुल में जन्म होना; इन्द्रलोक के दृश्य एवं दैत्यादि से संघर्ष आदि अलौकिक घटनाओं से कथानक भरा हुआ है जो सूफी काव्यों की एक विशेषता है।

निष्कर्ष— डॉ. अशोककुमार मिश्र के अनुसार शाहजहांकालीन यह रचना मंझनकृत मधुमालती से काफी साम्य रखती है। मालती के स्थान पर सुकेशी, मनोहर के स्थान पर सुरपति, प्रेमा के स्थान पर निरमल तथा ताराचन्द के स्थान पर पुरुषोत्तम नामों की संरचना है। महानन्द एवम् परमलदे पात्रों के नूतन संयोजन से कथानक को नवीन रूप देने का प्रयास किया गया है किन्तु घटनायें व कथा प्रवाह मधुमालती वाला ही है। नखशिख, पनघट, बारहमासा आदि के वर्णन तथा सामाजिक, धार्मिक व राजनैतिक मान्यताओं के स्फुट निर्देश से कृति का महत्व सांस्कृतिक अध्ययन की दृष्टि से भी हो सकता है।

कथा पुहप-बरिषा-कवि जान क्रित

चौपई-1

सुमिरौ अलख निरंजन आद। मुख रसना कौ यह़ै सवा़द॥
तौलौं जपिये जौलौं जीजै। नांव अलख अंब्रित सौ पीजै॥
बिधि तजि करत और की चाहि। छांडि सुधा विषु पीव़त आहि।
जाकैं मुख औ घट मैं पीउ। धंन धंन जीह और धंन जीउ॥
रैंन दिना सुमिरन कैं ध्या़न। धंन धंन है सो उत्तम प्रांन॥

दोहा-1

सुमिरन कौ सुमिरन करहु, भूल न देहु भुलाइ।
या़ही तें सुख-सुख लहौ; दुख कौ दुख न दुखाइ॥

चौपई-2

करता देखहु धौं दुखियारे। कौंन कौंन गहि गहि कर तारे॥
कैसे दुखित सुखी करि डारे। कैसे बूडक षात निकारे॥

कहा कहूं हौं रसना ये़क। तऊ न आवै़ होंहि अनेक।।
हौं घटि [illegible]धि कछु कहत न आवै़। भीत दौर कैसैं को धावै़॥

चौपई अर्द्धाली

पंख पपीलक कै जौ आवहि। कहां आपकौं नभु पुंहचावै़हि॥

दोहा-2

जे पुरषा आगैं भये़; अलख गये़ ते भाख।
अब हैं पाछैं होंहिगे; य़हे देहिंगे साख॥

चौपई-3

दूजैं नाव़ मुहंमद गाऊं। ताकी दया़ परमपद पाऊं॥
नबी नबी निस बासुर करिहै। ताकौ अंग नरक ना जरिहै॥

यहै नैमु कीयौ जिय जांन। नाव मुहंम्मद, भूल न आंन॥
मो घट सेव गंध बहार। जीवत नाव रसूल अधार॥

चौपई अर्द्धाली

यहै बात है ज्यांवन जी की। कीने हैं हम उंमति नबी की॥

दोहा-3

जिहं तारन कौं जान कहि; नबी मुहंमद आहि।
ताहि न डरु सागर नरक; दैहै वोर निबाहि॥

चौपई-4

अबाबकर उम्मर उसमांन। अली चतुर ये करि या ज्ञान।
जाकौ होइ नबी सौं चाव। ताकी बूडन देहि न नाव॥

ऐसौ सूधौ पंथ दिषावहिं। बूडत कौं लै पार लगावहिं॥
आजम भयौ इमाम हमारौ। ताकौ मजहब लाग्यौ प्यारौ॥

चौपई अर्द्धाली

सेष मुहंमद मेरौ पीर। हांसी ठांव गुननि गंभीर॥

दोहा-4

हजरत नबी इमाम फुनि; तीजौ पीर बिचार।
ये मोसौं किरपाल ही; नित रहियौ करतार॥

चौपई-5

सुनि बषांन अब छत्रपती कौ। चिरंजीवु चगता कौ टीकौ॥
साहिजहां साहिंन कौ साह। जहांगीर सुत जगत पनाह॥

ताकी सतुति करी नहिं आवै। सागर थाह न कोऊ पावै॥
ताकैं ढिंगु लागत ना आंन। अली समान मरद मरदांन॥

चौपई-अर्द्धाली

नीकैं पहिचान्यौं करतार। चलिहै भलैं धर्मु आचार॥

दोहा-5

कहत जांन हौं सुलपमति; करत न आइ बषांन।
चिरंजीव जुग-जुग रहौ; सहत दीन इमांन॥

चौपई-6

बड़े-बड़े जाकै उमराव़। नीके करंहि उपाव़॥
आसिफ खां थंभनिपति-साही। अैसो दीनौं ग्यांन इलाही॥

साहिजहां बहुतें सुख पावै़। जिय़ भावै सो करि दिषरावै़॥
दय़ावंत संपूरन ग्यांन। वाकी सम उमराव़ न आंन॥

चौपई अर्द्धाली

और महावत षां बलिवंत। जाकै संग बहुत सांवंत॥

दोहा-6

आसिफ षां सरदार है; दूजौ षॉननि षांन।
साहिजहां करिहै मय़ा; भाव़त दोऊ प्रांन॥

चौपई-7

जहांगीर प्रिथी के पाल। साहिन साहि भये़ बस काल।
उपज्यौ सोर मेदनी मांहिं। काहू कै मन कौं कल ऩाहिं॥

कियौ़ अचानक साहि पय़ानौं। सकल जगत पल मै थहरानौं।
जे हे बड्डे राजे राने। घर आग्ये सब तजि-तजि थाने॥

चौपई अर्द्धाली

तिहिं छिन दौलतखां चहुंव़ांन। रोपे पांव़ मेर परव़ान॥

दोहा-7

नीकैं राख्यौ कांगरौ; स्वामधर्म ज्यों मांहिं।
अलिफ खांन जाकौ पिता; तातें अचिरज नांहिं॥

चौपई-8

येक बार सब मिले पहारी। घेरौ कियौ, भयौ जुध भारी।
कीचक धनि (जीवक हानि) पर्यौ घमसांनिं। दौलत खांन लगाये पांनिं॥

छूटे पांइ पहारी लाजे। अपने-अपने घर कौं भाजे।
जेते आहि पहारी राजे। येक-येक करि सबहीं भाजे॥

चौपई अर्द्धाली

साहिजहां सुनि येहूं भाष्यौ। गाढे पाइ भलैं गढ राख्यौ॥

दोहा-8

इनकौ दादौ क्याम खां; मान्यौ पेरोसाहि।
दौलत खां कौं बाबनी; दै करिहौं सम ताहि॥

चौपई-9

अबहिं सुनहु भाषत कवि जांन। रचौं कहानी बुधि परवांन॥
राजा येक भयौ जुग द्वापर। सुनत कथा रीझ्यौ चित तापर॥

चौंप बढी करि कबित बखांनी। अब जुग-जुगु लौं भई कहांनी।
पहलैं कथा करीं हीं सात। बहुरि बढ्यौ मन सुनि यहु बात॥

चौपई (अर्द्धाली)

कबित जितौ ह्वै तेतौ भावै। अंब्रित घूंटनि कौन अघावै॥

दोहा-9

नाव धर्‌यौ बरिषा पुहप; पैं देखौ अधिकार।
कबहूं मुरझावत नहीं; बास अमिट सैंसार॥

चौपई-10

अैसी करूं पुहप की बरिषा। सुनत होत तन मन मैं हरिषा।[1]
धंन बूंदन तें तिन उपजांहिं। यातें सुख उपजैं ज्यौ मांहिं॥

रसना बादुर अछि्छर फूल। ग्यांनी भंवर रहेंगे भूल।
समत सोलह सै पच्यासी। मन सागर तें रंभ निकासी॥

---

1. हरषा

चौपई अर्द्धाली

प्रथम पंचमी सावन मास। कीन बरिषा पुहप हुलास॥

दोहा-10

यहै बीनती जान की; सुनहु काबि सत भाइ।
है अभूल करतार हीं; अनमिल देहु मिलाइ॥

चौपई-11

सुनहु कांन दै चतुर रसाल। राजा येक नाव भोपाल।
चतुरदिसा मै जाकी आंनि। उतिम महा गोत चहुंवान॥

जेते भये राय राजांन। पिरथी सकल मुकट चहुंवांन।
चक्रव्रती जिन कुल मै भये। ढीलीपति छत्र सिर धये॥

चौपई अर्द्धाली

अबहिं गनाऊं काके-काके। चहुंवानन के प्रगट साके।

दोहा-11

छत्रपती भोपाल की; अस्तुति करी न जाइ।
पै नैंसक कबि जांन कहि; झाईं देउं बताइ॥

चौपई-12

सिरी नगर रहिबे की ठांव। ताकी सतुति कहां लौं गांव॥
येक मास जौ चलत बिहावै। तौऊ वाकौ पार न आवै॥

जौ नीकैं करि गनिये हाट। दोइ कोट तें हौहिं न घाट।
जो जाकी मन इंछ्या होइ। सिरी नगर में लहिये सोइ॥

चौपई अर्द्धाली

तामैं हैं कोरीधज साहि। चटक-मटक अतिपुर कौं आहि।

दोहा-12

बिप्र बनिक रजपूत बहु; भांति-भांति की जाति।
कहूं कहां लौं जान कहि; सिरी नगर की बाति॥

चौपई-13

गाढौ है भूधर सौ कोट। कोट-कोट कैसी है वो़ट।
अनगन राजे लागहिं आइ। डारहिं पल मैं नालि उडाइ॥

अन पानी अनलेखैं जामैं। कहूं लगाव न कछु डरू तामैं।
भरी नीर सौं गहिरी खाई। बिनु नौका पैरी नंहिं जाई॥

चौपई अर्द्धाली

अस्टधात कौ कोटि बिराजै। सार किव़ार पौर कौं छाजै॥

दोहा-13

अति ऊंचौ गढि नभ लग्यौ; नैकौ रह्यौ न दूरि।
कंगुरनि पर बैठे मनौ; ताराइन ससि सूर॥

चौपई-14

अंम्रित नीर भरे बहु कूप। पोखर पुहकर लगहिं अनूप।
बहुत बाव़री सुधा समान। नीर भरें तिय़ चतुर सुजांन॥

लाग्यौ़ रहत रैंन दिन पनघट। देखि ताहि बाढत है मन घट।
नारि चारि पानी कौं आबहिं। चार-चार सिंगार सुहाव़हिं॥

चौपई अर्द्धाली

भरि गागरि जल घर कौं धांवैं़। नैन सैन यह बात लखांवैं़।

दोहा-14

जैसैं ये़ गागरि भरी; बहु पानी इन मांहिं।
तैसे हम पांनपु भरी; कंता समुझत नांहिं॥

चौपई-15

जे उपबन देखैं तें मोहैं। भांति-भांति तरव़र वे़ सोहैं।
अंबुवा़ निबुवा़, गोव़न नरियर। लौंग जवत्री लैंची जैफर॥

नारंग दार्‌यौं दाख सुहाई। बहुत नासपाती मन भाई।
बिही जंभीरी केला सेव़। मानस कहा बिमोहै देव़॥

चौपई अर्द्धाली

अनानास इंजीर बिराजैं। औ खजूर अंबली अति छाजैं।

दोहा-15

बेल चंबेली केव़रा; जाइंही जूही जाइ।
चंपा[1] गुलाब[2] केतुकी; कूजा करना धाइ॥

चौपई-16

उपबन मैं पंछी बहु बोलहि। भांति-भांति की रसना खोलंहिं।
मन-नावति मधुकर बहु डोलंहिं। सारक सुव़ा पपीहा बोलंहिं॥

मारत हाकि कोकिला कारी। नाचत मोर उमंगनि भारी।
मैना पबई बोलत छाजैं। रूप मुनिईयां अधिक बिराजैं॥

चौपई अर्द्धाली

तूती कहत बसत है जीतूं। तूंही तूंही भीतूं भीतूं।

दोहा-16

जेते पंछी जगत मैं; जपत दई कौ नांम।
तूं मानस लज्या नहीं; बाद बकत बेकांम॥

चौपई-17

पदमाकर बहु पदम बिराजैं। पसरी पुरिय़नि नीकी छाजैं।
पैरैं हंस मीन अति सोहैं। चकवा चकई बोल बिमोहैं।

जल कुकरे पैरत अनुरागत। बग ढिंगू बैठे नीके लागत।
जल पंछी बहु केलं करांहिं। नाव़ सबनि कौ आव़त नांहिं॥

चौपई अर्द्धाली

लै बनसी राजा उत आवै़। खेल मीन कौ मन मैं भावै़॥

दोहा-17

निस बासुरि खेलत हंसतु; करत किलोल बिहाइ।
छत्रपती भोपाल जू; महारंगीलौ राइ॥

---

1. चंपपा 2. गुलाला

चौपई-18

नीके करें धोराहर राइ। देखि परंम पद जियहिं लजाइ।
देखित हीं चित चिंत गंवावै। ये वो[1] कौन जु देख न पावै॥

कुंदन से सब सदन बनाये। नीके चित्र बहुत चित्राये।
देखि बढ़ै अंग-अंग अनंग। तामैं करत राइ जू रंग॥

चौपई अर्द्धाली

पलिका बरननं कर्‌यौ न जाइ। लै लै पुहपनि भरे रसाइ॥

दोहा-18

सर्व तियन मैं राय कौं; पारबती की चाहि।
यक पति मानीं जांन कहि; फुनि पटरांनी आहि॥

चौपई-19

पारबती राजा भोपाल। चाहुवांन अति रसिक रसाल।
हैं घट दोइ येक ही जीव। उहि मुख पिया रहत उहि पीव॥

चिंता येक रहत चित मांहिं। और सबै कछु अंगज नांहिं।
सुत बिन कौंन काज सैंसार। दीपग बिना धांम अंधियार॥

चौपई अर्द्धाली

बहुत पुंन्यं करि द्वै दिन रात। रसना रसी पुत्र की बात।

दोहा-19

जाकैं पाछैं सुत नहीं; सो घर क्यों ठहराइ।
जेम बलूला डिस्ट पर; पल मंहिं जाहिं बिलाइ॥

चौपई-20

कीनौं बहुत पुन्न औ दान। तबंहिं रंह्यौ रांनी आधांन।
राजा रांनी मन आनंद। दै सुत दई कटैं दुख दंद॥

पुनि, दांन निस बासुर देतु। बहुत असीस सबनि पैं लेतु।
पूरी अवधि भई आधांन। पारबती तब पीर पिरांन॥

---

1. वी

चौपई अर्द्धाली

जरम्यौ पूत बढ्यौ चितु चाइ। अंग समावत नाहिंन राइ।

दोहा-20

फूल्यौ अंग न मातु है; गये़ चिंत दुख दंद।
पूजी आस निरास की; याते़ं कहा अनंद॥

चौपई-21

राजैं बहु जोतिषी बुलाये़। लै लै पोथी पतरा आये़।
लगन साध पंडित हरषाये़। कूंव़र भलैं महूरत जाये़॥

ह्वै उपगारी परदुख भंजंन। परसोतम साजन मनरंजन।
अैसौं कौंन जगत मैं आज। सहै जु कस्ट पराये़ काज॥

दोहा-21

परसोत्तमउ उतिम कंव़र; पर दुख भंजनहार।
नांव़ धऱ्यौ यहु जांनिकैं; पंडित लगन व़िचार॥

चौपई-22

राजा सुनत बहुत रहं (हर) सायौ। धंन सुभाग अैसौ सुत पायौ़।
पुन्य दांन अनलेखैं कीनौं। साच्यौ दर्ब काढि कैं दीनौं॥

गाइन गाव़ति अधिक बिराजैं। पंच सब्द रस आनंद बाजैं।
अैसे दान राय़ जू दये़। जाचग बहुत अजाची भये़॥

चौपई अर्द्धाली

सिरीनगर उपज्यौ़ बहु चैन। कहत न आवै़ रसना बैंन।

दोहा-22

काहू चित चिंता नहीं; हरष भई हिय़ मांहिं।
सुत जरम्यौं घर राइ कैं; सबकौं करिहै छांहि॥

चौपई-23

राजै नीकी सभा बनाई। बांटी बहुत उमंग बधाई।।
बजत साज दै आदि म्रिदंग। नांचत पातुरि महा उमंग॥

नाइक नटुवा गांवहिं गीत। बड़े अंग की जैसी रीति।।
उपजवहिं नाना परकार। देखि देखि रीझहि सैंसार॥

चौपई अर्द्धाली

जेती हरष भई जिय राय। कहौं कहां लौं बरनी न जाय।।

दोहा-23

सुत पायौ आनंद भयौ; मन मैं महा उमंग।
अैसौ फूल्यो राय जू; नाहिं समवति अंग॥

चौपई-24

परसोतम कौ यहै सुभाइ। दिन-दिन हीं बाढत हीं जाइ।।
होनहारि बिरवा की भांति। महासु चिकने लोने पाति॥

जेतौ बढै (बरिस) मै कोइ। ते तौ कुंवर मास मै होइ।।
जबहिं ग्यांन नैंसक उपजायौ। तब पढिबे कौं कुंवर बिठायौ॥

चौपई अर्द्धाली

पंडित बहुतैं ग्रंथ पढाये। येक बार जो सुने सु आये।।

दोहा-24

जे रायन मै चाहिये; ते सब बिद्या लीन।
संपूरन सब भांति मै; काहू भांति न हीन॥

चौपई-25

चलत आपुनैं कुल आचार। बहुत करत रजपूतनि प्यार।
बहुत ऊंट बहुतैं रथ घोरे। बहु कुंजर मद बिन मद थोरे॥

कबहूं हाथी ऊंट लरावै। कबहूं हरन जु ज्यौ मै भावै।
बहुतैं नीकी सभा बनावै। सुरपति ताकै कौतिग आवै॥

चौपई अर्द्धाली

हा हा हू हू गाइन इंद। वै हूं देखि कहैं गोबिंद।।

दोहा-25

भूवलोक ऐसी सभा; कैसैं कैं बनि आइ।
परसोतम सौ दूसरौ; जगती जन्यौ न माइ॥

चौपई-26

येक द्यौंस परसोतम कंवर। नीरज नादहिं ह्वै रह्यौ भंवर।
नीके-नीके गाइंन गावैं। रीझि रीझि चितु कंवर रिझावैं॥

कहुं नटुवा कहुं पातुर नाचैं। बनी गैन गति ढारी सांचै।।
मद मद और मदन मद मात। करत न प्यालौ करतें हांतै॥

चौपई अर्द्धाली

धुकि धुकि परत हंसत रंग माहियां। करत कलोल सदन की छहिया।।

दोहा-26

कहत न आवै जान कहि; नैसक नाद सवाद।
जिहिं यहु रस समझ्यौ नहीं; आव गंवाई बाद॥

चौपई-27

कंवर सहज हीं सीस उचायौ। मंदिर पर पंछी डिठ आयौ।।
वरन अनेक न बरने जांहिं। भाव भेद केहूं न लखांहिं॥

ज्यों-ज्यों देखै नैन पसार। सदन मांहिं उपजत उजियार।
ज्यों-ज्यों पंछी पंख डुरावै। मंदिर मै सुबास प्रगटावै॥

चौपई अर्द्धाली

प्रगट तौ डिठ पंषी आवै। ग्यांन कियें कछु भेदु लखावै।

दोहा-27

ऐसौ पंछी आज लौं; भयौ न जगती माहिं।
जारी कैं नैंना बहुत; तिनहूं देख्यौ नाहिं॥

चौपई-28

रीझ्यौ कंवर देखि कैं पंखी। त्राटक लाइ रह्यौ दहूं अंखी।
यहै कहत याकौं जो गहै। मन की इंछ्या सोई लहै॥

ऐसौ मोहिं सभा मैं सोहै। जो देखै जाकौ मनु मोहै।
याकौं तुम पंछी जिन जानहु। मन मोहन कौ मंत्र बखानहु॥

चौपई अर्द्धाली

मेरैं जानि अपछरा कोई। पंछी मैं यह क्रांति न होई।

दोहा-28

रूप क्रांति अनगन चटक; सोहत बरन अनंत।
भांति-भांति पुहपनि भरित; पंछी किधौं बसंत॥

चौपई-29

सेवक बधकनि लैन पठायौ। सुनत बात धींवर उठि धायौ।
आइ कुंवर कौं कियौ जुहारि। डारी चूंनिं लगायौ जारि॥

पंछी हंस्यौ देखि यहु भाव। मूरिख कंवर गहिन कौ चाव।
पंछी देखि चून ललचैहै। वह लालिच मो मैं नहिं पैंहै॥

चौपई अर्द्धाली

जो पंछी लालचु दै डारि। सो न परै जारी जंजार।

दोहा-29

अंनदात सौं प्या़र है; भूल्यौ तनदातार।
पेट काज सब जग पर्‌यौ; या़ जारीजंजार॥

चौपई-30

बिहंग उडिन कौं पंख संवा़री। चित चिंता उपजी हैं भारी।
होइ अधीर कुंव़र उठि धायौ। पर्‌यौ तिलकि पग बिहंग हंसायौ॥

मुकट पर्‌यौ जारी मै जाइ। चाहि बिहंग उपज्यौ चितु चाइ।
मुकट लेउ हंसि दैहौं गार। भलैं चूंनि जल नीकौ जार॥

चौपई अर्द्धाली

यौं कहि झपटि मुकट कौं मारी। झीवर तबहिं उछारी जारी।

दोहा-30

दई चरित तें जान कहि; पर्‌यौ (जु) पत्री जार।
कंवर कहै अैसें भई; बलि-बलि सिरजंनहार॥

चौपई-31

कंवर काढि जारी तें लीनौं। पिंजर जराव़ आनि कैं दीनौं।
पंछी लग्यौ प्रान कौं प्यारौ। पिंजर ढिंगु तें करत न न्यारौ॥

चूनि ठांव़ भरि-भरि लै थाल। मुकुता रतन और नगु लाल।
जेती चूनि कंवर ढिंगु राखै। नैकु न कभूं जीभ सौं चाखै॥

चौपई अर्द्धाली

अैसौ बंध्यौ पत्री सौं हेत। कुंवर न कबहूं भोजन लेत।

दोहा-31

कहत जान निज प्रांन कौ; जासौं लाग्यौ प्यार।
ताकैं सुख, सुख-दुख, दुखी; यहै प्रीत ब्यौहार॥

चौपई-32

कुंवर कहत है पंछी हा हा। बचन सुनत चित महा उमाहा।
भूख प्यास, निद्रा बिस्रांनी। जानत सुनौं पत्री बांनी॥

दुखित दुंद चर देखि दयायौ। मेरैं लये कुंवर दुख पायौ।
सुनहु कुंवर पंखी धुनि कांन। कहा करूं तुम हेत बखांन॥

चौपई अर्द्धाली

भूख न प्यास न निंद्रा आवति। हौंस कहा हितु इतौ लखावति।

दोहा-32

सागर पीर न मीन की; चंद न चिंत चकोर।
काहे तें क्रिपाल तुम्हं; मो तुछ तन की वोर॥

चौपई-33

सेवा देखत बहुत लजाऊं। हौं सु कहा जो तुमहिं रिझाऊं।
सेवा बदले बलि द्यौं प्रांन। तौऊ नाहिन मिटत लजांन।

जौ ह्वै मेरौ पहिलौ रूप। तौ हौं सेवा करूं अनूप।
अब मो तें कछु होत न सेवा। करिहौ कहा निरंजन देवा॥

चौपई अर्द्धाली

छत्रपती मेरौ आधीन। हौं यौं भई भाग की हीन।

दोहा-33

बचन सुनत अति रस भरे; हरे कुंवर के प्रांन।
यहै कहत पंछी ह हा; कीजै बात निदांन॥

चौपई-34

अब तौ तुम पंछी डिठ आवहु। आदि कौंन हे, भेद लखावहु।
बात सुनन कौ बाद्यौ चाव। हा हा सौं करौ लखाव॥

पंछी कह्यौ कुंवर सुनि बात। कोऊ अपनौ भेदु लखात।
पिय औ भेदु जीव ही जांनैं। रसना कहा जु ताहि बखांनैं॥

चौपई अर्द्धाली

जौ हूं कहौं आपुनौं भेदु। सुनत करेजा परिहै छेदु।

दोहा-34

जौ रचि रचि पचि-पचि कहै; रसन न आइ बिचार।
सो जानै जिहं अंग मै; बिरह लेत बिसतार॥

चौपई-35

ज्यौं ज्यौं पंछी करिहै नाहिं। बाढ़्यौ (बाढत) चौप कुंवर चित मांहिं।
जौ, हूं, भेद न तेरौ पाऊं। आपॅहिं जग मै नाहिं जिवाऊं॥
तबहिं सोच उपज्यौ चित पंछी। सांची बात कही हरनंछी।
नगरी नाम पैमु की पुरी। दिसा उदीची नाहिन दुरी॥

चौपई अर्द्धाली

जगमन राजा तिहं नगरी कौ। डांड लेत उत्तर सिगरी कौ।

दोहा-35

पटरानी है रूप निधि; बहु बिधि, बिधि रचि कीन।
उत्तिम अछि्छर गोत मैं; महा चतुर प्रबीन॥

चौपई-36

सो जगमन है मेरौ तात। और रूप निधि मेरी मात।
पैंमु लागि हौं या विधि भई। कुटंब गोत कुल सबतें गई॥
मेरौ नाम सुकेसी कहिये। मो सी मेरैं गोत न लहिये।
मोहि दयौ विधि रूप अपार। समकौं नाहिं सकल सैंसार॥

चौपई अर्द्धाली

बात सुनै सो रहै लुभाइ। देखिन की कछु कही न जाइ।

दोहा-36

जा बिधि हौं पंछी भई; सो अब करौं बखांन।
पिरम कहांनी कंवर जू; सुनहु भलैं दै कांन॥

चौपई-37

उदैसिंघ राजा कौ नाव। कंकनपुरी रहन की ठांव।
प्रगट भयौ सकल सैंसार। राजत राजा गोत पंवार॥

दुरगावती पाट की रांनी। उदैसिंघ राजा, मन-मानी।
सुरपति नाव कुंवर कौ सोहै। जो देखत ताकौ मन मोहै॥

चौपई अर्द्धाली

सोभा सभा न बरनी जाइ। जो देखै सो रहै लुभाइ।

दोहा-37

गाइन पंडित बहुत ढिंग; बंध्यौ नाद सौं नेहु।
रैन दिना सुरपति कुंवर; बरषत दमका मेहु॥

चौपई-38

येक द्यौंस बहु सभा बनाई। रूप-क्रांति की बात चलाई।
अपनी-अपनी बुधि परवांन। सबही काहू कियौ बखांन॥

कोऊ कहै पद्मिनी नीकी। और तिया ताकैं ढिंगु फीकी।
कोऊ कहै भली इंद्रानी। जाकी जग मै, कहैं कहांनी॥

चौपई अर्द्धाली

कोऊ कहै परम पद हूर। है वा मै गुंन-रूप संपूर।

दोहा-38

अपनै अपनै ग्यांन पर; करिहैं सकल बिचार।
लै लै नांव गनाइहैं; देस देस की नार॥

चौपई-39

बिर्ध बैंस पुरषा इक बोल्यौ। सर्ब रूप जग्ती कौ तौल्यौ।
इंदरानी और हूर जु कहिये। हैं कहिबे कौं नाहिंन लंहिये॥

कहत कंवलनी कंवला भली। यह कहनावत जग मै चली।
आज सुकेसी रूप समांन। नाहिन कहूं कुंवर जू आंन॥

चौपई अर्द्धाली

यहु सबाद मन ही मै जांनैं। रसना कहा जु ताहि बखांनैं।

दोहा-39

रूप सुकेसी बरनिहूं; सुनहु कुंवर दै कांन।
जैसौ पुरषनि पै सुन्यौ; तैसौ करूं बखांन॥

चौपई-40

मांग सेत मुकता हल भरी। मधि कालिंदी कैं. सुरसुरी।
कुंदन बदन कर्‌यौ है नारी। मनहुं कसौटी लीक निकारी॥

कहा स्यामता बार बखांनौ। मधुप कि निसा सांवरी मानौ।
बरन म्रिगमद आवत बास। नागपास ज्यौ अँचत पास॥

चौपई अर्द्धाली

बदन मदन कौ आहि निवास। मानहुं कीनौ चंद प्रकास।

दोहा-40

बदन सदन है रूप कौ; तामै मदन निवास।
चषि चकोर बंदत रहै; मानहु चंद्रप्रकास॥

चौपई-41

भौंहैं, बरुनी अति कजरारी। उज्जलमुख सोभित है भारी।
राजत हैं दोऊ द्रिग लौंने। भूलि परे मानौं म्रिगछौंने॥

जुरी भौंह यहु भाव लषांवैं। मनहु मदन द्वै म्रिग (नु) लरावैं।
नाक कीर, मुकता अधिकार। डोलन मैं डोलत सैंसार॥

चौपई अर्द्धाली

खौर कियें मुकता हल भरे। सुक्कित किधौं कान द्वै धरे।

दोहा-14

अधर भेद कबि जांन कहि; नैंकु न बरन्यौ जाइ।
नाव लेत मुख मिष्ट है; पानी भरि-भरि आइ॥

चौपई-42

दसन रसन की सुनहु कहांनी। वै उज्ज्वल, वहु अंब्रित बांनी।
ठोडी रूप धर्‌यौ ज्यौ मांहिं। कूंवल कंवल मधुप-तिल मांहिं॥

है गिय संख, चढायौ चाक। पीठ परै डिठ रहिये ताक।
कहा कहौं धौं गिय की जोत। लाजत कोकिल सिखी कपोत॥

चौपई अर्द्धाली

सांचे ढारी मानहु पीठ। कनक खंब सी आवत डीठ।

दोहा-42

राजतु (राजति) हैं भुजबेल सी; अंगुरी पतुरी बाल।
कुच कठोर कंचन कलस; पुब्ब नाभि सुकमाल॥

चौपई-43

कटि, कर माहिं, बार सी आवै। बार-बार देखै तौ पावै।
कहियत चीतौ सिंघ ततईया। इनकी उपमा देत (लेत) बलईया॥

कदली खंभ जंघ तिय सोहैं। अति सुकमार बार बिन मोहैं।
पिंडुरी पातरी बार न ता मै। निर्मल असत देखिये जामै॥

चौपई अर्द्धाली

चरन कंवल गज गैंन उचावै। जे निहचल चित ताहि चलावै।

दोहा-43

वाकौं कछु उपमा नहीं; देख्यौ बहुत बिचारि।
वाकी उपमा दीजियत; रूपवंत जे नारि॥

चौपई-44

सुनत सिंगार कुंवर सुधि गौंनी। त्राटक लगी, होइ रह्‌यौ मौनी।
अंसुवा ढुरि ढुरि परिहैं नैंन। रसना बकत न आवैं बैंन॥

चेत गई चितु चिंता पूरी। कंवरंहिं दई मनौ ठग मूरी।
झांखत मुख जैसैं बौरानैं। हार्‌यौ जुवा, जुवारी मानौं॥

चौपई अर्द्धाली

निस दिन भूख न नींद न प्यास। ज्यौ तन रह्यौ मिलन की आस।

दोहा-44

सुरपति तौ सुरपति भयौ; बाड्ढ्यौ बिरह अनंग।
नैंना बरसत ही रहैं; स्वेद चलत अंग अंग॥

चौपई-45

केतक दिन याही बिधि भये। पलिका परे उठन तें गये।
निरबर महाबिरह करि डार्‌यौ। भयौ अचेतन आप संभार्‌यौ॥

परी बात राजा कैं कांन। उपज्यौ रोग कुंवर कुंभिलांन।
सुनत राय बौरा ह्वै धायौ। देख्यौ कुंवर पर्‌यौ मुरझायौ॥

चौपई अर्द्धाली

राजै सीस भीत सौं मार्‌यौ। रोइ रोइ तन बसतर पार्‌यौ।

दोहा-45

मात-पिता की सुधि नहीं; चेत गंवाई हेत।
जितौ राइ बिललातु है; कुंवर न ऊतर देत॥

चौपई-46

रोवत राइ सभा मै आये। बैद सयांने बहुत बुलाये।
देखहु जाइ कुंवर कौं भईया। उपजी बेदन कहा ललईया॥

जौ तुमतें ह्वै कुंवर समाध। राजपाट द्यौं आंधौं-आध।
बैदक ग्रंथ जिते जग कहिये। ते मुख पाठ सर्ब ही लहिये॥

चौपई अर्द्धाली

धमनी कंवर देखि पछितांनें। पचि पचि रहे, न रोग लखॉनें।

दोहा-46

जेते गद्य पंडित बदति; नारी भांति बियोग।
नेह-ग्रंथ जिहि संग्रह्यौ; सो पावै यहु रोग॥

चौपई-47

कंव़र चेत बोल्यौ तुम कौंन। सांचु कहौ धौं छाडहु मौनं।
जौ बईद हौ राय़ पठाये़। तौ अपनै घर जाहु पराये़॥

जेते रोग ग्रंथ मै गाये़। मेरैं तन मैं ना प्रगटाये़।
बिरह रोग उपज्यौ घट मांहिं। ताकी औषध तुम पै नांहिं॥

चौपई अर्द्धाली

जौ उठि आवै़ आपु धनंतर। जानत नांहि कहा मन अंतर।

दोहा-47

बिरह रोग कौं जांन कहि; औषध ये़क न आध।
जातें उपजत रोग तन य़हु; तातें होत समाध॥

चौपई-48

सगरे बैद गये़ उठि हार। बिरह रोग कौं ना उपचार।
चिंतन करै राइ मन माहीं। बेदन कछू कंव़र तन नाहीं॥

कंव़रहिं उपज्यौ नौतन नेहु। नैंन झरत ज्यौं पाव़स मेहु।
अैसौ कोऊ क्यों न पठाव़ति। जातें कुंव़र न भेद दुराव़ति॥

चौपई अर्द्धाली

राजै पठय़ दय़ौ परधांन। मन मै पैठि भेद सब आंन।

दोहा-48

सांच सयानप जानिहौं; जौ पैठौ ज्यौ मांहिं।
भेद सकल तोसौं कहै; कछू दुरावै़ नांहिं॥

चौपई-49

जाइ जुहार किय़ौ परधांन। कंव़र सैंन सौं दीनौं भांन।
निकटि जाइ बोल्यौ म्रिदबानी। हाइ हाइ गति कौंन बिहानी॥

मोसौं कहौ आपुनी बात। ज्यौ हूं कछू उपांऊं घात।
जौ बईद तें रोग छपावै़। तौ व़हु कहा उपाव़ उपावै़॥

चौपई अर्द्धाली

तब सब भेद कंव़र प्रगटान्यौ। व़ाकौ कह्यौ सांचु करि मान्यौं।

दोहा-49

ठगई सौं मन लेतु है; य़हु नहीं जानी बात।
कंव़र भेद सब कहि दयौ; ज्यौं बीतत दिन-रात॥

चौपई-50

सुनत बात बोल्यौ परधांन। कोऊ लगावै़ पतिनी प्रांन।
तिय़ा कहा, तुम जाकैं काज। रोगी ह्वै बैठे तजि राज॥

अब तूं जिन बोलहि परधांन। पाय़ौ सब बुधि कौ परवांन।
बैन सुनौ पावै़ सब कोइ। निकसै जिहिं भाजन जो होइ॥

चौपई अर्द्धाली

पायौ अबहि राइ कौ ग्यांन। या बुधि पर कीनौ परधांन।

दोहा-50

बिरह पीर पीऱ्यौ नहीं; होइ न बारह बांन।
प्रेम नेम जामै नहीं; ताहि न मानस जांन॥

चौपई-51

पैंमु भार बरन्यौं नहिं जाइ। सो जानैं जिहं घटि प्रगटाइ।
रास़भ कैसैं सकै उचाइ। मातौ कुंजर हीं ठहिराइ॥

पैंमु खरे काढत बुधि थोर। जानहु ताहि जिय़ बिनु खोर॥
जौ उलूक कौं नाहिन भावै़। सूर जोत कछु हीं न लखावै़॥

चौपई अर्द्धाली

जौ अंधरी ना देखै चंद। कहा जोत बाकी है मंद।

दोहा-51

कौंन काज मनु पैमु बिनु; कहा दीप बिनु ग्रेहु।
जैसी धरनी मेहु बिनु; नेह बिना ज्यौं देहु॥

चौपई-52

बहुत भयौ परधांन खिसानौ। आयौ राजा पासि लजानौ।
बात कुंवर की कहत न आवै। बिरह अगिन झर नभ लौं धावै॥

बेदन भई बिरह की पूर। ह्वै न समाध, संख मति मूर॥
बिरह बसै जाकैं मुख नैन। देखै पिय, भाषै पिय बैन॥

चौपई अर्द्धाली

बिरह रोग उपजै जिहं कांन। मीत नांव बिनु सुनै न आंन॥

दोहा-52

प्रेम बस्यौ जिहं प्रांन मै; ताकौं आन न चिंत।
जहं जहं नैंन पसारिहै; तहं तहं देखै मिंत॥

चौपई-53

राजै कह्यौ कछू यह जांनीं। कहां जाइ अटक्यौ मन प्रांनीं।
ज़िंहिं बिधि कीनौं कंवर बखांन। सो सब बात कही परधांन॥

राजै आने बहुत संयाने। सर्ब जान यह वात अयांनें।
राजा पूछै परि-परि पांव। यहै कहैं हंम सुन्यौं न नांव॥

चौपई अर्द्धाली

जांनत नांहिं सुकेसी को है। कैसी भांति अपछरा होहै

दोहा-53

भूंख मिटी, निंद्रा घटी; चिंत बढी, चितु राइ।
काहू देखी ना सुंनीं; सो कैसें कर आइ॥

चौपई-54

देखंन गयौ कुंवर कौं राय। अंसू ढरत गर लाग्यौ धाइ।
दुर्बल कंवर तक्यौ अति छीन। तरफत राय मीन जलहीन॥

बावर पनौ न कीजै प्यारे। अब उठि होहु हहारे।
बिरध भयौ हूं, होत न काज। अबहिं संभारहु अपनौं राज॥

चौपई अर्द्धाली

इन बातनि कोऊ भलौ न भाखै। सो सपूत अपनी थित राखै।

दोहा-54

अब पैंमहि आदेस करि; करौ देस कौ काज।
मेरी सिख सुनि भूलि जिनि; ब्रिथा गंवा़वहि राज॥

चौपई-55

पर्म पूजि चिरजीवौ़ तात। तुम्हं सब भांषी सांची बात।
मेरौ ज्यो मेरैं कर नाहीं। देखत नांहिं पर्‌यौ ज्यों छांहीं॥

मेरैं हाथ बात ना मन की। तातें कछु न सोधी तनं की।
देत देत सिख राज्यौं हार्‌यौ। रोव़त अपनैं धाम सिधार्‌यौ॥

दोहा-55

राजा रोव़त उठि गयौ़; ह्वैकैं महा निरास।
दूरि किये़ सब, कुंव़र तब; कोइ न राख्यौ पास॥

चौपई-56

महानंद तब कंव़र बुलायौ़। जिय़ कौ भेद सबै प्रगटायौ़।
बालापंन कौ मीत हमारौ। औ तूंव़र है गोत तिहारौ॥

मेरौ कछू करौ उपचार। औ तूंव़रा मुहि हाथनि मारि।
ढूंढन चलौ आइ जिय अैसी। कहैं सुकेसी आहि सु कैसी॥

चौपई अर्द्धाली

य़ा दुख मै तू संगी होहि। बूडत पार लगाव़हु मोहि।

दोहा-56

चातिग पावै़ सांति तौ, सांति होत जिय़ मांहिं।
मिलै मिंत मन मेल कौ; चिंत रहत तन नांहिं॥

चौपई-57

महानंद बोल्यौ सिध कीजै। यह चिंता जिन चितु कौं दीजै।
सो जिय् अमर होइ जगु आजु। जो मीतनि कैं आवै काजु॥

जे काहू कै काज न आवैं। तें काहे (जिंय) जगु जीव् जिवावें।
नैक संग तुम छाडौं नांहिं। तू घट, हौं तेरी परछांहिं॥

चौपई अर्द्धाली

अंधकार ढिगु रहै न छांहिं। हूं तंमहूं मैं छांडौं नांहिं।

दोहा-57

दुख तें जिनि, दुख पाइहौ; सुख दैहै करतार।
अंधकार तम ज्यौं मिटत; भये् तरुन उजियार॥

चौपई-58

उपज्यौ चैन कुंव्र कै हिय् मैं। सुनत बात यह भाई जिय् मैं।
महानंद धंन भाग्य हमारे। तो से संगी भये पियारे॥

मारग कै. दुख तै. दुख ताहि। संग-संगी-मन, मेल न आहि।
जासौं जियकौ भेदु जनईये्। ताकै संग पर्म सुख पइये्॥

चौपई अर्द्धाली

तिहिं घट चिंता कैसैं जात। रहैज मन की मन मैं बात।

दोहा-58

भेद न कोऊ जांनिहै; खेलत डोलहिं निंत।
कपट अहेरैं को कियौ; निकसि चलै द्वै मिंत॥

चौपई-59

चलत बहुत बीते दिनु रैंन। भूख न प्यास, न, नींद न चैंन।
अैसै भैरूपी उद्यांन। पंखी की रौ परत न कांन॥

बन भैरूपी कहूं न गांव्। भूतौ डरत गये, तजि ठांव्।
पंछी भूत डरत तजि जांहिं। मनुष तहां कैसे ठहराहिं॥

चौपई अर्द्धाली

अैसे अैसे बिकट पहार। बरनंनं आवै़ नांहिं बिचार।

दोहा-59

ये़क बरष मारग चले; हरष सुकेसी प्रांन।
कोऊ नाहिन देतु है; पैमपुरी सहनांन॥

चौपई-60

बरिषा रित बरिषत गई भारी। सीरी बूंद भई चिनगारी।
पलु बरुनी बादुर भरि आवैं़। कंवर नैंन घन हर बरसावैं़॥

चिंता दुख केतिन सरसावै़। कोऊ न पंथ प्रेम दरसावै़

आंसू ढरत पंथ कैं बीच। रपट परत नैननि कैं कीच।
बरिषत आंसू पलक न लागैं। व़ुहु घंन कहा नैंन घंन आगैं॥

दोहा-60

अंसुव़ा डारत चलत हैं; रहत न काहू ठांव़।
काहे नांहिंन बरसि है; सुरपति जाकौ नांव़॥

चौपई-61

बहुर्‌यौं भई जगत रित सीत। अंग कंपाव़ति करत अनीत।
जेते कूंव़र करत उपाइ। काहू भांति न सीतर जाइ॥

लै लै चकमक आगि जरावैं़। महानंद लकरी चुनि लावैं़।
कंव़र फूंक दै नेंरैं आइ। जांनत सैंकौं आग जराय़ (जराइ)॥

चौपई अर्द्धाली

नैंननि तें अंसुवा झर लावैं। लकरी बहि जैं अगिन बुझावैं़।

दोहा-61

जौ बिरही अंसुवा ढरत; अगिनि जरांवन जांहिं।
आग बहै पैरत फिरैं; लकरी पानी मांहिं॥

चौपई-62

ग्रीषम मैं अति आहित ताई। बात-बात की कही न जाई।
ताकी ताती लागै बाति। ताकी और कही क्यों जाति।।

बिरही जरत पीति मदमातौ। जेठ रहत (को) का कैं दुख तातौ।
ये ती नौं रित मेरैं जांनि। है बिरही सुख नाहिन प्रांनं॥

चौपई अर्द्धाली

जरत ग्रीषम बरिषा रोव़ति। सरद रैंन दिन कांपति खोव़त॥

दोहा-62

ग्रीषम बरिषा कौं जरत, बरिषा रोव़त सीत।
ग्रीषम कौं कंपत सरद; तिहुंव़न नीकी रीत॥

चौपई-63

चलत चलत इक आयौ़ सागर। नव़का बैठे दोऊ नागर।
निस दिन अंनगंन आंसू ढारैं। नौका भरै उलीचैं डारैं॥

जतन जतन करि राखैं नाव़। ये़क आव़ कौं कोटि उपाव़।
ये़क बरष पांनी मैं चले। आयौ़ भौंर तबहिं हलहले॥

चौपई अर्द्धाली

धूर्मतरित तें बूडी नईया। पैं जीव़त बांचे दोऊ भईया़।

दोहा-63

महानंद कहंवा गयौ़; कंवर और हीं व़ोर।
सारस जोरी बिछुर कै; परी और ही ठौर॥

चौपई-64

बूडक खात भयौ बौरानौं। केहूं सुरपति पार लगानौं।
धंन धंन, धंन धनं सिरंजन हार। निराधार कौ, तू ही आधार॥
तुम्ह ज्यावौ हुं, ताकौं को मारै। तुम बिन् बूड़त कौंन निकारै।
तुम्हं समान दाता नहीं आंन। तुम्हं बिन कौंन देत ज्यौ दांन॥

दोहा-64

कहत जांन करतार सौ; दाता नाहीं आंन।
कैसौउ तिन, देतु है; जीउ अमोलिक दांन॥

चौपई-65

कंवर यहै कहि कहि तनु छीजै। महानंद बिन कैसैं जीजै।
पर्यौ अकेलौ अति दुख दंद। महानंद लै गयौ अनंद॥
बाट बिरह संपूरन बाट। तौली पाइन होत न घाट।
जासौं दुख की बातैं कहियत। सो संगी संग नाहिंन लहियत॥

चौपई-अर्द्धाली

बैहरी गुंग रही संग छांहिं। सुनत न पीर बोलि है नाहिं।

दोहा-65

बिरह निसा डरपांवनी; रोवत लहत न भोर।
स्यांम बरन नाहिंन मिटै; जौ धौवहु बर कोर॥

चौपई-66

चल्यौ जात कूंवर दुखियारौ। दुख पावत पावत नहिं प्यारौ।
आवत तन तावरि प्रसे। जानै कहा, सुकेसी भेदु॥
तो बिनु कुंवर इतौ दुख पावै। बात हमारी कौंन चलावै।
मैं दुख सहे भावती प्यार। सो नीकैं जानैं करतार॥

चौपई अर्द्धाली

जौ सुनि बात सुकेसी पावै। संकट मेरौ देखि दयावै।

दोहा-66

वा सुरपति कैं सहंस द्रिग; या सुरपति कैं दोइ।
बहु बरसत, यहु रोइहै; वाते घटि ना होइ॥

चौपई-67

येक द्यौंस वहु सुरपति कंवर। ढूंढत फिरत केतुकी भंवर।
अति ऊंचे डिठि आई (बांम)। बोलत सुनि यें पुरिषन बांम॥

तिहि देखन कौं कतहुं उपायौ। देख्यौ पलिका येक डंसायो।
तापर (पौढ़ि रही वहु नारी। जाहि देखि) लाजै उजियारी॥

चौपई अर्द्धाली

निकट होइ कैं कंवर निहारी। उपरैंनी मुख तैं कहुं डारी।

दोहा-67

दूरि किये पट चटक मुख; देखि भयौ आनंद।
मानहु बादुर माहुं तें; निकस्यौ पूरन चंद॥

चौपई-68

रीझे देखि कुंवर के नैन। जिन (जिम) यह होइ सुकेसी अैंन।
नैंन सुकेसी ही करि जानत। मन पूछत तौ नाहिन मानत॥

मन है मन भांवंन कौ धांम। ता मधि नाहिं और कौ कांम।
झलमलात भूषन चमकार। यहु देखहु ताकौ अधिकार॥

चौपई अर्द्धाली

जाकौ मन छबि आन रिझावै। ताहू कै नैंननि कौं भावै।

दोहा-68

रूप उजागर नागरी; सब गुन आगर आहि।
कै कागर कौं चित्र कैं; रांभा सागर चाँहि॥

चौपई-69

काहू की नाहिंन मन संक। बैठ्यौ कुंव़र जाइ परजंक।
ताही बीचि तिया़ पुनि जागी। गारी दैन रोस मैं लागी॥

मो पलिका बैठ्यौ तू कौंन। भाषहु सांच न छाडौ मौंन।
देव़कि प्रेत, कहौ, गति कैसी। मानस मै तौ सकति न अैसी॥

चौपई अर्द्धाली

किहिं बिधि मानस य़हं ठां आवै़। देखि देखि भूतौ डरु पावै़।

दोहा-69

संच भाख तूं कौन हैं; राकस भूत कि प्रेत।
जौ मानंस तौ बाव़रौ; भरम्यौ काहू हेतु॥

चौपई-70

कंव़र कह्यौ हौं मानस आहि। मैं मनुषो यौ़ ढूंढत ताहि।
ह्यांलौं मेरौ कछू न काज। पंथ चलत इत निकस्यौ आज॥

अबहिं लागिहौं मारग अपनैं। तूं फिरि मोहि न देखहि सपनैं।
तू हूं कहुं अपनी द्वै बात। काकी सुता कहा तुव़ जात॥

चौपई अर्द्धाली

इत पुर, पाटन, नगर न गांव़। कौन भेद तूं अैसैं ठांव़।

दोहा-70

तोसी रूप अनूप तिय; तकी न या सैंसार।
रहत अकेली ठांव यहं; कहि धौं कौन विचार॥

चौपई-71

आहि चतुरभुज मेरौ तात। गिरजा नांम कहत है मात।
द्वै तनियां हम करत न न्यारी। निरमल दे परमल दे प्यारी॥

संपूरन छबि हम मै लहियत। अछ्छिर गोत हमारौ कहिय़त।
ये़क द्यौस संग बहुत सहेली। खेलन निकसीं बैस नव़ेली॥

चौपई अर्द्धाली

खेलत हंसत बाग मै आई। मधुपमाल कंव़लनि तजि धाई।

दोहा-71

हंम तन महा सुगंधता; भौंरनि बढत हुलास।
आस पास गुंजत फिरहिं; अंग चामीकर बास।।

चौपई-72

येक़ देव़ निकस्यौ उति आइ। मोहि रीझि लै चल्यौ उडाइ।
रहीं देखिती सखीं सहेलीं। हौं इति राखी आंनि अकेली॥

सखीं परीं धर परि मुरझाइ। ज्यौ निकसैं तन क्यौं ठहराइ।
मो बिनु भईं सहेलीं अैसैं। दीप बुझैं मंदिर ह्वै जैसैं॥

चौपई अर्द्धाली

राह चंद गहि करिहै कारे। कहा करै तौ वपुरे तारे।

दोहा-72

अति बलिस्ट है सिस्ट मै; डिस्ट न देख्यौ आंन।
सिर पुहंचै सुरलोक लौं; पग पतार मैं मांन॥

चौपई-73

कुंव़र चल्यौ उठि सुनिकैं बाति। निरमल दे बोली जिन जाति।
बरिष भयौ मो ब्यापति दुख। देख्यौ आज मनुष कौ मुख॥

कंव़र कह्यौ मोकौं है कांम। कहूं नाहिं लैहूं विस्त्रांम।
देव़ न टरै तकै घर मांहिं। तौ मन की मन मैं रहि जांहिं।

चौपई अर्द्धाली

निरमल दे बोली सुनि भईया़। अबहिं गयौ सुर लेय बलईया़।

दोहा-73

व़ह अबहीं आव़त नहीं; मोहि सौंह करतार।
तुम जईयो़ उठि बेगि ही; करिकैं बिथा वि़चार॥

चौपई 74

जौ कहिहै सब मिलि सैंसार। आव़त नाहिन बिथा बिचार।
ये़क जीभ सौं कहत न आवै़। जिन दुख दीनौं व़है गंवा़वै़॥

आंसू ढरत कहत मुख बात। मुरछत सीरी ह्वै ह्वै जात।
आद अंत लौं ज्यों ज्यों भई। निरमल दे ढिंगु कीनी नई॥

चौपई अर्द्धाली

हां तौ भयौ़ पिता मईया़ सौं। बिछुर्‌यौ महानंद भईया़ सौं।

दोहा-74

दोइ बरष मोकौं भये़; गौनत मारग मांहि।
नारि सुकेसी कौन है; काहू भाषी नाहिं॥

चौपई-75

निरमल दे बोली डिठि बांध। टूट्यौ छूट्यौ बिरहा फांध।
जाकैं लयैं़ बहुत दुख पायौ़। सो न्यारौ प्यारौ तें पायौ़॥

जिह मग देखत आंख पिरांनी! हौं दैहौं ताकी सहनानी।
कंव़र पर्‌यौ निरमल कै पांइ। हा हा मोकौं मरत जिवा़इ॥

चौपई अर्द्धाली

जहां रहत सो उत्तिम ठांव़। हा हा कहौ, कहा तिहं नांव़।

दोहा-75

कौंन गांव़ को ठांव़ है?; कौन तीर को घाट?
मन कौ मोहन पाइये; कहिद्यौ कौन सु बाट॥

चौपई-76

सुनि भईया़ निरमन कै बैंन। भाषत बात अैंन की अैंन।
बहन मोहि निरमल दे प्यारी। गोद लये ठाढ़ी महतारी॥

दूधि पिवा़व़त भाव़त मन मै। फूलत नाहिं समावति तंन मैं।
ताही बीचि तिया़ इक आई। महा सरूप सुबास बसाई॥

चौपई अर्द्धाली

लै परमल कौं दूधि पिव़ायौ़। मात जियें अचिरजु उपजायौ़।

दोहा-76

पईंया लागूं सांच कहि; इत आई किहं बात।
कहा नांव़ किहं ठांव़ घर; कहा तिहारी जात॥

चौपई-77

कहत रूपनिधि मेरौ नांव़। पैमपुरी रहिबे की ठांव़।
हौं राजा जगमनि की नार। अछि्छर जाति सदस सैंसार॥

जा दिन तैं य़ह तनय़ा जाई। मैं हूं जनी ये़क मन भाई।
दोऊ जरमी ये़क महूरत। चित यौं़ कहत चित्र की मूरत॥

चौपई अर्द्धाली

राख्यौ नांव़ सुकेसी बाकौ। कुल दीपग ज्यों मात पिता कौ।

दोहा-77

नांव़ सुकेसी कौ सुनत; कुंव़र पर्‌यौ मुरझाइ।
कथा सुनहु निरमल कहै; संपूरन चितलाइ॥

चौपई-78

मेरैं जैम सुकेसी आहि। य़हु प्यारी सम लागत ताहि।
मात मोहि बोली सुनि रांनी। जौ तैं य़ह तनीयां करि जांनी॥

अपनी हूं तनइया कौं आंन। हौं तनया करि दैंहौं मांन।
तबहि रूपनिधि पठई चेरी। लैकैं पलनौं आई नेरी॥

चौपई अर्द्धाली

मात मोहि अंकव़ारनि लीनी। दूधि पिव़ायौ़ तनय़ा कीनी।

दोहा-78

उपज्यौ अति संतोष हित; दहुवं़नि कैं चितु माहिं।
यौ़ जानत संग ही रहैं; कबहूं बिछुरैं नाहिं॥

चौपई-79

बिदा रूपनिधि घर कौं मागी। मानौ बही कटारी नांगी।
कहां चले अब ढौरी लाइ। मेरौ मन संग लयौ लगाय॥

देत जाहु मोकौं तुम बांहि। मोहि मिलैं बिनु रहियौ नाहिं।
दीनी तबहि मिलन की बांहि। द्वादस बार बरष कैं मांहि॥

चौपई अर्द्धाली

येक मास संपूरन होइ। लै तनियां आवति हैं दोइ।

दोहा-79

केतक दिन इत रहत हैं; कहत जीय की बात।
छिन छिन मैं सुख पाइये; खेलत हंसत बिहात॥

चौपई-80

नगर चतुरपुर जौ तुम जैहौ। मो असीस परमल कौ दै हौ।
समाचार सुनि अंग न मावै। तेरैं मन की इंछ पुजावै॥

मात-पिता जीवत सुनि पैहैं। तो पर पल-पल बलि बलि जैहैं।
नैकु न चिंत धरहु चितु मांहि। ज्यो मांगौ तौ राखैं नांहिं॥

चौपई अर्द्धाली

मिंत संदेसौ सुनिये जातें। प्रानन प्यारौ लागै तातें।

दोहा-80

धंन सो पंथी जान कहि; देत संदेसौ मिंत।
चढै-बढै पानिप हरष; कटै लटै दुख चिंत॥

चौपई-81

कंवर कहयौ तुव संग लै जाऊं। मात तात पुनि बहिन मिलाऊं।
कथा बिरह ना कहत लजाऊं। तौ सांचै मन इंछ्या पाऊं॥

निरमल बोली सुनि सुख प्रांन। अैसैं कैसैं पइये जांन।
जौ हम करिहैं जतन अनेक। जांन न दैहै जोजन येक॥

चौपई अर्द्धाली

महाबली डरपावन देब। हैं जाकी सभ उलटी टेब।

दोहा-81

मनोहार, मानत नहीं; ना जानत है सेव।
जो जिय भावै सो करै; अैसो मूरिख देव॥

चौपई-82

कंवर कह्यौ मुहि जांनत नांहिं। मधि नाइक हौं सुभटनि मांहिं।
येक बार वासौं जुध करिहौं। मारौं कहा डराये डरिहौं॥

मारौं सांच न लाऊं बार। मोहि भरोसौ सिरजन हार।
ठाढे बात करत सुख पावत। ताही बीचि पर्यौ डिठ आवत॥

चौपई अर्द्धाली

पग पतार आकासहिं सीस। महाबिटंब सिरज्यौ जगदीस।

दोहा

देखत महा डरावनौं; धीर गंवावन हार।
तासौं सो जुध मांडिहै; जिहं सत दै करतार।

चौपई-83

निकटि आइकैं कुंवरहिं धायौ। कौंन जु तूं मेरैं घर आयौ।
आगैं कंवर महाधनुधारी। बांन करेजा लायौ भारी॥

मरम्यौ घाव देव थहरांनौ। तापर दूसर घाव लगांनौं।
पर्यौ देव अैसें आकार। भींव उछारे मनहु पहार॥

चौपई अर्द्धाली

धर हलहली, चली इहं भाव। भयौ चालकैं भयौ निहाव।

दोहा-83

मारि गिरायौ बान बर; भलौ चुकायौ पाप।
अैसैं देवा गिर गयौ; ज्यौं गज देखै हाप॥

चौपई-84

निरमल परी कंव़र कैं पाइ। धंन तव़ पिता और धंन माइ।
तोसौ सुन्यौ न नैन निहार्‌यौ। कैसौ सुर बलव़ंत पछार्‌यौ॥

अबंहिं चलौ अपनैं लै जैहौं। तोहि सुकेसी आनि मिलैहौं।
दोऊ चले महा आनंदन। चंचल चरन होत हैं मंद न॥

चौपई अर्द्धाली

चलत द्यौस बहु गये़ बिहाइ। चतुरपुरी ढिगु लागे आइ।

दोहा-84

जात बटाऊ बोलिकैं; निरमल पाती दीन।
कागर पर सागर लिख्यौ; बिरह दुखित सुखहीन॥

चौपई-85

जा दिन की हूं, दे उड़ाई। दई दई मो करत बिहाई।
ज्यों ज्यौं चितव़ों त्यों त्यों मरिहों। कौंन छिडाव़ति कहा हौं करिहौं॥

जीव़न कौं कछु हौ न उपाव़। पै ज्यो घट राख्यौ गहि आव़।
बीत्यो बरष न आइ बिचार। हौं जानत कै सिरजंन हार॥

चौपई अर्द्धाली

धंन धंन सिरजंन हार गुंसाई। निरमल परिमल बहुरि मिलाईं।

दोहा-85

दई हर्‌यौ डरू देव़ कौ; पूजी मन की आस।
अब दि(न), द्वै मैं आइहैं; सांचें हम तुम पास॥

चौपई-86

पहलैं ही राज औ रानी। आगम की पाई सहनांनी।
गिरजा बंहिया़ फरकनि लागी। बढी उमंग महा अनुरागी॥

यहै कहत हौं जानत नांहिं। आज कौंन गुन फरकत बांहिं।
अैसौ हूं करिहै करतार। देखौं मुख निरमल उजिहार॥

चौपई अर्द्धाली

अैसैं हीं बांचत उनमान। पथ्थिक पाती दीनी आंनि।

दोहा-86

निरमल कौ आव़न सुन्यौं; चैंन भयौ चितु मांहिं।
पथिक (जु) भाग्यौ सो दयौ; नाकौ करी न नांहिं॥

चौपई-87

ताहि बीचि निरमलदे आई। माता-पिता गरैं लपटाई।
निरमलदे परमलदे मिलीं। हंसीं कली द्वै मानहुं खिलीं॥

मात कहत कर सुता बखानि। मार्‌यौ देव़ कौं न गति ठनि।
अैसौ और न माता जायौ। कहा सुलैमा फिरि जगु आयौ।

चौपई अर्द्धाली

निरमल कह्यौ सुनहु जू मात। जा बिधि होइ बिहानी बात।

दोहा-87

कंकनपुर कौ राय है; उत निकस्यौ हौ आय।
उनि सुर मार्‌यौ बांनसौं; मौकौं लयौ जिव़ाय॥

चौपई-88

मोसौ बहु कीनौ उपगार। व़हु भईया हौं बहन बिचार।
व़ाकौं हौं अपनैं संग लाई। बाकी इंछा पुजाव़हु माई॥

इंछ्या व़ाकी जौ न पुजाव़हु। तौ हमकौं इत नाहिंन पाव़हु।
कहिधौं सुता कौंन धौं बात। तेरे लयें करूं बहु घात॥

चौपई अर्द्धाली

नेह सुकेसी कैं यहु डोलत। मोसौं भेदु आपुनौ बोलत।

दोहा-88

हाहा मात पंईया परौं; देहि सुकेसी आंन।
मेरौ औ उंहिं कुंव़र कौ; ज्यों सुख पावै प्रांन॥

चौपई-89

मात कह्यौ काहेउ अकुलात। हौं करिहौं तुव़ मन की बात।
यह चिंता जिन चित कौं देहु। व़ाहि मिलाऊं जासौं नेहु॥

सुरपति कंव़र लय़ौ जब टेर। गरैं लगाइ रह्यो बहु बेर।
राइ कह्यौ मन धीरज राखहु। हंम करिहैं जो हमकौं भाखहु॥

चौपई अर्द्धाली

हमैं मिलाय़ौ मिंत हमारौ। तुम्हैं मिलावै़ सिरजन हारौ।

दोहा-89

बहु धीरज दै कंव़र कौं, राख्यौ नीकी ठौर।
राजा रानी चौंप सौं, करी सुकेसी दौर॥

चौपई-90

सुरपति सैल चढ्यौ दिनु ये़क। घोरा हाथी संग अनेक।
देख्यौ ये़क हाट कैं बार। महानंद बैठ्यौ है य़ार॥

सुरपति उतरि तुरी तें धाय़ौ। महानंद आनंद गर लाय़ौ।
अपने डेरैं आंनि न्हुव़ाय़ौ। नीकौ पाटंबर पहिराय़ौ॥

चौपई अर्द्धाली

कथा बिथा कथि दहुनि सुनाई। जो चित बितई रसना आई।

दोहा-90

दहनु दुख पाय़ौ बहुत; पै चित रंच न चिंत।
आस भई है मिलन की; दरख देखि हौ मिंत॥

चौपई-91

सुमिरन करत सुकेसी नांम। बीतत छिंन छिंन तिल पल जांम।
सुरपति दिन दिन होत मलीनौ। दरस चौंप अति आतुर कीनौं॥

उठि निरमलदे कैं ढिगु आय़ौ। कह्यौ बहन मैं बहु दुख पाय़ौ।
हा हा प्रीतम आंनि मिलाव़हु। कर गहि बूडत पार ल़गाव़हु॥

चौपई अर्द्धाली

जासौं कहत सुकेसी नारि। सांच सकारैं आवनहार।

दोहा-91

भोर भयें तुम जाईयौ; उपबन, रहौ न भूल।
हौं संग लैकैं आइहौं; देखन कौतिग फूल॥

चौपई-92

सुनत बात यहु अंग न माय। ऐसौ समयौ कहां समाइ।
हरषवंत आयौ ढिंगु मिंत। यैक्वै रही न चितु मैं चिंत॥

चतुर पहिर निसि नीद न आई। दिनकर ही कैं ध्यांन बिहाई।
बिन रबि देखैं अचवत नाहिं। ऐसी चौंपन इह चित मांहिं॥

चौपई अर्द्धाली

सब निसि बीत गई बिललात। ज्यौं चकवा चकवी कौं जात।

दोहा-92

जे निस जागैं ध्यान मैं; तेई पावंहिं मींत।
मिलन अमोलिक जांन कहि; (आवै) हाथ न सीत॥

चौपई 93

भोर भयें उपबन कौं धाये। पंडति बहुत संग लै आये।
सुरपति बैठ्यौ सभा बनाइ। यहै कहत अछ्छिर कब आइ॥

अति चाइंन गाइंन बहु गावहिं। हा हा मिंत बेग अब आवहि।
ज्यों ज्यों सुनियां आवन पीय। चौंनी चौंप बढतु है जीय॥

दोहा-93

मनभांवन आवन सुनत; चौंनी उपजी चौंप।
आनंद की बरिषा भई; उलही सुख की कौंप॥

चौपई-94

अबहिं सुंनहु परसोत्तम कुंव़र। भली भली बातनि के भंव़र।
हौं औ मात चतुरपुर धाई। और बार आव़त त्यों आई॥

आगैं निरमल देखी ठाढी। महाहरष तन मन मैं बाढी।
धाइ प्यार सौं गरैं लगाई। माता यह़ै कह्यौ कब आई॥

चौपई अर्द्धाली

नैकु हमारौ बिलगु न मांनहु। हम नहिं जांनत नीकैं जांनहु।

दोहा-94

सुनत तिहारौ आइबौ; उपजौ चैन अपार।
नैकौ ढील न करत हम; आव़त व़ाही (चाही) बार॥

चौपई-95

अबहिं कहौ हम सौं सब बात। उहिं सुर सौं छूटे किहि घात।
मोकौं तौ यह़ु अचिरज आव़त। अैसौ कौन जु तोहि छिडाव़त॥

निरमल सिगरी बात बखांनी। गर्भ रही हौं सुनत कहांनी।
सुनत बात यह़ु अचिरजु रहिये़। सुरपति कै सुरपति (ही) कहिये़॥

दोहा-95

कहा सु मानस तुछ्छ तन; इत आयौ़ किंहिं भेव़।
यह़ु अचिरजु है कौन बलु; मार्यौ वैसौ देव़॥

चौपई-96

निरमल कह्यौ सुनहु समझात। जौ मौसौं पूछी तैं बात।
उदैसिंध या़कौ है तात। दुरगाव़ती नांव़ है मात॥

कंकनपुर रहिबे की ठांव़। सुरपति कंव़र कहत है नांव़।
है कुल-मंडन गोत पंव़ार। तेरैं हित सोधत सैंसार॥

चौपई अर्द्धाली

जा दिन तें उपज्यौ तुव़ नेह। चरन बया़रि भये़ चखि मेह।

दोहा-96

नैना रहैं न रुदन तें; ना चलिबे तें पाइ।
रसना रहै न नांव़ तें; हित घट य़है सुभाइ॥

चौपई-97

सुनत बात चितु रह्यौ न ठौर। अचिरजु मैं अचिरजु भय़ौ और।
मोहि व़ाहि कब की पहिचांन। कहां पगतरी कहां सुकांन॥
हौं तौ व़ाकौ नांव़ न जानौं। अंनमिलती बांतैं क्यौं मानौं।
काके लीजत नाव़ हमारौ। बूंदी अगिन बरै बरव़ारै॥

चौपई अर्द्धाली

निरम (ल) कछू न रखी दुराइ। ये़क येक भाषी समंझाइ।।

चौपई-98

सुनत बात हिय़ गहिबर आय़ौ। मेरैं काज इतौ दुख पाय़ौ।
जौ उहु मरत हमारैं दुख मै। मो कैसैं बिधि राखत सुख मै॥
अब व़ाकौं जिन राखहु न्यारैं। मरि जैहै सिर पाप हमारैं।
मोहि बताव़ कहां व़हु आहि। ये़क बार देखन की चाहि॥

चौपई अर्द्धाली

निरमल कह्यौ बाग मै आहि। उठि चलि जौ- देखन की चाहि।

दोहा-98

निरमल परमल संग लै; गई सुकेसी बाग।
रूप दगत पानिपु भरित; ज्यों सागर में आग॥

चौपई-99

चलत चलत जौ आगें आई। देखी नीकी सभा बनाई।
ताहि बीच डिठ आय़ौ कंव़र। कंव़ल बदन भूल्यौ मन भंवर।
थकित भई मुख बकत न आवै़। चक्रित रही तन सकति न पावै़।
कहा बाट निरमल तैं पारी। कतहौं बिरह उदधि मै डारी।

नोट : दोहा सं. 97 प्रति में उपलब्ध नहीं है।

चौपई अर्द्धाली

अब कैंसैं कैं निकस्यौ जाइ। परी सनेह भंवर मै आइ।

दोहा–99

इक टक झांकत हीं रही; भरि न सकत हौं गैंन।
बूडी पैमु समुद्र मै; जौ जल मांहिं पुरैन॥

चौपई–100

सुनि निरमल दे मेरी बात। अब ठाढी ह्यां करहु कनात।
ता मधि करिहैं नान्हें छेद। निकट होइ देखौ छबि भेद॥

तत छिन ठाढी करी कनात। देखि देखि कुंवरहिं मुरछात।
छेद न होंहि आहिं द्रग तारे। जासौं सूझत पर्म पियारे॥

चौपई अर्द्धाली

कै कनात राजनी रंध्र तारे। तिय ससि मुख के बंदन हारे।

दोहा–100

चरन पलोटैं चाव सौं; ते पावन हैं पांन।
पिय प्यारे जिहं देखिये; धन तेरे ते जांन॥

चौपई–101

निरमल दे सुरपति ढिगु आई। अबहि कंवर मोहि देहु बधाई।
रीझ्यौ हौ सुनि जाकी बात। सो बैठी मधि याहि कनात॥

नै सुक सुनत हमारी बात। कुंवर पर्‌यौ सुधि रही न गात।
बहुरि चेतकैं लाग्यौ गांवन। धंन धंन आज द्यौंस मनभावन॥

चौपई अर्द्धाली

आवतु है प्रीतम की बास। बाढतु है जिय अधिक हुलास।

दोहा–101

आवत नास सुबास अति, तन मन होत हुलास।
प्रीतम आये पास चलि, पूजी मन की आस॥

चौपई-102

पाछैं कंवर जिते दुख पाये। ते सभ मेरैं आगैं गाये।
सुनत बात जिय़ गहि भरि आयौ। टपकत नैंन मनौं झर लायौ॥

तब मैं कह्यौ आपुनी गांइन। वैहूं गावन लागीं चाइन।
सुरपति अैसी बात न कहिये। बोलैं झूंठ कहां कछु लहिये॥

चौपई अर्द्धाली

तेरौ प्रीतम है इत कौंन। काहें बकत न साधत मौंन।

दोहा-102

आहि सुकेसी अपछरा। तूं मानस बुधि थोर।
चंद निकटि आवत नहीं। जौ पचि मरै चकोर॥

चौपई-103

ससि चकोर कैं निकटि न आइ। तौऊ देखत दरस अघाइ।
हौं चकोर, ससि मुख परसावहु। बिच ते जलद कनात उडावहु॥

दरस देहु मो जीवन मूर। करहु कनात जमनिका दूर।
खोई बुद्धि पेमु की बात। तब निकसी हौं फारि कनात॥

चौपई अर्द्धाली

जब हौं डिस्ट परी उहिं आइ। तब सिगरी बुधि गई बिलाइ।

दोहा-103

देखत ही सुरपति पर्‌यौ; हर्‌यौ सुकेसी प्रांन।
सुधि बुधि गई बिलाइकैं; नैकौ रह्यौ न ग्यांन॥

चौपई-104

देखहु कहा तबहि मै कीनौं। वाकौ सीस गोद मैं लीनौं।
अंसुवन कैं जल छिरक्यौ भारी। अंग अंग चेतें आंख उघारी॥

मोहि देखि फिरि भयौ अचेत। दुबिधाई करि राखी हेत।
फिरि छिरक्यौ मै बचन अमीकौ। तबहिं जाइ देख्यौ है नीकौ॥

दोहा-104

हौं उठिकैं ठाढी भई; जब वहु भयौ सुचेत।
यहै कहत आवहु निकट; करनहार कैं हेत॥

चौपई-105

ह हा लेउ मोकौं गर लाइ। जौ मो तन की तपति बुझाइ।
तबहिं कह्यौ मैं सुनिहौं बात। तूं मानस हम अछ्छिर जात॥

हम तुम अैसी बात न होइ। कहौ सुनौ कोटिक बर कोइ।
कौंन गांव के तुम, हम कितके। अपनें अपनें जइहैं जितके॥

चौपई अर्द्धाली

हम तुम निकट, बिकटि करि जानौं। येक गांठि सौं फेरि न मानौं।

दोहा 105

पंछी सौं पंछी मिलै; पसु सौं पसु की रीत।
अछ्छिर अछ्छिर रीझिहैं; मानस मानस प्रीत॥

चौपई-106

सुनत बात सुधि गई बिलाइ। कुंवर पर्यौ धर पर मुरछाइ।
तबहिं दया उपजी मन मांहिं। कहौ कहां लौं करिये नांहिं॥

तबहिं कह्यौ मैं सुनि सुख प्रांन। करिहौं येक बात की आंन।
तौ हौं तेरें नेरें आऊं। तन मन पोषौं गरै लगाऊं॥

चौपई अर्द्धाली

नांव सुरति कौ भूलि न लेहु। तौ हौं करिहौं तो सौ नेहु॥

दोहा-106

कंवर कह्यौ या बात की; सौंह करौं सै बार।
नाउ लेउं जौ सुरति कौ; तौ रूसौ करतार॥

चौपई-107

तबहिं कंव़र कै नेरैं आई। उन अति हित सौं गरैं लगाई।
दहूं व़ोर की तपति बुझाई। असुंव़निं सौं छतियां छिरकाई॥

उतरि गई तन तें जुर मैंन। अंसुव़ा नाहिं स्वेद है अैंन।
दोऊ बैठे सनमुख संग। देखि देखि हरिषत अंग अंग॥

चौपई अर्द्धाली

धन सु महूरत धन य़हु घरी। जामै करता क्रिपा करी।

दोहा-107

जामै पिय़ प्यार्‌यौ मिलै; हरै चिंत सब प्रांन।
पल पल बलि-बलि जाईये; तिहं पल परि कहि जांन॥

चौपई-108

पिय (पीय) मिलन की मोहन बात। नैकौ रसना कही न जात।
रौंम रौंम हीं नीकैं जांनहि। मिलि मिलि पिय़ अंग संग रति मानहि॥

देखन कौ सुख जानहिं नैंन। रसना नाहिं सुभाषहि बैंन।
अंम्रित बचन सुनत हैं कांन। कहा जीभ बिनु करंहिं बखांन॥

चौपई अर्द्धाली

रसना कहत सु नैना नाहीं। भेदु तकें बिनु कहे न जाहीं।।

दोहा-108

पिय़ मिलिबे कौं रंगु रसु; मंन काहूं न लखाइ।
जौ कहिये़ तौ जान कहि; कहूं कह्यौ ना जाइ॥

चौपई 109

केल करत चित-चिंता नाहिं। प्यालौ पीवत पल-पल माहिं॥
ह्वै मतवारौ गरैं लगाई। ताही मैं सुख निद्रा आई॥

सोइ गये हम प्रीतम दोऊ। करता चाह्यौ होइ सु होऊ।
ढील भई तब माता धाई। मो ढूंढन उपबन मै आई॥

चौपई अर्द्धाली

सोवत देखी प्रीतम संग। फीकौ होइ गयौ मुख-रंग।।

दोहा-109

निरमल परमल देखिकैं; बोली माइ रिसाइ।
कहा बाट पारी तुम्हैं; या उपबन मैं आइ॥

चौपई-110

काके संग सुवाई धीय। हियरा धरकत निकसत जीय।
अैसी कबहूँ भई न होत। यहु मानस हम अछि्छर गोत॥

सांची कहौ आहि यहु कौंन। अबहिं कहा है साधें मौन।
अछि्छर गोत कलंक चढायौ। तुम्हतें हम नीके फलु पायौ॥

चौपाई अर्द्धाली

मैं तौ तुम्ह तनंया करि जानी। अबहि दूतिका है प्रगटानी।

दोहा-110

मात बात याकी सुनहु; तौ तुम्ह नाहिं रिसात।
कंकनपुर कौ राय है; औ पंवार वह (यह) जात॥

चौपई-111

बडी जाति ये तीन बिचार। चाहुवान तूंवर, पंवार।
बहु दुख सहे सुकेसी काज। करता आप मिलाये आज॥

जे जे दुख सुरपति हे पाये। माता आगैं सबै गनाये।
जेती बात कही बिललाइ। माता कैं मन दया न आइ॥

चौपई अर्द्धाली

चेरी अब जिन गहर लगावहु। इन दहुंवन कौं बेगि उडावहु।

दोहा-111

मतवारे जागे नहीं; गई अछिर लै धाइ।
अपनैं अपनैं नगर मैं; जुगल दये पुहंचाइ॥

चौपई-112

भोर भयें मैं आंखि उधारी। देखैं कहा कहौं दुखियारी।
ना वहु प्रीतम ना वहु बाग। ना वै सखियां ना अनुराग॥

ना वै तखना पंछी बोलन। ना वै ललित लता कल डोलन।
ना वहु सीतल मंद सुगंध। परभंजन भंजन दुख फंध॥

चौपई अर्द्धाली

ना गुंजत वै अलि ना अलिनी। ना वै प्रतांन निचै नलिनी।

दोहा-112

ना वह ठांव न गांव उहु; ना वहु मूरति मैंन।
ना वहु चितवनि चितहंरन; ना वै अंब्रित बैंन॥

चौपई-113

सब लछि्छन बिपरीति जनाये। जे अपनें, ते भये पराये।
मानहु घर खैबे कौं धावै। बाताइन की बात डरावै॥

डरौं कपाट धाइ जिन गहिहै। निसि दिन द्वारे ठाढे रहिहै।
करी करीज्यौ दाबत मानहु। आरौ तौ आरौं सौ जानहु॥

चौपई अर्द्धाली

छाती पर तें टरत न छात। कहूं कहां लौं घर की बात

दोहा-113

घर मोपर घेरौ कियौ; धरी न छाडत पास।
प्रांनपती प्रीतम बिना; निस दिन रहौं उदास॥

चौपई-114

पलका पल कौं पौढौं नांहिं। कौंछ होइ लागत तन माहिं।
आंन सेज पर पुहप बिछाऊं। कंटिक होंहिं नीद नहीं पाऊं॥

रूसी नीद नैन नहीं आवति। जेतक हौं आधीन बुलावति।
ना सोवहिं पिय गर दै बांहीं। तौ लौं केहूं आऊं नाहीं॥

चौपई अर्द्धाली

पहलै अंसुवनि धोइ बहावंहि। बहुरि नीद, बौरी कत पावंहि।

दोहा-114

मन छिन धीरज ना धरत; निस दिन रहत उदास।
धीरज कौ धीरज गयौ; नैकु न आवै पास॥

चौपई-115

फेर फेर बूझूं मन अपनौ। प्रगट हुतौ कि देख्यौ सपुनौं।
छिन आंखिन तें दूरि न जात। ये तौ ना सपुनै की बात॥

मोहि अभागिनी बिरच्यौ दई। प्रगट बात सपुन ह्वै गई।
मिलिबौ गंध बिछर बौहार। तौ काहे डारी जंजार॥

चौपई अर्द्धाली

बिछुरि भयौ अैसें दुखदाई। परथम कत लालिसा लगाई।

दोहा-115

उर गुरु स्वासन जरतु है; झरत नैन दिन-रात।
तन सीरौ पीरौ बदन; बीरौ नाहिं सुहात॥

चौपई-116

उहु अछ्छिर जिन कंवर उडायौ। लै वाकैं घर मैं पुहंचायौ।
फिरि आई, तब पूछी धाइ। किये निहोरि पानि धरि पाइ॥

बात कंवर की मोसौं भाख। जो देखी मन नाहिन राख।
कौंन ठांव लै जाय सुवायौ। कंवर जागि केतौ दुख पायौ॥

चौपई अर्द्धाली

मात तात कैसें सुनि आये। किहिं विधि कूंवर गरैं लगाये।

दोहा-116

कथा कंवर की बिथा की;पईयां लागौं भाष।
प्रीतम बतियां सुनन कौं; बहुत बढ्यौ अभिलाष॥

चौपई-117

अछिर कह्यौ कंवर लै गई। उदैसिंघ मंदिर मै भई।
पलिका येक डसायौ पायौ। तापर कंवर आनि पौढायौ॥

देखौं कहा करै धौं जागि। दुरी रही हौं कौरें लागि।
भोर भई तौ बिरहा आयौ। लातनि मार्‌यौ कंवर जगायौ॥

जागि कंवर जेतौ निरझावै। बिरह बिना कछु डिस्ट न आवै।

दोहा 117

ना वह बागन राग उहुं; नाहिन वहु अनुराग।
ना वहु चित की चोर है; ना वहु मस्तकि भागु॥

चौपई 118

ना वै तरवर ना वै छहियां। ना गर पीतम नागर बहियां।
ना सुनियत पंछिन कौ नाद। ना वै म्रिद्यु करना फुलवाद॥

ना वै लता रूप लपटांनी। ना वै निरमल परिमल रांनी।
हाइ हाइ करि कंवर पुकार्‌यौ। लै पलिका-पाइन सिर मार्‌यौ॥

चौपई अर्द्धाली

दोइ बरिष दुख पावति पाई। लै अभाग सु बहुरि छपाई।

दोहा-118

बहुरि कहां धौं पाइहौं; वह मन पोषनहार।
बिनु पायें जीबौ कठिन; कहा करौं करतार॥

चौपई-119

करत बिलाप सुनी सुत बानी। आये दौरि राय औ रांनी।
धाय कंवर लै गरैं लगायौ। जाकैं लये मरत सो पायौ॥

देखे कंवर पिता औ माइ। मौंन गही तब मनहि लजाइ।
फिरि पूछ्यौ यहु कैसी ठांव। ऊजर है कि बसतु है गांव॥

चौपई अर्द्धाली

राय कह्यौ तुम्हं, जानत नाहीं। बैठे हौ अपने घर माहीं।

दोहा-119

कंकनपुर यहु नग्र है; जहां रहत तुम्ह नित्त।
लाड दुलारौ चेति अब; जिन भरमावै चित्त॥

चौपई-120

रानी राइ कंवर समझावैं। ना समझत त्यों, त्यों दुख पावैं।
राजा डरत भाजि जिन जाइ। पल पल मांहिं, संभारत आइ॥

कंवर पास पाहूरू बिठाये। तुम जानहु जौ निकस न पाये।
चतुर जांम पाहरू न सोवहिं। रोवत देखि कंवर कौं रोवहिं॥

चौपई अर्द्धाली

बिलक कंवर रोवत बिललात। चार पहर बीतत हैं रात॥

दोहा-120

काहू सौं मन ना मिलत; दुख पावत है प्रांन।
देखहु पैमु अनीत तुम; घर हीं भयौ उद्यान॥

चौपई-121

जिहि घर, घर मैं मिंत न लहिये। ना वहु घर ना वहु घट कहिये।
जिहिं घट मैं नाहिन पिय प्यारौ। बिनु दीपग मंदिर अंधियारौ॥

जिहि जिय घट ना बल्लभ चाहि। वहु घट, घाट सबनि ते आहि।
सोचत कंवर कौन विधि जईये। दुख मै दुख यहु जान न पईये॥

चौपई अर्द्धाली

बैठे तकहिं पाहरू कोरि। चलन न देत पिय की बोरि।

दोहा-121

काम मोह तिसना लुबध; माया, क्रोध, रिसांनं।
चलन न दै पति पंथ कौं; हैं (बिपाश) बिपाष कहि जांनं॥

चौपई-122

कंवर यहै जिय माहि बिचारी। जांन न लहूं बहुत रखवारी।
आधी रात झरोखा आयौ। सलिता बहत देखि ललिचायौ॥

पर्‌यौ कूदि सलिता कैं मांहिं। बिन करता जानत को नाहिं।
चल्यौ पैर बिरहै पैरायौ। कई कोस निस ही मैं आयौ॥

चौपई अर्द्धाली

कोऊ वाकौ संगी नाहिं। छांहि रही छपि पांनी मांहि।

दोहा-122

साथी नाहिन देखिये; बिन छहिंयां को आंन।
कै निस बासुर संग चलत; निसु बासुर कहि जांन॥

चौपई-123

भोर भयें राजा सुनि धायौ। सब घर ढूंढ्यौ कहूं न पायौ।
सोध्यौ खोज राय, चहुं वोर। कहूं न लह्यौ लहे दुख कोर॥

जैसे वहु उडिकैं इत आयौ। तैसैं ही उडि कहूं सिधायौ।
करत बिलाप राइ औ रानी। उनहूं या विधि छाडि उडांनी॥

चौपई अर्द्धाली

सुनत बात यह हूं मुरछाई। एक प्रीत तें भई सवाई॥

दोहा-123

मो अपनौ ही दुख दहत, बहुरि सुन्यौ दुख पीय।
द्वै दुख आगैं रहत हैं; तकहु कठिनता जीय॥

चौपई-124

पाछैं तें माता हूं आई। डरी देखि, हौं या विधि पाई।
देत देत सिख हारी भाई। सीख पराई बीष अढाई॥

सोच कर्‌यौ अपनै ज्यो माइ। याकौ बावर पनौ न जाइ।
जौ यहु भेदु और को पावै। तौ हंमरौ सब गोत लजावै॥

चौपई अर्द्धाली

जौ गुरुजन बतियां ये जानीं। पंथ हमारैं पियत न पांनी।।

दोहा-124

जौ याकौ पंछी करहुं; तौ न भेदु उघराइ।
बौरी बतियां पैमु की; प्रगटे गोत लजाइ॥

चौपई 125

अैसौ कछु मोपर पढि डार्यौ। रूप भयौ यहु तुम जु निहारयौ।
कोप भई मोसौं महितारी। अछिछर तें पंछी करि डारी॥

जासौं माता पिता रिसांहीं। वहु पंछी है मानस नाहीं।
हौं उडि चली तबहिं रिस गही। माता देखित देखित ही रही॥

चौपई अर्द्धाली

उडत फिरत दस बरष गंवाये। पैं प्रीतम पल नांहिन पाये।

दोहा-125

दसौ दिस, दस बरस मैं; फिरी भरी दुख चिंत।
कोटि जतन करि-करि रही; कहूं न पायौ मिंत॥

चौपई-126

मास असाढ भये पिय न्यारे। मो तन मन बिरहानल जारे।
चरन धरत धरनी (प) जरि जाइ। ताती कीनीं ग्रीषम ताई।

पीय की सुरति मैन तंन तायौ। बिरह सूर मो अंग तपायौ।
नौतन बादर दीन दिखाई। बरषि धरा की तपति बुझाई॥

चौपई अर्द्धाली

मेरे नैंन रहे झर लाइ। तौऊ तन की तपति न जाइ।

दोहा-126

जैसैं जलधर बरसि है; त्यों द्रिग बरसहिं नित्त।
तौऊ मिटत न तपति तन; बिन देखैं मुख मित्त॥

चौपई-127

बहुरौ भयौ जगत मैं सांवन। व्याकुल कीनी बिनु मन भांवन।
स्याम घटा उमडत चहुंधातें। बादर बरसत होंहिं न हांते॥

घटा कंरी बरसन मद जानंहुं। अंकुस सऊदंत बग मानहु।
बोलत पिक चातक घंन घोर। कौंधा कौंधत नाचित मोर॥

चौपई अर्द्धाली

मेघ बूंद है तीछछन बांन। छेदत बिरह निकेतन प्रांन।

दोहा-127

अरुन बंसंन संजोगनी; पेन्हत है करिचाइ।
अंसू रक्त मैं बिरहनी; पहरत बसंन रंगाइ॥

चौपई-128

जबतें भादौं कर्यौ प्रकास। डिस्ट न आवै धर आकास।
उत बादर (क्रि)त है हरियार। होइ रह्यौ घन कौ अंधियार॥

डिस्ट न आंवहिं घन संपूर। निस उडिगनिं ससि, दिन कौं सूर।
द्यौस रैन मैं अंतर नांहिं। ग्यांन करें हू लखे न जांहिं॥

चौपई अर्द्धाली

दामिनि दीपग जौ ना होत। निस बासुर ना होत उदोत॥

दोहा-128

पीतम बिन जी, तम-बिकल; कछु न सूझत नैंन।
काजर की रैंनी मनौ; कारी भादौं रैंन॥

चौपई-129

जब आयौ जग मास कवार। घंन जल सुष्यौ अगस्त निहार।
मों तन पैंमु अगस्त प्रकास। करी रूप-पानिंय की नास॥

स्वात पपीहा पाई स्वात। हौं पिय बिन निसदिन बिलकांत।
सारस बोलहिं फूलहिं कांस। बिरहु आइ रूध्यौ मो सांस॥

चौपई अर्द्धाली

खंजरीट द्रिगु देउं न अंजन। तरसत हैं ज्यौं तिल कौं खंजन।

दोहा-129

मकर चंदनी निस भई; संजोगिनी सुख प्रांन।
मोहि दैन दुख संग भये; मानहुं, रैन-बिहांन॥

चौपई-130

कातग सीरौ जग मैं आयौ। मो तन जरत मिंत ना पायौ।
निर्मल चंद जोत चहूं वोर। दरस परस सुख कमुदि चकोर॥

घंन, इंदीबर और चकोर। दूर भयें हू देखत वोर।
मो पति ग्रीवा-नस तें पास। पैं संनमुख ना करत प्रकास॥

चौपई अर्द्धाली

चंद हुतासन ज्यौ मो जारै। अगिन झरप संमं किर्ननिकारै॥

दोहा-130

चंद चांदनी देखिकैं; संजोगिनीं[1] हुलास।
बिरहनि भायें, जरि उठे; धरनी और अकास॥

चौपई-131

अगहन जग हनिवे कौं आयौ। सीत बांनिं बिरहनि उर लायौ॥
चतुर जांम निस कंपति जाति। रौंम रौंम सब तन थहरात।

रैन छमा सी है कहनावति। षट्वर्षन हूं नांहिं बिहावति।[2]
कंवल दुरे जल सीत संचित। कहां दुरैं, हौं, संग न मिंत॥

चौपई अर्द्धाली

कीजत बिखनि चोट तुसारि।[3] बिनि पिय वोटि, गयौ मो जारि।

दोहा-131

सीरख प्रीतम संग बिनु; कबहुं उसन न पाऊं।
और इते पर छिरकि कैं; सीरख[4] बहुत सिराऊं॥

---

1. संजोगिन 2. बिहावत 3. तुसरि 4. सीरप

चौपई-132

सीत समुद्र पूस जगु भयौ। बूडि बियोगनि कौ तनु गयौ।
सीरष मैं कांपै तन नारी। तन मै कंप करेजा भारी॥

तन न्यारौ तातें कंपात। ह्विदै बस्त पति कत थहरात।
जौ प्रगटै हियतें करि पीत। पल मैं मारि भजावै सीत॥

चौपई अर्द्धाली

सीत जराई बिरवनि जोत। तातौ होत कहा तौ होत।

दोहा 132

जतन करैं बहु बिरहंनी; सीरष रषत न सीत।
रोवत धोवत अंग कौं; रैनि जाति है बीत॥

चौपई-133

माह नाह बिन दाहन आयौ। बन जोवन बिरहनी जरायौ।
कीनी माह महापति झार। नागी भई पत्र बिन डार॥

सांइ सांइ बोलत हैं डारी। सगरी निस झरपति है नारी।
देखे जबहिं पत्र तरनाहिं। छाडि गई बिर्छन कौं छांहिं॥

चौपई अर्द्धाली

पंछीयौ बोलत ना आइ। निर्धन कौं को मुख न लगाइ।

दोहा-133

मो संगति कहिं न मिंत कौं, भई ब्रिछ की रीति।
निस बासुर दुख देहु हैं; मनमथ बिरहा सीत॥

चौपई 134

जब फागुन आयौ सैंसार। सीर तींछन चली बयार।
बिरहनि कैं निकसत हैं पार। अैंन मैंन ग्यासी उनिहार॥

संजोगिन मिलि करंहिं धमाल। बानहिं बीन पखावज ताल।
उडत गुलाल धरा रतनारी। बिरहनि रति रोवति है भारी॥

चौपई अर्द्धाली

वै हंसि हंसि, मुख, राग उचारति। ये रोवति पीय पीय पुकारति॥

दोहा-134

होरी रचहिं संजोगनी; खेलैं हर्ष हुलास।
ते जरि बरि होरी भईं; मिंत नहीं जिहिं पास॥

चौपई-135

बिरहनि ऊपर आयौ चैत। जोध बिर्छ करे पखरैत।
बोर दंत अंबुवा गज कारे। लगहिं भयावन भारे-भारे॥

ढाक संजोगनि सुधर तना रे। चिंत बियोगिनिं तें कछु कारे।
पाइक भंवर सनमुख आवैं। फूल फरी मैं आप दुरावैं॥

चौपई अर्द्धाली

बिरहन कौं कोविल की कूकि। लागत गोली मनहु बंदूक।

दोहा-135

रंग करत संजोगनी; निस बासुर संग कंत।
बिरहनि कौ ज्यौ लैंन कौं; अंतक भयौ बसंत॥

चौपई-136

आयौ जबहिं मास बैसाख। संजोगिनी बाढ्यौ अभिलाष।
सुफल बिर्छ देखत सुख पांवहि। प्रीतम संग उमंग बिहांवं हिं॥

जिन बिर्छन कैं पत्र न होत। पाई अबहिं फलन की जोत।
मेरे चैन पात झरि परे। पैं अजहौं लौं भये न हरे॥

चौपई अर्द्धाली

पति बसंत बिन देही छीजै। ह हा बिरंच दरसु फल दीजै।

दोहा-136

जाकैं अंग संग लाल है; सुफल वहै जगु नारि।
बिरहनि बपुरी लागि है; ज्यौ फागुन तर-डारि॥

चौपई-137

तातौ जेठ जगत मैं आयौ। लूयनि सौं सब जगत जरायौ।
बिरहनि कीजै चंदन खौर। अगिन होइ जारै सब ठौर॥

जौ उसीर कौ सदन बनावै। ता मधि पलिका पुहप डसावै।
बिरहनि लै दुख स्वास निसंक। जरै उसीर पुहप परजंक॥

चौपई अर्द्धाली

बिरहनि जौ राखै मुख पूर। कछु सीतरता दै न कपूर।

दोहा-137

अब लौं प्यारौ ना मिलौ; भये बरस दस मोहि।
बरष, बरष यहं विधि गयौ; प्रगट कियौ सो तोहि॥

चौपई-138

खेरे खूंट गांव पुर पाटंन। कहूं नांहिं पायौ दुख काटंन।
बंन घंन उपबन सकल निहारे। कहूं नाहिं पाये ज्यो प्यारे॥

सदन तिहारैं बैठी आइ। देखि तोहि उपज्यो चितुचाइ।
ये ते मैं हूं तुव डिठ आई। मो छबि तन मन नैननि भाई॥

चौपई अर्द्धाली

हौं पुनि देखत दया दयाई। जानि बूझि जारी मैं आई॥

दोहा-138

नीकौ मानस देखिये; हौं रहिहौं बा संग।
जिन केहूं चिंता घटै, लटै बियोग अनंग॥

चौपई-139

कंवर बात सुनिकैं थरहर्‌यौ। हाइ हाइ मुख तें कहि पर्‌यौ।
बहुरि चेत बोल्यौ सुनि रांनी। सुनी न ऐसी कभूं कहांनी॥

तेरौ ज्यो अति कठिन कठोर। सहे कोरि दुख तजी न खोर।
भई सु गई अबहिं घर धीर। जौ लौं है ज्यो मोहि सरीर॥

चौपई अर्द्धाली

ढूंढत फिरूं, न फिरि घर आऊं। जौ लौं तुम्ह उन्हं नाहि मिलाऊं।

दोहा-139

बहन मोहि तू धर्म की; जरम न दै हूं पीठ।
तौ लौं संग न छाडि हौं; प्रीतम परत न डीठ॥

चौपई-140

राजपाट छाडौं तुव काज। निकसि चलौं आधी निस आज।
जानें बिना कहां कौं जै हौं। पै हौं दुख वाकौं कित पैहौं॥

सब बातिन समरथ करतार। मन की इंछ पुजावन हार।
नीकी घरी कंवर तब साधी। पिंजर लै निकस्यौ निस आधी॥

चौपई अर्द्धाली

सिध्ध जोग पायौ उनमानि। होत संग गन लागैं हांनिं।

दोहा-140

कुंवर चल्यौ उपगार कौं; सिर पर पिंजर लीन।
परसोत्तम, पर दुखुं, हरन; दई जगत मैं कीनं॥

चौपई-141

प्यास न, भूख, न निद्रा आवै। निस और बासुर चलत बिहावै।
जेते दुख परसोतम लहे। ते ते रसना जाति न कहे॥

लेखनि हूं सौं, लिखे न जांहिं। उन द्वै बिना लखे को नाहिं।
पैमुपुरी कैं मारग जांहिं। उति उद्यांन मिलत को नाहिं॥

चौपई अर्द्धाली

चलत गये द्वै बरष बिहाइ। पैंमुपुरी तब पुहचे जाइ।

दोहा-141

उपबन में पिंजर धर्‌यौ; आप गयौ चलि गांव।
देखत हीं घेरौ कियौ; अछिर पूछहिं नांव॥

चौपई-142

तूं मानस कैसैं इत आयौ। यह अचिरज किंम आवन पायौ।
कै तौ तू कोऊ बौरानौं। कै इत आयौ पंथ भुलानौं॥

ना हूं भूल्यौ, ना बौरायौ। दैन संदेस सुकेसी आयौ।
अछिरनि धाइ कही यह बात। आई दौरि सुकेसी मात॥

चौपई अर्द्धाली

कहु भईया किततें तूं आयौ। कहा संदेस सुकेसी लायौ॥

दोहा-142

दोइ बरस मारग चल्यौ; सिर पर पिंजर लीन।
इत पुहचे बहु देखि दुख; करता किरपा कीन॥

चौपई-143

परी, रूपनिध ततछिन, पाइ। हा हा पिंजर बेगि लै आइ।
कंवर जाइ पिंजर लै आयौ। लै पिंजर माता गर लायौ॥

बहुरि मंत्र पढि सुमिर्‌यौ दई। पंछी तें अछि़र ह्वै गई।
लै तनयां कौं घर मैं आई। मिहली आइ सब बहनी भाई॥

चौपई अर्द्धाली

मात कहत दै सुता बिचार। यहु मानस को रूप अपार।

दोहा-143

सिरी नग्र कौ राइ है; परसोतम यह नांम।
राज तज्यौ मेरैं लयें; छाडे कंचन धाम।

चौपई-144

कही सकल मैं अपंनी बांत। मेरौं दुख ब्याप्यौ इंह गात।
राजपाट घर बार गंवाइ। मैरैं लयैं फिरत है माइ॥

सुनत बात यहु रीझी माइ। तब परसोत्तम लयौ बुलाइ।
कहत रूपनिधि, धंन तुव मात। धंन तुव जात पांत धन तात॥

चौपई अर्द्धाली

दई सुकेसी मैं तौ तो कौं। करौ विवाहि होइ सुख मोकौं।

दोहा–144

कंवर कह्यौ माता सुनहू; जानत नाहिं बिचार।
यह तौ मेरी बहंन है; कहा देत हौ गार॥

चौपई–145

येक बात चाहूं चित मांहीं। जौ मो देहु, देहु तौ बांहिं।
ततछिंन दई रूप निध बांहिं। कहा करौं हौ तुम सौं नाहिं॥

यहै आहि मेरौं चितु चाइ। सुरपति सौं यहं देऊं मिलाइ।
कह्यौ रूपनिधि अैसैं करिहूं। जो तुम्ह कहौ सु द्रिग पर धरिहूं॥

चौपई अर्द्धाली

पैं वाकौ दस वरिष बिहाये। जीवत मरत संदेस न पाये।

दोहा–145

तैं मोसौं चहुंवाने जू; बहुत कियौ उपगार।
जो मागहु सो देत हौं; प्रान करौं बलिहार॥

चौपई–146

कंवर कह्यौ इक जन दौरावहु। चतुरपुरी तें यहु सुधि पावहु।
वाकौ गांव, ठांव कुल, जात। निरमल दे जानत सब बात॥

येक परेवा तबहिं पठायौ। अपनौ बिरह सुकेसी गायौ।
तूं तौ मेरैं ज्यो की प्यारी। हौं दुख पाऊं तो तैं न्यारी॥

चौपई अर्द्धाली

तैं हूं बिरह उदधि मै दीनी। बहुरि न सुरति हमारी लीनी।

दोहा–146

सजनी, रजनी, ध्यौंस, दुख; गये बरस दस बीति।
सुरति हमारी ना करी; अैहों तेरी प्रीति॥

चौपई-147

जौ अपनौं दुख सकल बखानौं। कागर इते कहां तें आंनौं।
कहत न आवैं, लिखे न जाहिं। मन की बिपति रहै मंन मॉहिं॥

जिहं, जिहं भांति सुकेसी आई। निरमल सौं बतियां प्रगटांई।
अब मो ऊपर मात दयानी। करिहै बात मोहि मनमानी॥

चौपई अर्द्धाली

अब सुरपति की सुरत मंगावहु। पईंया लांगौं आनि मिलावहु।

दोहा-147

मात-पिता सौं भूलि कैं; अबहिं न ह्वै हौ रोस।
जौ मिलबे की चिर भई; तोकौं औगुन दोस॥

चौपई-148

गयौ परेवा लैकैं पाती। निरमल बांचि सिरांनी छाती।
नीकी बात भई घर आई। जननी तपति सुकेसी पाई॥

मोहि चिंत उपजी है भारी। दयौ संदेसौ कठिन दुलारी।
भये बरस दस अब कित जैहौं। कहां सुरत सुरपति की पैहौं॥

चौपई अर्द्धाली

महानंद उत हौ दुखियारौ। पूछ्यौ टेरि कहां वहु प्यारौ।

दोहा-148

जा दिन के इंहं बाग तें; बिछुरि भयौ बैराग।
मो वाकी कछु सुधि नहीं; कहां गयौ लघु भाग॥

चौपई-149

बात कहत अैसैं ही खरी। सुरपति भनक कान में परी।
तामहि चेरी भाष्यौ धाइ। सुरपति द्वारैं ठाढौ आइ।

सुरपति घर मै लयौ बुलाइ। निरमल फूली आंग न माइ।
होइ रह्यौ ज्यों पीरौ पात। जेतक द्रिग सींचत कुंभिलात॥

चौपई अर्द्धाली

दस बरिषनं, जो बिथा बिहांनी। दहुनि आगैं कही कहानी।

दोहा-149

बिकल भई निरमल सुनत; जल भरि आये नैंन।
झांकि रही ज्यो बाबरी; कहत न आंवै बैंन॥

चौपई-150

बहुरि कह्यौ यों सुरपति प्यारे। अब तुम्हं नाहि रहौ दुखियारे।
जाकैं लयें बहुत दुख पाये। सोमन मोहन तुव करि आये॥

जैसी जुगति न होइ बिहाई। सो सुरपति कौं सब समुझाई।
सुरपति परसोतम की बात। सुनि सुनि अचिरजु रहि रहि जात॥

चौपई अर्द्धाली

उन मोसौं कीनौ उपगार। वैसो कौन करै सैंसार।

दोहा-150

हौं वाकौ चेरौ भयौ; देखि दया अधिकार।
जो उपगार न भानि हैं; तामै कछू बित्गार॥

चौपई-151

अब धीरज धरि सुरपति जिय कौं। मिलिहै बेगि पियारी पिय कौं।
फिरि ऊतर लै चल्यौ परेवा। मन आनंद मनावति देवा॥

ह्वै निरास तुर करमनि पायौ। प्यारौ तेरौ मेरैं आयौ।
जैसी भाँति कंवर दुख पाये। ते लिखि लिखि सब हीं प्रगटाये॥

चौपई अर्द्धाली

परसोत्तम लै बॉची पतियां। सुरपति आयौ सुनि सुख छतिंया।

दोहा-151

धंन धंन सिरजंन हार तूं, पुजवनि मन की चाहि।
मैं संकट जाकौ सहे; सु (तौ) जीवत आहि॥

चौपई-152

बिरथा गई न मेरी सेव। धंन धंन अलिख निरंजन देव।
तबहिं रूपनिधि सौं यौं कह्यौ। भली भई वहु जीवत लह्यौ॥

अबहिं गहर छिन करिये नाहिं। अब उठि चलहु चतुरपुर जाहिं।
उतहिं सुकेसी करि हैं ब्याहि। है मैंरै ज्यो मै यहु चाहि॥

चौपई अर्द्धाली

लैकैं सुता रूपनिध चली। संग सहेली उत्तिम भली।

दोहा-152

मारग लीनौं चतुरपुर; परसोतम कै संग।
चले जातु हैं चौंप सौं; मन मैं महा उमंग॥

चौपई-153

निकट चतुरपुर जाइ लगांनें। संनमुख चढे राइ औ रानें।
मिले चतुर्भुज, जगमनि राइ। अति हितु गरैं रहे लपटाइ॥

नीकी ठाव उतारे आंन। बहुत दयौ भोजन पकवांन।
सुरपति दौरे डेरा आये। परसोत्तम पाइन कौं धाये ॥

चौपई अर्द्धाली

परसोतम लै गरैं लगायौ। मैं तौ तूं दुख पावत पायौ।

दोहा-153

करौं चांम की पांहंनी; तुव पाइन कैं काज।
तौ बदलौ उपगार कौ; कहत, आइ है लाज॥

चौपई-154

परसोत्तम बहुतैं मन पोष्यौ। सांत भई अंग-अंग संतोष्यौ।
अति चितु चाइन ब्याहु रचायौ। करता नीकौ जोर मिलायौ॥

रीत भाँति सब करी बिवाहि। कीजतु है आनंद उछाहि।
ह्वै बिवाह जैसौ घर रायन। तैसौ कर्‌यौ महाचितु चाइन॥

चौपई अर्द्धाली

धँनं धँनं धनँ करतार निरंजन। प्रीतम मिलै बिरह दुख भंजन।

दोहा-154

धंन सु घरी कंचन घरी; मिलहिं भांवते दोइ।
चितु की इंछ्या पूजि है; चिंता रहै न कोई॥

च्रौपई-155

गाइन चाइन चौंपनि गांवेंहिं। राझि रीझि सभ सभा रिझावहिं।
नाचहिं नीकीं पातुर चातुर। चाहत चौंप बढत चितु आतुर॥

नटुवा नाचतु रहे बिराज। सुभग सभा बाजत बहु साज।
दीजतु है गुनियनि कौं भॉन। कीजतु है अनलेखैं दांन॥

चौपई अर्द्धाली

जाचग- सिगरे किये अजाची। आये परतीची लौं प्राची।

दोहा-155

चैंन भरी चातुरपुरी; हरी बिथा सब लोग।
दमकनिं की बरिषा भई; सुरपति मैं कै संजोग॥

चौपई-156

नीकौ पलिका नीकौ सदन। अछिरा कंवर किधौं रति मदॅन।
सदन और परजंक निकाई। काहू भांति न बरनी जाई॥

देखि देखि अति उत्तिम दरस। कंवर चौंप बाढी रस परस।
भरि अंकवार गहे कुच पांनि। कर्‌यौ अधर अंब्रित रुचि पॉन॥

चौपई अर्द्धाली

समयौ देखि सकुच सकुचाई। तन तजि भाजी लाज लजाई।

दोहा-156

कौंन संकुच? को लाज है?; कौन सोच? को कांन।
सरबस बलि बलि दीजिये; जौ आवै पिय पॉन॥

चौपई-157

करिहै कला केल कलोल। गहरी पीति मंजीठी चोल।
दंपति आनंदति हैं भांरे। कंभूं न भये मनहु दुखियारे॥

येक घरी ना छाड़ित पास। करत कोकमति भोग विलास।
निस बासुर सुख मांहि बिहावै। निरमल परमल देखन आवै॥

चौपई अर्द्धाली

येक भये, कहनें कौं दोइ। देखि देखि जिय मैं सुख होइ।

दोहा-157

जे मन मन सौं मिलतु है; अंतर रहै न कोइ।
नित के क्क प्रान हैं; देखन कौं घट दोइ॥

चौपई-158

केल करत दिन रैंन बिहात। परसोतम सौं भाषत बात।
येक द्यौंस परसोतम राय। सुरा लयौ उपबन मैं आइ॥

भयौ जबंहिं मतवारौ भारी। गांवन लाग्यौ दै दै तारी।
हु तौ बाग मैं नीकौ धाम। कौतिग कौं आई (हीं) बाम॥

चौपई अर्द्धाली

गावत कौंन पर्‍यौ मन हौंषें, निरमल झांखी आइ झरोखैं।

दोहा-158

सुनिकैं सब्द कपाट कौं; तक्यौ झरोखा वोर।
परसोतम देखत पर्‍यौ; सुनिन निसि (कै) भोर॥

चौपई-159

संगी लीनौ धाइ उठाइ। कियौ सुचेत नीर छिरकाइ।
फिरि फिरि तकत झरोखनि माहीं। डिस्ट कछू आवति है नाहीं॥

निरमल हूं कौ उपज्यौ नेह। दुर रोवत ज्यों बादुर मेह।
दिन-दिन छीन भयौ हीं जात। परसोतम पियरानौ गात॥

चौपई अर्द्धाली

सुरपति भाषत परसोतम कौं। सेवक करि जानहु जू हंमकौं।

दोहा-159

बिथा कथा अपनी कहौ; ज्यौं हौं करौं उपाव।
हौं सेवक तुम स्वाम हौ; मोतें कहा दुराव॥

चौपई-160

परसोतम बोल्यौ सुनि भईया। कहा करौं हौं दईया दईया।
मेरौ मन बस कीनौ नारि। हौं थकि रह्यौ जु वासौं हारि॥

जब उपबन की बात बखानीं। तब सुरपति नीकैं करि जानीं।
निरमल कहुवा दई दिखाई। परसोतम कौं ढौरी लाई॥

चौपई अर्द्धाली

नैकु देहु जू मन कौं धीर। दई करै हरि हौं दुख पीर।

दोहा-160

जासौं लागे नैन तुम्ह; सुसा हमारी आहि।
यह चिंता जिन चित धरौ; दैहूं आनि बिवाहि॥

चौपई-161

सुनि जिय जाति भई परसोतम। गयौ बिलाइ बिरह कौ जो तम।
तूं वर लीनौ टेरि पंवारि। चाहुवान कौ कियौ विचारि॥

जाइ चतुरभुज सौं तुम्हं कहौ। या तें नीकौ औ (र) न लहौ।
जौ हम सौं कछु जिय मै नेहु। तौ निरमल परसोतम देहु॥

चौपई अर्द्धाली

तूं है मेरौ प्यारौ ईठ। तुम बिन ह्वै है कौन बसीठ।

दोहा-161

महानंद आनंद सौं; गयौ बसीठी काज।
द्वारैं परमल देखिकैं; मुरिछ पर्‌यौ तजि लाज॥

चौपई-162

उति तैं उठि सुरपति पैं आयौ। देखि भांति सुरपति भरमायौ।
कहा चतुरभुज तोहि रिसायौ। फीके बदन उलातौ आयौ॥

हौं तौ वाकी तनयां भार्‌यौ। देखत हीं विहबल करि डार्‌यौ।
कौंन कहै परसोतम बात। मोहि नहीं सुधि अपनैं गात॥

चौपई अर्द्धाली

सुनत बात सुरपति मुसकांनें। परिमल पर अटके जू जांनें।

दोहा-162

काज करौ इन दहुनि कौ; बात सीस धरि लेहुं (लेऊं)
इनतें मोकौं सुख भयौ; हौं अब इन सुख देहुं (देऊं)॥

चौपई-163

तब सुरपति उठि ठाढे भये। चतुरभुजा के नैरैं गये।
प्रथमः भाषी औरैं बात। राइ चतुरभुज मनहिं सुहात॥

पाछैं कह्यौ सुनहूं, जू, राइ। येक बात मांगौं गहि पाइ।
मेरौ बचंन जौ तुम डारहु। तौ मो अपने हाथनि मारहु॥

चौपई अर्द्धाली

कह्यौ चतुंरभुज कहा सुबात। हौं तोपर वारौं ज्यो गात।

दोहा-163

तैं मोकौं निरमल दई; तू है मेरौ स्वाम।
येते जतन जु करतु हौ; है सु कहा वहु काम॥

चौपई-164

सुरपति कह्यौ; सुनौ मो तात। तुम्हं जानत परसोतम बात।
जानि लेहु भाषों सत भाइ। याकी सम नाहीं जग राइ॥

जाकौ मो सम चेरा आहि। कहा बखान करूं बहु वाहि।
महानंद भइया है मेरौ। राखत हूं प्रांनंन तें ने रौ॥

चौपई अर्द्धाली

मेरैं लयें बहुत दुख पायौ। अपनौ राजपाट तजि आयौ।

दोहा-164

परसोतम सुरपति कंवर; महानंद बहुजोर।
तिहुवन येक्कै प्रान है; न्यारी, न्यारी (खोर) षोर॥

चौपई-165

मेरौ कह्यौ मानि किन लेहु। निरमल परमल इनकौ देहु।
ये द्वै बहंन हमारी जानहु। वे द्वे भईया मेरे मानहु॥

सुनिये सुरपति बात हमारी। सोई करूं जो इंछ तुम्हारी।
तेरौ बचन न डार्‍यौ जाइ। सोई करूं जु तुम्हं चितु चाइ॥

चौपई अर्द्धाली

अति चित चाइन ब्याह रचायौ। भली भई सबकैं मन भायौ।

दोहा-165

रीति भांति आगैं भई; ते सब करी उमंग।
परसोतम सुरपति महा, नंद न मावहि अंग॥

चौपई-166

निरमल परमल आईं पांन। बहुत दयौ दहुवनि मिलि दांन।
जैतौ दुख पायौ कहि जांन। नैकु न बरन्यौ जैहै आंन॥

चैन भयौ है अपरमपार। वै जानहि कैं सिरजंन हार।
काहू सौं करि है उपगार। तिनकौ दै बदलौ करतार॥

चौपई अर्द्धाली

भलौं न काहू ब्रिथा जाइ। जैसौ करै सु तैसौ पाइ।

दोहा-166

और न कछु उपगार सौं; याहि सकल सैंसार।
भलौ भलै तें होतु है; दै बदलौ करतार॥

चौपई-167

केतक दिन बीते सुख रंग मैं। नाहिं समावत तीनौं अंग मैं।
तिहुवनि मिलि यह बात चलाई। अबहिं सुरत हम घर की आई॥

बिदा देहु हमकौं अब राइ। मात पिता मुख परसंहि जाइ।
बहुत संचित उनहिं तजि आयो। कहे न जाहिं इते दुख पायो॥

चौपई अर्द्धाली

बिदा देहु सुख सौं घर धावहिं। मत हम उनकौं जीवत पांवहिं।

दोहा-167

बहुत भये दिन मिलन बिनु; मलिन रहत चित ताहिं।
मात पिता परसैं चरन; जौ वे जीवत आहिं॥

चौपई-168

जगमन और चतुरभुज राइ। बिदा करे तीनौं गर लाइ।
बहुत दहेज दयौ हितु माहि। हार्थी घोरे गने न जांहिं॥

जैसे हे वे तीनौं राइ। तैसे करिकैं दये पठाइ।
गिरजा और रूपनिधि आई। मुख पियरौ अंखियां जल छाईं॥

चौपई अर्द्धाली

यहै कहयौ, हम दीजै बाहिं। इनतें, जीवु, फेरियौ, नाहिं।

दोहा-168

ये परदेसुन बापुरी; बांधि दईं तुम्हं साथ।
पर्‌यौ बिछोहा कुटंब तें; तुम्हं हीं इनके नाथ॥

चौपई-169

सुनि माता अैसी जिन जांनहुं। हमकौं अपनें चेरे मानंहुं।
जौ लौं जीवहिं जगती मॉहिं। इनहिं न तजंहिं हमारी बॉहिं॥

निरमल परमल रोवहिं भारी। और सुकेसी लाड दुलारी।
माता पिता औ सखी सहेली। सबतें बिछुंरी भई अकेली॥

चौपई अर्द्धाली

बहु दिन मारग मॉंहिं गंवाये। तब अपने, अपने घर आये।

दोहा-169

महानंद सुरपति कंवर; ये द्वै येक्कै गांव।
परसोतम, निरमल लयें गयौ आपुनी ठांव॥

चौपई-170

अपनी अपनी नगरी जाइ। मात पिता के परसे पाइ।
सिरी नग्र कंकनपुर मॉंहिं। उपज्यौ चैंन चिंत कछु नांहिं॥

दैहैं दांन राइ भोपाल। चाहुंवान जगु कियौ निहाल।
उदैसिंघ हूं करिहै दांन। प्रान पियारौ आयौ पांन॥

चौपई अर्द्धाली

दहुं देसनि बाढ्यौ आनंद। रह्यौ नॉंहि काहू कौ दंद।

दोहा-170

दान देत है हेत सौं; बाढ्यौ महा उमाह।
सिरी नगर कंकंनपुरी; निसदिन होहि उछाह॥

चौपई-171

निकट देस कीने जगदीस। सगरौ बीचि कोस चालीस।
वै उनपैं, वै उनपैं जॉंहिं। महाचैन उपजै मन मांहिं॥

मिलहिं सुकेसी निरमल परमल। महाचैंन उपजतु है पल पल।
महान्नंद परसोतम सुरपति। मिलि मिलि चैंन लहत चित हित अति॥

चौपई अर्द्धाली

जौ लौं जिये याहि सैंसार। छाड्यौ नाहिं प्यार ब्यौहार॥

दोहा-171

नीकैं निबह्यौ जॉंनं कहि; इन छहुन कौ प्यार।
कैसी पुरवी आस मन; धनि-धनि सिरजंनहार॥

चौपई–172

करनहार समरथ्थ गुसांईं। कैसी कैसी जोर मिलांई।
सुखिया किये महादुखियारे। आस निरास पुंजावन हारे॥

काहू सौं करिहै उपगार। जग मैं जीत बताहि बिचार।
जातें कछु उपगार न भये। येहूं आये येहूं गये।

चौपई अर्द्धाली

इंछ्या तिंह पुरवै करतार। जो तें ह्वै आवै उपगार॥

दोहा–172

कोऊ थिर नाहिन रहै; जो उपज्यौ सैंसार।
अंमर रहत है जगत मैं; जांनं सुजस उपगार॥

दोहा–173

नांव धर्‌यौ बरिषा पुहप; रीझत (हैं) अलि प्रॉन।
सन सहंस सैंतीस मैं; कथा कथी यह जान॥

दोहा–174

सतरहिसै जु अठहंतरै; कातग सतमी जांनं।
फतेहचंद सुदि मैं लिखी; ताराचंद सुतमान॥

(पुष्पिका) अंत :–

कथा पुहप बरिषा संपूरन भई दसतषत फतेहचंद का (;) ताराचंद सुत, डीडवानीया॥ 1778 मिती कातग सुदी 7, सोमवार। चौपई (कुल) 172 (और) दोहा 174 श्री श्री श्री।

कवि जान कृत कथा बलूकिया विरही

(आध्यात्मिक विह काव्य)

(भूमिका)

कथा बलूकिया विरही एक आध्यात्मिक प्रेम काव्य है जिसमें सूफी पद्धति पर परमात्मा (अल्लाह) का स्मरण करते हुए क्रमशः मुहम्मद और उनमें उत्तराधिकारी पैगम्बरों की महिमा का बखान किया गया है। वस्तुतः ये सभी परमात्मा के प्रति प्रेमभाव्र को संसार में प्रसारित करने वाले तथा उसकी ज्योति को प्रकाशित करने वाले हैं। इसके अलावा इसमें सृष्टि के उद्भव और विकास की कथा भी कही गई है। आदि स्रष्टा के प्रेम के वशीभूत होकर उसके विरह में निरन्तर तड़पते-कलपते परमात्मा की प्राप्ति जीवन की चरम-सिद्धि या मूलभूत लक्ष्य बताया गया है। यह संसार और उसके तमाम सांसारिक विषय अपने आकर्षण जाल में उलझा कर इन्सान को उसके मूलभूत लक्ष्य से विचलित कर देते हैं। इसलिए सच्चे साधक को इनसे ऊबर कर पैगम्बरों के बताये गये रास्ते पर चलते हुए लक्ष्य सिद्धि तक परमात्मा के विरह में नित्य और निरन्तर लगा रहना चाहिये।

बलूकिया विरही की कथा इसी लक्ष्य सिद्धि को लेकर एक परमप्रेमी और विरही साधक की साधना प्रक्रिया को वर्णन का विषय बनाया गया है। बलूकिया विरही की प्रेमसाधना का वर्णन करते हुए कवि ने उसके समक्ष आने वाली कठिनाईयों, विघ्नों, आकर्षणों आदि का भी जिक्र किया है जिनके प्रभाव से अपने को पूर्णतः ऊबारकर स्वयं सिद्धि तो प्राप्त की ही और जनमानस के लिए एक प्रेरणास्पद उदाहरण भी प्रस्तुत किया है। उनकी इस कठिन साधना से लोग अत्यन्त प्रभावित हुए और उन्हें एक सिद्ध के रूप में अपनी आस्था अर्पित की।

इस कृति में सूफी साधना और आस्था के आधार पर मक्का, मदीना आदि की महिमा का बखान किया गया है। साधना प्रक्रिया में भारतीय ध्यान व योग पद्धति का भी समावेश है। संक्षेप में इस कृति के अनुसार सच्चा साधक वही है जिस पर मुहम्मद की कृपा बनी करती है और जो परमात्मा के प्रेम और विरह में लीन रहता है, स्वर्ग और नरक के भोग-विलास और दुःख जिसे विचलित नहीं कर सकते निरन्तर अपने उस प्रेमी की रट जिसे निरन्तर लगी रहती हो, उसका सब प्रकार से कल्याण होता है।

कथा का विधान— आलोच्य कथा बलूकिया विरही एक वर्णात्मक और सूफी पद्धति पर रचा गया प्रेम काव्य है जिसमें प्रत्येक छन्द में 15 मात्राओं वाले चौपई छन्द का प्रमुखता और 16 मात्राओं वाले चौपाई छन्द का कहीं-कहीं प्रयोग किया गया है। प्रस्तुति वर्णनात्मक होने के कारण काव्य सौन्दर्य और मार्मिकता का तत्त्व अत्यन्त क्षीण है। सूफी कथानक रुढ़ियों का प्रयोग होने के कारण इसमें नवीनता और काव्य कौशल के लिए भी बहुत गुंजायश नहीं है। निष्कर्षतः इसे एक रुढ़ और पारम्परिक सूफी प्रेमाख्यान कहा जा सकता है। चौपई और चौपाइयों को मिलाकर कुल 128 छन्द हैं। इस कथा का रचनाकाल एक हजार चवालीस हिजरी तदनुसार वि.सं. 1777 फागुल शुक्ल सप्तमी तिथि है। कवि के अनुसार यह (कथा) रचना मात्र एक दिन में पूर्ण की गई है।

जान कवि कृत

कथा बलूकिया विरही

बलूकिया विरही की कथा चौपाई

परथम सुमिरौ सिरजनहार[1]। सिरज्यौ[2] आदि महंमद यार[3]।
पीति महंमद[4] जगत ऊपायौ। कीजौ जेहै जु हजरत[5] भायौ॥ २॥

नबी[6] सिस्ट[7] कौ मूल बखानहु। सब कछुं नबी बीति तें जानंहु।
रबि ससि ऊडिन पंवन अरु मेहु। बन जलधर[8] नभ तजरत नेहू॥ ३॥

सलिता सागर मेरु पहार। मनुष देवता रचे अपार।
बैकुंठ और फिरसते[9] हूर[10]। सवै भये हजरत कै नूर[11]॥ ४॥

नबी पीति तें सब प्रगटाये। लै लै नाम न जाहिं गया ये।
जेही नबी जगत ह्वै गये। हेत महंमद ही कै भये॥ ५॥

सब मिलि जप्यौ महंमद नाम तौ बैकुंठ पायौ बिस्राम।
नबी नूर आदिम प्रगटायौ। तब आदम[12] लै तखत बिठायौ॥ ६॥

तबहिं फिरस्तनि कौ फुरमायौ। आदम कौ स्रजदौ[13] करवायौ।
वह सजदा आदम कौ नाही। नबी नूर देख्यौ वा माही॥ ७॥

आयौ सीसन वांकौं नूर। तबहि सीस पाई है हूर।
जामै नूर नबी कौ आयौ। ताकौ करता मान बढ़ायौ॥ ८॥

जब इदरीस[14] नूर यहु लयौ। अमर होइ नभ ऊपर गयौ।
नूर नूह[15] मैं जब प्रगटायौ। जल अमोघ[16] तें अलहु[17] बचायौ॥ ९॥

---

1. निर्माण करने वाला 2. बनाया 3. मुहम्मद 4. मुहम्मद 5. पैगम्बर 6. पैगम्बर देवदूत (स्त्रीलिंग) 7. सृष्टि (संसार) 8. बादल 9. देवदूत 10. जन्नत की सुन्दर औरत 11. तेज, रूपज्योति 12. आदिपुरुष 13. प्रणाम करना 14. एक प्रसिद्ध पैगम्बर (देवदूत) जो मछली द्वारा निगले जाने पर भी सुरक्षित रहे 15. नूह-एक पैगम्बर (देवदूत) जिन्होंने पृथ्वी पर जल प्रलय होने पर किस्ती (नाव) के माध्यम से लोगों को बचाया 16. (जलमग्नपृथ्वी) प्रलय हो जाना, 17. अल्लाह

इबराहिम[1] मैं कर्‌यौ प्रकाश। फुलवारी तब भई सुतास[2]।
इसमाइल[3] की जतव कबीर। नूरन बीतें बच्यौ सरीर॥ १०॥

दये फिरस्तनि नग्र ऊछार। लूंत नबी हितु लयौ ऊबार।
यौसुफ बिसब महि बस केरी। नबी रूप की छाया परी॥ ११॥

मूसे[4] करी सुलह सौं बात। प्रीत नबी जब प्रगटी गात।
ऊतरी तब तौरेत[5] किताब। बहुत बढी मूसा की आब[6]॥ १२॥

तामैं हजरत[7] कौ ल्यौ मान। लगे नबी सौं मूसा प्रान।
जब दाऊद[8] तक्यों यहु नूर। वाकौं ऊतरी तबहि जबूर[9]॥ १३॥

सिफत[10] महंमद की ता मांहि। कछु दाऊद रह्यौ ग्रब[11] नाहिं।
नेहु नबी ईसा घट आयौ। तबऊ निमिर्तक मनुष जिवायौ॥ १४॥

नीकैं राख्यौ अपनौ सील। तब वाकौ ऊतरी इंजील।
वामे बहुत रसूल[13] बषान। हजरत सौ कौ भयौ न आंन[14]॥ १५॥

नबी मुहंमद दयौ कुरांन[15]। भये सबैं मनसूख पुरांन।
अबहिं सुनहु भाषत कबि जान। कितलौं करिहौं नबी बषान॥ १६॥

ये करसन कौ कहा प्रमान। सेस बरवान सकत नहीं आनं।
मस[16] सागर कागर[17] आकास। बिन ठरु[18] लेखन कीजैं ठास[19]॥ १७॥

सुरनर लिखत-लिखत अर सावत[20]। सिफत महंमद पार न आवत।
अब सुनि कथा बषानत जांन। मनंहि रिझावत भावत कांन॥ १८॥

है यद्धु बहुत बरस की बात। जब सुनिये तब अधिक सुहात॥ १९॥
हौ बलूकिया ताकौ नाम। गुनव्रंता ग्यांता अभिराम[21]।
विरहु लयौ तन मै विस्राम। मै बिरही राख्यौ इहिं नाम॥ २०॥

---

1. मुसलमानों, यहूदियों के एक पैगम्बर, देवदूत 2. आनंदित करना 3. पैगम्बर इब्राहिम व हाजरा के एकमात्र बेटा थे, खुदा को प्रसन्न करने की परीक्षा हेतु पिता इब्राहिम ने अपनी प्रिय वस्तु (अपना बेटा इस्माईल) की कुर्बानी देने के लिए इनके शरीर पर छुरी चलाई, लेकिन छुरी चली नहीं और खुदा प्रसन्न हुए। इन्हीं की याद में मुसलमान कुर्बानी की ईद मनाते हैं। हिन्दु पौराणिक ग्रन्थों में दानी राजा मोरध्वज के द्वारा मेहमानों के सत्कार हेतु अपने बेटे रतनकंवर पर भी करौंत (छुरी) चलाने का उल्लेख है 4. पैगम्बर जिनके हाथ में ऐसा (एक डण्डा) होता था जो जमीन पर डालने पर सर्प बन जाता था 5. यहूदियों की पवित्र पुस्तक 6. इज्जत, आत्मा 7. पवित्र आत्मा 8. पैगम्बर 9. यहूदियों का पवित्र ग्रंथ 10. अच्छाई 11. गर्व, घमण्ड 12. यहूदियों का पवित्र ग्रंथ 13. खुदा का कानून पैगाम लेकर आने वाला 14. अन्य 15. मुसलमानों का पवित्र ग्रंथ 16 मषी (स्याही) 17. कागज 18. बिना ठहरे 19. ठोस, ज्ञानयुक्त 20. प्रसन्न होना 21. सुन्दर।

पहिलै नाम लिख्यौ नहीं जाइ। यहु नीकौ लिखबे मैं आई।
बांचत नित तौरैत[1] पुरान। निकस्यौ तामैं नबी बषांन॥ २१॥

बिरही पढत महंमद नाव। मग्न भयौ चाहत उडि जांव[2]।
देख्यौ लिख्यौ महंमद नाम। दरसनं चित्र भयौ अभिराम॥ २२॥

नाम चित्र चाहत चितु दीनौ। प्रगट देखिवे कौ मनु कीनौ।
लेत पुकार महंमद नाम। स्रवन द्रसन है आठौ जाम[3]॥ २३॥

जौ कबहूं सल पलक लगावै। बिरही सुपन द्रसन तब पावै।
तीन भांति के दरसन पावत। मैं बिरही चित ना ठहिरावत॥ २४॥

चाहत है दरसन साख्यात। बिरही बिरहु जरावत[4] गात।
कहत तबंहि जीतब हौं लेखौ। दरस महंमद परगट देखौ॥ २५॥

कहत जान जौ कहुवा पैहौ[5]। हजरत ऊपर बलि बलि जैहौं।[6]
कहत जान हजरत कै नाव। पल पल छिन-छिन बलि वलि जाव॥ २६॥

वा समये हम नाहिन न भये। यों ही आये यौं ही गये।
देख्यौ नाहि नबी भरि दिस्ट। तौ हम भये अधम पापिस्ट॥ २७॥

हजरत कौ मुख देख्यौ नाही। ते कत नैंन दये घट मांही।
सुने न सबद नबी के कान। ते काहे सिरजे रहिमान॥ २८॥

लगे न नबी चरन कौ आंनि। दसननि[7] सौ काढहु ते पानि।
फिरे न संग नबी के चरन। जैहैं चले नरक मैं जरन[8]॥ २९॥

कहा कर्‌यो हम मानस[9] होइ। यहु जगु वहु जगु खोयो दोई।
अबजै[10] मकै[11] मदीनैं जांहि। क्यों न भये हम तिन की छांहि[12]॥ ३०॥

---

1. मुसलमानों की एक पुस्तक 2. जाना 3. पहर 4. जलना 5. कह पाऊँगा 6. जाऊँगी 7. निष्ठा (मन लगाना) 8. जलते 9. मनुष्य 10. अब यदि (जो) 11. मक्का/मुसलमानो का धार्मिक स्थान 12. शरण में।

अपनौ बिरहु कह्यौ कवि जान। अब बिरही कौ करत बषान।
बिरही कैही बिर्धा-मात[1]। तासौं कही बिरहु की बात॥ ३१॥

ब्याप्यौ बिरहु रह्यौ नही जाइ। हाहा अम्या दीजै माइ।
जौ हौं अग्या नाहि न पैहौ[2]! हेत महमंद कै मरि जैहौं[3]॥ ३२॥

अग्या दई दया करि माइ। ढूंढहु हजरत जू कौं जाइ।
बिरही चल्यौ महंमद चाहि। इक बन जात येक बन छाहि[5]॥ ३३॥

बिरही डोलै दरसनु चाइ। असुवनि[6] धरनी छिरकत[7] जाइ।
जात-जातरे ती[8] मैं आयौ। नाग बडे देखित भरमायौ[9]॥ ३४॥

देखे सर्प झूठ ऊनि द्वार। सर्ब[11] करत कलिमा ऊचार।
बिरही सुन्यौ महंमद नाव़। मगन भय़ौ है वाही ठांव[12]॥ ३५॥

बोले नाम कहा तुवना व्रम। इत डोलतु है धौ किह कांम।
बिरही कह्यौ आपुनौ नाव। सोधत[13] नबी फिरौं सब ठांव॥ ३६॥

सर्प कहैं धन तेरे भागु। नबी हेतु लीनौ वैरागु।
बिरही कह्यौ अबहिं तुम कहौ। कौन सर्प हौ नितकित रहौ॥ ३७॥

कह्यौ नर्क के हैं हम नाग। अपराधी छूटत ना भाग।
जे[14] ना जपहिं महंमद नांव। पेठ[15] हमारे तिनकी ठांव॥ ३८॥

जौ तैं[16] नांव महंमद लयौ। तौ हम तो कौ दुख ना दयौ।
ना तर हम जिहिं वोर निहारैं। ताकौं जारि भसम करि डारै॥ ३९॥

---

1. बूढी माता 2. प्राप्त नहीं हो पाना (नहीं पाऊंगी) 3. मर जाऊंगी 4. जाना 5. छोड़ना 6. आंसूओं से 7. गिराते, छिड़कते 8. तीर्थयात्री 9. भ्रमित होना 10. सभी 11. उच्चारण करना 12. जगह 13. शोधकरना, ढूंढना 14 जो 15. पहुँच 16. जिन्होंने।

तब बिरही यह बात ऊचारी। नर्क सर्प है तुमतें भारी।
बोले सर्प तबंहि अनुराग[1]। हमतें बड़े नर्क मै नाग॥ ४० ॥

हम ऊनकैं घवटबरि[2] फिरि आंवै। तौऊ वे कछु नाहि न पांवै।
हज़रत नांव बसै घट मांही। नाग नर्क कौटि हु डरु नांही॥ ४१ ॥

ऊततें[3] बिरही आगै गयौ। ऊततें कौतग देख्यौ नयौ।
ऊततें भारी सर्प अपार[4]। नान्हौ[5] सर्प सीस असवार[6] ॥ ४२ ॥

जब वहु नान्हौं सब्द ऊचारै[7]। तब वहु सगरौ संग पुकारै।
सबहीं लेहि महंमद नाम। कलिमा पढ़ि है आठौं जाम॥ ४३ ॥

बिरही नान्हौ सर्प निहार्यौ। तूं को है[8] यहु सब्द ऊचार्यौ[9]।
मानस परी[10] इहा नहीं आवे। तुम कैसै कैं आंवन पाये॥ ४४ ॥

बिरही कह्यौ महमंद चाव[11]। डौलत हौं मुहि मारग लाव।[12]
सर्प कह्यौ ही जानत नाहीं। मिलन चौंप[13] राखत मन माही॥ ४५ ॥

जौ कहुं वा हजरत कै लहि हैं।[14] मेरी ऊपग बंदन कहि हैं।
ऊतितें[15] बिरही आगै गयौ। येक नग्र[16] मै निकसन भयौ॥ ४६ ॥

पंडित येक पढत ऊति[17] पायौ। ऊन बिरही कौं देखि बुलायौ।
वाका कहित ना अफांन। लोभी नाव रख्यौ कवि जान॥ ४७ ॥

पूछ्यौ कौन दिसतें[18] आयौ। किंह लालचु डोलहि भरमायौ।
बिरही भाषी सगरी बात। लोभी कैं उपज्यौ सुष गात॥ ४८ ॥

कह्यौ चली हौं तैरै संग। खेलत अहस्त अनंद ऊमंग।
लोबी चल्यौ आपनै लोभ। दी बिरही कौ झूठी सोम[19]॥ ४९ ॥

---

1. प्रेम से 2. घर, आवास 3. उससे 4. बहुत सारे 5. छोटे 6. सवार होना 7. बोले 8 कौन है 9. उच्चारण किया 10. पड़ना 11. इच्छा 12. प्राप्त होना 13. चिन्ता 14. प्राप्त होना 15. उससे भी 16. नगर 17. पढ़ते ही 18. दिशा से 19. आश्वासन भरोसा।

भयौ सुलेमा[1] जब वसि काल[2]। लै कैं उडे देव तत्काल।
तषत[3] सुलेमा सख्यौल्लासर। करि कै सप्त समद[4] कौं पार॥ ५०॥

विषम-ठौर[5] लै तषत बनायौ। जित मानस आवन नहीं पायौ।
देवनि कीनें जतन अपार[6]। जिनको मुद्रक[7] लेइ निकार॥ ५१॥

छाप सुलेमा जिहिं कर आवै। सब जग की पतिसाही पावै।
लोभी पढी ग्रंथ यह बात। मुद्रिक लैंन चौं पसौ[8] जात॥ ५२॥

बिरही सौ यहु कही न बात। कह्यौ नबी कौ ढूंढ न जात।
दोऊ चले चौप जिय माहि। इक बड़छा[9] मैं इक बन[10] जाहिं॥ ५३॥

चौप मांहि निस बासुर[11] डोलत। येक ठांव पाहंन[12] हे बोलत।
कोऊ कहै मो[13] कीथ सिलावै। सो अपतन[14] कौ कुस्द[15] गंवावै॥ ५४॥

अपने गुन सब पाहन कहै। बिरही लोबी अचरज रहे।
आगैं तर बिरवा बहु बोलै। अपने-अपने गुन मुख बोलैं॥ ५५॥

बोल्यौ येक ब्रिछ[16] कौ राइ। मेरौ रसु[17] जौ पाइन[18] लाइ।
जौ सागर ऊपर कर जाइ। तरके नैकुन[19] भीजैं पाइ[20]॥ ५६॥

बुद-रसु[21] बिरही लोभी लाइ। ठाढे भये समद्र पर जाइ।
रंच[22] कहूं लागी नहीं बार। सागर सप्त करे है वा पार[23]॥ ४७॥

जो धरनी ऊपर को जाइ। तैसें गये न भीजे पाइ।
आगैं आयौ येक पहार[24]। चढ़े तहांये दौनौ बार॥ ५८॥

है कस्तूरी ऊतकी धूरि, होइ रह्यौ गिर ऊपर नूर।
येक तषत हे ते ऊबहिं[25] बिछायौ, ता पर सोवत मानस पायौ॥ ५९॥

---

1. देवदूत (पैगम्बर), संसार की हर वस्तु इनकी हुकूमत थी। इनके पास एक तख्त था जिसे तख्ते सुलेमानी कहा जाता था जिस पर बैठकर ये दुनियां में कहीं भी आ जा सकते थे 2. उसी समय 3. सुलेमान का जादुई तख्त 4. समुद्र 5. कठिनस्थान 6. प्रयत्न, यत्न 7. मुद्रिक 8. चित्तासे 9. बरगद की छाया 10. बन, जंगल 11. दिन रात 12. पत्थर 13. मुझे 14. अपने शरीर को 15. चेतना 16. वृक्ष 17. रस 18. पैर 19. तनिक भी, बिल्कुल नहीं 20. पैर 21. रस की बूंद 22. थोड़ा, तनिक 23. उस किनारे 24. पहाड़ 25. वहां

दछिन हाथ सिर ऊपर पुर्बबाम[1]। ता मैं मुद्रक है अभिराम।
ताकौ रूप न बरन्यौ जाइ। सूरज सहंस प्रकासे[2] आई॥ ६०॥

ऊपर बादर[3] कीयें छाहि[4]। धूप लगन पावत है नाहि।
बिरही पूछ्यौ आपनौ यार। यहु को सोवत देहि बिचार॥ ६१॥

लौभी कह्यौ सुलैमा[5] आंहि। हौं इत आयौ जाकी चाहि।
लैहौ मुद्रिक याहि निकार। ज्यौ पति साही दौ करतार॥ ६२॥

बिरही भाख्यौ[6] मै नही पायौ। तू पतिसाही कौ इति आयौ।
जौ जानत यहु तुव[7] मन मांही। तौ तैरै संग आवत नांही॥ ६३॥

जाकै जपौ मै पैमु इलाही[8]। कहा करै जगु की पतसाही।
बिरह आग जरि[9] जिहि देह, सो न करै या जग सौं नेह॥ ६४॥

बिरही रह्यौ खरौ[10] ऊंहि ठौर। लोभी गयौ तखत ढिगुदौर[11]।
दोइ नाग बैठे ऊति[12] भारी। करि हैं मुद्रिक की रषवारी॥ ६५॥

लोभी गयौ मुद्रका लैन। तबहि सर्प कोपे दुख दैन।
निकसी मुखतें ज्वाला डार। होइ गयौ लोभी जरि छार[13]॥ ६६॥

लौभी कौ सुख नांहि निदान। लालचु अंत गंवावै प्रांन।
लोभी जरत[14] न लागी ढील। तिहीं बार आयौ जब रील[15]॥ ६७॥

बौल्यौ अैसी ऊंची वानी। गिरवर घर सवं हीय हरांनी।
जबरईल बिरही सौ कह्यौ। तू को इत क्यौं आंवन लह्यौ॥ ६८॥

बिरही अपनौ कह्यौ सुभाव। हौं निकस्यौ हजरत कै चाव।
जबरईल[16] सुनि कह्यौ सुभाइ। तौ तू करता बाच्यौ न्याइ॥ ६९॥

तू ऊंबर्‌यौ हितु नबी अधार। नात जरि वरि[17] हो तौ छार[18]।
जबरईल कहि गयौ बिलाइ[19]। बिरही चल्यौ नबी कैं चाइ॥ ७०॥

---

1. बायां हाथ 2. सतरंगी प्रकाश 3. बादल 4. छाया 5. पैगम्बर सुलेमान 6. बोला 7. तुम 8. परमात्मां 9. जलना 10. खड़े 11 दौड़कर पास गये 12. वहां 13. जलकर राख होना 14. जलना 15. पैगम्बर 16. पैगम्बर 17. जलना 18. राख 19. दूर जाना।

वहै ब्रिछ रसु[1] लायौ पाव। आयौ बांधि सप्त दरियाव[2]।
आगे गयौ भोम[3] जित कंचन। केसरि[4] बिना और तिन रंचन[5]॥ ७१॥

ब्रिछखर्जूर और हैं दाष। देषि बढै मन कौं अभिलाष।
बिरही सून्यौ जबहि फलपान। लांवे भये ब्रिछ कहि जान॥ ७२॥

ब्रिछ कह्यौ फल खान न पावहि। काहे कौं जियरा[6] ललिचावहि[7]।
बिरही देखे भले निहार[8]। नागी तेंग[9] लये अयडार॥ ७३॥

जबही लेत महंमद नाव। कलिमा[10] पढ़ैं खरे[11] वहि ठांव।
जै बिरही तब कर्‌यौ जुहार[12]। पूछ्यौ सब ऊन कौ व्यौहार॥ ७४॥

ऊनंहिं कह्यौ हम अपछर आहि। इत लरिबे की आये चाहि।
हेंदू[13] अपछर हैं इह ठांव। हम मारन आये तिंह[14] गांव॥ ७५॥

हम रहि हैं तीजैं आकार[15]। इल आये हैं जुघु[16] हुलास।
ऊततें बिरही आगै गयौ। देख्यौ बड़ौ नग्र[17] इक नयौ॥ ७६॥

ऊतंहि[18] सु धरमी अपछर आहि। बात सुनी बिरही की चाहीं।
घोरा[19] दयौ चढन कैं काज। ता ऊपर[20] कछ[21] कर्‌यौ न साज[22]॥ ७७॥

कह्यौ न तू कछु याहि लखाई[23]। भेड ताजनो[24] कछू न लाई।
मारग मैं द्वैचेंरा[25] मेरे। असु[26] चढ़ें तोते वे नेरे॥ ७८॥

ऊनकौं घोरां सौपी जाइ। वै तोंहि दैहैं मारग लाइ।
हरैं हरैं यहु चढयौ तुरंग[27]। वहु ऊठि दौर्‌यौ आप ऊमंग[28]।

अर्ध द्यौंस[29] बिरह ऊति गयौ। असु पहिचानि गुलांमनि[30] लयौ।
साठ कोस आयौ करि खेद। तन तुरंग टपकत परसेद[31]।। ८०॥

---

1. वृक्षरस 2. समुद्र 3. जमीन 4. चन्दन 5. तनिक भी नहीं 6. दिल, मन 7. ललचाती है 8. गौर से देखना 9. तलवार 10. मुसलमानो के धर्म का मूलमंत्र 11. खड़े होकर 12. प्रार्थना 13. हिन्दु 14. उसी 15. आकास 16. युद्ध 17. नगर 18. उधर 19. घोड़ा 20. उसके ऊपर 21. कछु 22. सजावट 23. दिखाई देना 24. घोड़े को चलाने का चाबुक 25. सेवक 26. घोड़ा 27. घोड़ा 28. जोश से 29. दिन 30. नौकर 31. पसीना

जौ जांनत तोकौं असवार। तौ तबहीं यहु देतौ डारि[1]।
ये बतियां[2] कहि पंथ दिखायौ। बिरही वा मारग ऊठि धायौ॥ ८१॥

आगैं तक्यौ[3] फिरस्ता येक। पढि है कलिमा बार अनेक।
इक पूरब इक पछिम पानि। कर्‌यौ जुहार बिरहिंया[4] आंनि॥ ८२॥

पूछी बात कही समुझाइ। दयौ फिरस्तै भेदु बताइ।
येक हाथ दिन कौ ऊजियारौ[5]। येक हाथ निसकौ अंधियारौ[6]॥ ८३॥

आगै तक्यौ फिरस्ता और। बिरही गयौ दौर वा ठौर[7]।
येक हाथ पर इक आकास। कलिमा भाषत[8] हरष[9] हुलास[10]॥ ८४॥

बिरही सौ भाषी सब बात। येक हाथ जल इक मैं बात[11]।
धरनी पर कत्राहौं नांहि[24]। उदधि[12] मरजाद मिटै जग माहि॥ ८५॥

येक हाथ ना रहौं अकास। करै पवन तौं जगु कौ नास।
थोरी थोरी अंगुरिन[13] मांहि। आंवन द्यौंस बछाड़ौ नांहि॥ ८६॥

बिरही आगै चल्यौ निहार[14]। ऊतंहि[15] फिरस्ता देखे चार।
सबहीं नांव महंमद लेत। भाषत है कलमा करि हेत॥ ८७॥

येक फिरस्ता है मनुषा नन। गऊ मुखी इक इक पंचानन।
येक गिरझ[16] आनन[17] आकार। चार भांति हो देखे चार॥ ८८॥

मनुखानन[18] जपि है करतार। भलौ मनुष कौ होइ अपार।
गऊ मुखी पसु देइ असीर[19]। इनकौ भलौ करौ जगदीश।। ८९॥

सिंघाननं[20] सिंघनि सौं हेत। गिरझ दुवा[21] पंछिनि[22] कौं देत।
ऊततें चल्यौं बिहरिया धाइ। कोहकाफ महि पुहच्यौ जाइं॥ ९०॥

---

1. गिरा देना 2. बातें 3. देखना 4. विरहिणी 5. उजाला 6. अंधरा 7. स्थान जगह 8. बोलना 9. हर्ष 10. जोश से 11. हवा करना, पंखा झलना 12. समुद्र 13. अंगुलियों में 14. गौर कर देखना 15. उस तरफ 16. गीध्र 17. चेहरा, मुख आकृति 18. मनुष्य का चेहरा 19. आशीर्वाद 20. सिंह जैसा चेहरा 21. प्रार्थना 22. पक्षी, पखेरु 23. परियों का निवास स्थान (काकेशस पर्वत) 24. इस चरण में एक वर्ण या मात्रा कम है।

कोहकाफ बिच सकल जहांन[1]। आहि जमुरह के पारवांन[2]।
वाकी छाया नभ झिलकावै[3]। तातें नीलबरन डिठ[4] आवै॥ ९१॥

तके तहां तरवर[5] अभिराम[6]। ·पंछी बोलहिं आठों-जाम[7]।
तहा फिरस्ता येक निहार्‌यौ। करमै गुनयन[8] जाइ जुहार्‌यौ[9]॥ ९२॥

येक वोरतें[10] गुनहि उंचावै। येक वोर नीचैं लै आवै।
बिरही पूछ्‌यौ बात बिचार। तबहिं फिरस्तैं कर्‌यौ ऊचार[11]॥ ९३॥

जित लौं[12] ऊदै[13] अस्त ह्वै भांन[14]। धरनी कीन समेरे[15] पांन।
जितकी नसहौं[16] लेऊ ऊंचाइ। बहु धरनी ऊंची ह्वै जाइ॥ ९४॥

ऊतंहि मेहु बरसत है नांही। ह्वै दुकाल तिंह धरनी[17] मांही।
देखत हौ ये सप्त अकास। याही गिर पर लयौ निवास॥ ९५॥

गिर पाछैं चालीस हजार। अैसैं ही बसिहै संसार।
ऊतहि रहै निस-वासुर[18] जोति[19]। अधियारौ कबहूं न होती॥ ९६॥

है उत सब कंचन का भौम[20]। नूर भरी छी झिलकत सोम।
उनमै सबै फिरस्ते रहिहैं। अलहि महंमद ही मुख कहिहै॥ ९७॥

वैकुंठ नर्क मनुष सै तांन। करहू कौ जांनत नहीं आंन[21]।
आगे नर्क फिरस्ता दोइ। कर्‌यौ जुहार[22] निकटि तिंह होइ॥ ९८॥

पास निहारे दोइ ऊदधि[23]। खरे फिरस्ता तिनकैं मधि[24]॥[28]
इक मीठो इक खारौ भारौ[25]। मिलन देत ना राषत न्यारौ॥ ९९॥

आगै और तक्यौ इक सागर। ता मै मछरी[26] रहैं ऊजागर[27]।[29]
सब मैं राजा है इक मीन। और सकल वाकी आधीन॥ १००॥

---

1. विश्व 2. पत्थर 3. प्रतिबिम्बित होती है 4. दृष्टि 5. पेड़, वृक्ष 6. सुन्दर 7. आठों पहर 8. माला 9. प्रमाण किया 10. तरफ 11. बोले 12. जितनो 13. उदय 14. चन्द्रमा 15. – 16. नसैनी 17. पृथ्वी 18. रात-दिन 19. ज्योति, रोशनी 20. जमीन 21. अन्य, दूसरा 22. प्रमाण करना 23. समुद्र 24. मध्यमें 25. बहुत 26. मछली 27. स्वतन्त्र रूप से 28. इस चरण में वर्ण और मात्रा कम हैं। 29. इस 'ऊजागर' शब्द में "उ" ह्स्व होना चाहिये।

निस बासुरवै कलमा कहै। येक घरी[1] हूं चुप ना रहैं।
बिरही अपनै निकट बुलायौ। बात पूंछ अति प्यार जनायौ[2] ॥ १०१ ॥

रुटियादी[3] बिरही कौं सेत[4]। अति मीठा खाई करि हेत।
भूख न प्यास द्यौंस[5] चालीस। चलतन थक्यौ[6] सु बिसवा-बीस[7] ॥ १०२ ॥

जल मै कोऊ देख्यौ जात। बिरही कह्यौ कौन कहि बात।
नूर[8] भर्‌यौ मुख अति झिलकाइ[9]। बिरही देख रह्यौउ भरमाइ[10] ॥ १०३ ॥

कह्यौ जु मोतैं[11] पाछैं आवत। पूंछी जौ वहु भेद बतावत।
बिरही चल्यौ येक दिन रैन[12]। फिरि वैसौई देख्यौ नैन॥ १०४॥

वैसौई उत्तर ऊन[23] दीनौ। तब बिरही आगैं मगु[13] लीनौ।
चलत चलत निस घौंस बिहायौ। और डिस्टि वैसोई आयौ॥ १०५॥

बोल्यौ तब बिरही बिललाई[14]। हाहा अपनौ भेदु जनाइ।
दूसरा फील[15] जुमी काईल, प्रथम गये हैं जबराईल॥ १०६ ॥

सागर मांहि सर्प है येक। जल-जीवन[16] दुख देत अनेक।
वाकौ दैह नर्क लै जाइ। होंहि नारकी तिनकौं खाइ॥ १०७।।

बिरही कह्यौ बडौ बुद्र कैसौ। जबराइल बोल्यौ सुनि अैसौ।
बरसतीस लौ जो कोऊ धावै[17]। तबंहि पौंछते सिर लौं आवैं।। १०८॥

नरक मांहि अहि बड़ी बलाइ[18]। तिनकैं तौ यहु पेठ समाइ।
आगैं देख्यौ तरवर भारौ[19]। ता पर पंछी[20] येकऊ न्यारौ॥ १०९ ॥

पंछी कनक कौ द्रिग याकूत[21]। ग्रीवा मुकता हल अदभूत।
चरन प्रडव अति सुभग पंवोरी[22]। सतर भोजन भाजन भारी॥ ११० ॥

---

1. घड़ी 2. प्रकट किया 3. रोटी इत्यादि 4. शहद 5. दिन 6. परेशान हुआ, थक गया 7. पूरी तरह से 8. तेज 9. चमकता है 10. भ्रमित हुआ 11. मुझसे 12. रात 13. रास्ता, मार्ग 14. दूर जाना 15. पैगम्बर 16. जल के जीव 17. स्मरण करना 18. परेशानी 19. बहुत से 20. पक्षी 21 पैगम्बर 22. 23. ''ऊन'' शब्द में ''उ''ह्रस्व होना चाहिये।

विरही कह्यौ कौन तुम पंछी। अबलौं अैसौ तक्यौ न अंछु[1]।[24]
पंछी अपनौ करयौ प्रकास। वैकुंठ माहिं हमरौ बास॥ १११॥

आदम[2] जब जग[3] तीमै आयौ। यहु भोजन तब तहि पठायौ।
याकौ बरन[4] संवाद[5] न जाइ। निघटत नांहि जितौ को खाइ॥ ११२॥

हौं याकी करिहौं रखवारी। निसदिन जतन[6] करत हौं भारी।
तौकौं जो भावें सो खाहि। पाछै अपनै मारग जाहि॥ ११३॥

बिरही भोजन लयौ अघाइ[7]। तन मन मैं बान्ध्यौ अति चाइ[8]।
पाछै बिरही पूछ्यौ ताहि। इतको मानस अपछर[9] आहि॥ ११४॥

मानस[10] अपछर देवन[11] प्रेत[12]। ख्वाज खिजर[13] डोलत बिधि हेत।
पूरन नाम लेन नही पायौ। ख्वाज खिंजर तिहि-छिन डिठ आयौ॥ ११५॥

हरित बसन[15] मुख झमकत[16] जोत[17]। होइ रह्यौ बन मांहि ऊंदोत[18]।
खिजर चरन राखत जित चार। तितितित[19] धरनि होति हरियार[20]॥ ११६॥

जाइ खिजर कौ कर्‌यौ जुहार[21]। बिरही अपनौ दयौ बिचार।
खिजर कह्यौ धनतेरी दौर। आपहि पुहचायौ इह ठौर॥ ११७॥

जा काजैं डोलत वन माही। वै अजहूं जगु आये नाहीं।
अजहूं बरष अनेक विंहावै[22]। तबहि महंमद जग महि आंवै॥ ११८॥

बिरही बात सुनत थर हर्‌यौ। खाइ पछार धरा पर पर्‌यौ।
अैसौई बेसुधि[23] ह्वै गयौ। बिरही जानौ म्रिके भयौ॥ ११९॥

बिरही कहै न जीऊ केहू। मेरी दौर गई सब येहूं।
खिजर हाथ गहि रह्यौ ऊचाइ। बिरही नही चेत पर आइ॥ १२०॥

---

1. अच्छा 2. आदिपुरुष 3. संसारमें 4. रंग 5. वार्तालाप 6. प्रयत्न 7. तृप्त होना 8. बहुत इच्छा 9. अप्सरा 10. मनुष्य 11. देवता 12. प्रेतात्मा 13. पैगम्बर, भूले भटकों को राह बताने वाले और अमर है 14. उसी क्षण 15. वस्त्र 16. चमकना, झलकना 17. ज्यौति, प्रकाश 18. प्रकाशित हुआ 19. उस-उस 20. हरियाली, हरितमा 21. प्रार्थना 22. बिताना, बीतना 23. बेहोश, 24. अंछु शब्द के स्थान पर तुकान्त अनुसार 'अंछी होना चाहिये।

बिरही पायौ दरसन ध्यांन। घट मै रहे जात हे प्रान।
ध्यांन पंड़थ हजरत[1] जूं आइ। बिरही कर गहि लयौ ऊंचाइ॥ १२१॥

मूरति नबी निहारी अैंन। तबहि भयौ बिरही चितु चैंन।
जान कहैं हाहा करतार। जो सौं होइ नबी कौ प्यार॥ १२२॥

ध्यांन पंथ जौ दरसन पाऊं। कहत जान हौं बलि बलि जाऊं।
खिंजर कह्यौ अपनै घर जाहि। तेरी करता[2] पुरई[3] चाहि[4]॥ १२३॥

खिजर कह्यौ पंछी सौ चांहि। यातौं याकैं घर खलै जाहि।
पंछी बिरही पकरि ऊडायौ। येक पहर मैं घर लै आयौ॥ १२४॥

माता बैठी रोवत पाइ। बिरही हित सौं गरैं[5] लगाई।
अपनी सगरी बिथा[6] बषानी[7]। सुनत बात माता भरमानी[8]॥ १२५॥

बात सुनी यह सगरै गांव। आय परे बिरही कैं पांव।
बिरही धरम सांचु[9] करि जान्यौ। सबहीं कलमा नजी बषान्यौ[10]॥ १२६॥

जान कहै हौ बलि बलि याहि। जाकौं नबी महंमद चाहि।
या जग मैं नीकैं सौ आयौ। जिन हज़रत सौं पेमु लगायौ॥ १२७॥

केते वली[11] भये जगु मांहि। हज़रत जिनहुं बिसार्‌यौ[12] नाहिं।
जाकौं लागत है रट नाम। ताके सगरे सुधरैं कांम॥ १२८॥

सन हजार चार चालीस। कथा बषानी विसवा बीस।
अठाईस इकसौ चौपाई। येक द्यौंस मै पूरन भई॥

इति बलूकिया बिरही की कथा संपूरन १७७७ फागुन सुदी ७

---

1. पैगम्बर 2. भगवान् 3. पूर्ति करना, पूर्ण करना 4. इच्छा 5. गले 6. व्यथा, वेदना 7. वर्णन 8. भ्रमित हुई 9. सत्य 10. वर्णन किया 11. अनेक, कितने ही शक्तिशाली, बलवान् 12. भुलाया।

कथा अरदसेर पातिसाह

सारांश

साह सासान के पुत्र अरदसेर ने अपने बल से ईरान, तूरान, मकरान आदि सम्पूर्ण क्षेत्र को विजित किया। उसके सुयश से आहत अभिमानी बादशाह अरदुवान अपने सबसे बड़े पुत्र बहराम को अरदसेर को परास्त कर वध करने का आदेश देता है। किन्तु पराक्रमी अरदसेर अरदुवान का वध करके उसके राज्य को हस्तगत करता है। भयभीत बहराम भाग जाता है। इधर अरदसेर अरदुवान की पुत्री से विवाह करके उसे अपनी रानियों में सर्वाधिक सम्मान देता है। बहराम को जब बहिन के रानी बनने का समाचार प्राप्त होता है तो वह उससे गुप्त रूप से मिलता है और उसे पिता की हत्या, भाई की दुर्गति एवं राज्य के छिन जाने का वास्ता देकर पति के विरुद्ध तैयार करता है। भाई के बहकावे में आगत रानी राजा के वध की योजना बनाती है पर बादशाह को विष देते समय उसका हाथ काँप जाता है। फलस्वरूप प्याला पृथ्वी पर गिर जाता है। संदेह से आवृत्त बादशाह पृथ्वी पर गिरे पेय में गेहूँ के दाने डलवाकर मुर्गों को देता है जिन्हें खाकर मुर्गे मृत हो जाते हैं। क्रोधित राजा रानी के वध का आदेश देता है। मंत्री रानी को अन्यत्र लाकर जैसे ही मारने को उद्यत होता है,- रानी प्रार्थना करती है कि वह गर्भवती है और अजन्मे शिशु के वास्ते उसका वध न किया जाये। मंत्री राजा के समक्ष आकर इस बात की सूचना देता है पर निराशा से व्याप्त राजा इसे स्वीकार नहीं करता। मंत्री राजा के हित को देखता हुआ रानी के गर्भ की परीक्षा करवाता है। वह रानी को गर्भवती सिद्ध होने पर निःसंतान राजा के कल्याणार्थ अपने घर ले आता है और गुप्त रूप से रखने का मानस बनाता है।

किन्तु कालान्तर में सच्चाई प्रकट होने पर किसी प्रकार का जनापवाद या राजा को संदेह न हो, यह सोचकर वह अपने लिङ्ग का मुख काटकर नारियल में बंद करके राजा को

भेंट देता है और उनसे प्रार्थना करता है कि वे इस पर नाम और तिथि लिखवाकर कहीं सुरक्षित स्थान पर रखवा दें और जब वह अनुरोध करें, तब ही खोलकर देखें।

कुछ दिन पश्चात् रानी पुत्र को जन्म देती है। मंत्री राजकुमार का पालन-पोषण करता है। एक दिन शिकार करते हुए राजा मृग शावक को देखकर अत्यन्त दुःखी हो जाता है और अन्तर्मन में दमित सन्तानाभाव की पीड़ा को मंत्री के समक्ष व्यक्त कर देता है। मंत्री उपयुक्त अवसर पाकर राजा से उसके पिता होने की बात बताता है और अपनी उस भेंट को खोलने का आग्रह करता है। हतप्रभ राजा मंत्री के इस त्याग से अभिभूत हो उठता है। वह अपने पुत्र को प्राप्त करने के लिये भी व्याकुल हो जाता है। तब मंत्री राजा से राजकुमार को पहिचानने के लिये एक योजना बनाता है। वह राजा से खेल-खेलने कई बालकों के मध्य राजकुमार को पहिचानने का आग्रह करता है। राजा राजकुमार को पहिचान लेता है और रानी सहित राजमहल ले आता है। वह कृत-कृत्य होकर मंत्री को सर्वोच्च पद पर तो आसीन करता ही है और उसे आजीवन अपने समकक्ष सम्मान भी देता है।

समीक्षा

कवि जॉन कृत अरदसेर पातिसाह की कथा संवत् 1784 में लिखी गई है। परम्परानुसार इष्टदेव का ध्यान करके कवि बादशाह अरदेसर की कथा का प्रारंभ करता है। जॉन की यह कथा स्वामिभक्ति की पराकाष्ठा का अनुपम उदाहरण है। किसी भी राजा का राज्य उसके स्वामिभक्त सेवकों पर आधारित होता है और सेवक का भी यही कर्त्तव्य होना चाहिये कि वह स्थिति विशेष में अपने अन्नदाता की भलाई के लिये अपना सर्वस्व भी न्यौछावर कर दें। किन्तु राजा को भी उनको पहिचानने और उनको पूर्ण सम्मान देने की समझ होनी चाहिये। कथा शिल्प और प्रवाह की दृष्टि से उत्तम काव्य का निदर्शन है।

प्रारंभ में कथा नायक के पृथ्वी विजयान्तर्गत उसके अद्वितीय पराक्रम, महत्वाकांक्षा और शासन की उत्कट अभिलाषा को प्रकट करती है। शत्रुशासक की पुत्री से विवाह में नायक का नारी-सौंदर्य के प्रति आकर्षण तो अभिव्यक्त होता है, साथ ही उसके हृदय की विशालता भी दृष्टिगोचर होती है। इसीलिये बादशाह परिणीता को शत्रु शासक की पुत्री होने के बाद भी रानियों में सर्वोच्च स्थान देता है।

कथा की नायिका परम्परागत नारी से भिन्न है। पति की प्रिया होने के पश्चात् भी वह अपने पिता और भाई के पराजय का बदला लेने के लिये पति-वध करने को भी तैयार हो जाती है और अपने अजन्मे शिशु के पितृविहीन होने से भी व्यथित नहीं होती। संभवतः अरदसेर द्वारा बलात् विवाह के दर्द को वह अधिक देर तक दमित नहीं कर पाती और उसका यह दर्द अवसर पाकर प्रतिकार में परिवर्तित हो जाता है और उसका भाई बहराम निमित्त बन जाता है। वह मंत्री को जब अपने वध के लिये सन्नद्ध देखती है, तो उसका ममत्व सम्पूर्ण रूप से प्रस्फुटित हो उठता है और वह उसे अपने अजन्मे शिशु का वास्ता देकर वध न करने की प्रार्थना करती है। कथा के अन्त में वह राजा के साथ अपने पुत्र को लेकर वापिस भी आ जाती है। वस्तुतः इस कथा में पारिवारिक और दाम्पत्य वर्ग की विसंगतियों का स्वर मुखरित हुआ है।

राजा का मंत्री स्वामी का अनन्य उपासक और उसके हित-साधना में तत्पर है। वह राजा की भलाई को ही अपनी भलाई मानता है, इसलिये वह रानी और राजकुमार का गुप्त रूप से पालन करता है और अपना सर्वस्व बलिदान कर देता है। किन्तु उसका यह बलिदान जनापवाद और राजा के संदेह-परिहार के लिये भी है। यहां एक प्रश्न हमारे समक्ष प्रस्तुत होता है कि व्यक्ति ईमानदारी की साधना में सर्वस्व अर्पण करने के बाद भी क्यों डरता है? समाज उसे सहज क्यों नहीं रहने देता? कवि ने मंत्री के अन्तर्विचारों का जीवन्त चित्रण किया है। उसके विचार, उसके संदेह, काल्पनिक परिवेश से नहीं अपितु यथार्थिक परिवेश में उभरती हुई स्थितियों के विविध चक्रों से ग्रसित हैं। उसके बलिदान से राजा कृतकृत्य हो जाता है और वह यथासामर्थ्य उसका प्रतिफल भी प्रदान करता है। किन्तु मंत्री का बलिदान कथा का मार्मिक अंश है।

वस्तुतः जॉन कवि की यह कथा महत्वाकांक्षा, प्रेम की भाव-सबलता, प्रहार से पीड़ित पात्र की हृदय विदारक स्थिति, चुनौती को स्वीकार करने की दृढ़ता, प्रतिरोध का संकल्प और स्वामिभक्ति की विशिष्ट भावना के आरोहावरोह से प्रवहमान पाठक के अन्तर्मन को उद्घाटित करती है।

॥ अथ कथा अरदसेर पातिसाह की कवि जान कित॥

॥ चौपई ॥ १ ॥

पर्थम नाव निरंजन लीजै।
सब सुधरै पाछै जौ कीजै॥
बान नाव लेबे की करी।
ताकै आगै है बुधि खरी॥
नाव प्रसाद करै जो चाहै।
जो पकरै सौ वोर निबाहै॥
ग्रंथ आदि बिनु नाव न होइ।
ताकौ हाथ छुवो जिन कोइ।।
नाव निरंजन निस दिन लीजै।
रसन पियालै अंब्रित पीजै॥
अचवै अंब्रित नाव जु कोइ।
दहु जगु मांहि अमर सो होइ।।
पाछै नाव नबी कौ लीजै।
पातिग मिटै कुला हरकीजै॥
निस बासुर जपिहौ करि प्यार।
नाव मुहमंद मोहि अधार॥

॥ दोहा ॥

अरधसेर पतिसाह की, सुलप कथा कहि जान।
जैसी बिधि ग्रंथन पढ़ी, सौ हौ करौं बखान॥

॥ चौपई ॥ २ ॥

अरदसेर कौ करूं बखान।
जाकौ पिता साहसासान॥
ली ईरान और तूंरान।
बहुरि मरि लीनी मकरान॥
बहुत बिलाइत लीनी मार।
परगट भयो सकल सैंसार॥

दलबल कौ कछु लेखौ नाहि।
चढ़त जाइ रबि छपि रज माहि॥

लीखे कौं आवै सो मरै।
कालरूप कैसै को लरै॥

जब याकी कीरत बिसतरी।
अरदुवान कै काननि परी॥

अरदुवान बड्डौ पतिसाहि।
ताकी उपिमा दीजै काहि॥

अरदसेर कौं चितहि न आनत।
आप समान न काहू मानत॥

॥ दोहा ॥ **अरदुवान दल कोटबर, बहुत करत अभिमान।**
अंध भयौ मदमाल कै, गनत न काहू ग्यान॥

॥ चौपई ॥ ३ ॥ अरदुवान कै बेटा चार।
देखत के हैं चारौ चार॥

नाव बड़े कौ बहमन आहि।
सौ अपनै ढिगु टेर्यो साहि॥

कह्यों अरदुवा ताहि बुलाइ।
अरदसेर कौ मारहु जाइ॥

याके बड़े हमारे चाकर।
यहु अब लग्यो कहावन ठाकर॥

मेरौ टेर्यो आवत नाही।
कछू न कानि करै मन माही॥

बेग जाइ वाकौ गहि आनि।
लरै तौ करि डारौ ज्यो हानि॥

अरदुसेर पर बहमन चल्यो।
धर धसि धवल कमठ कलमल्यो॥
जात जात जब नेंरै आये।
अरदुसेर हूं तब सुनि पाये॥

॥ दोहा ॥ अरदुसेर सन मुख चढ्यो, दल बल साजि अपार।
दहू वोर दुंदभ बजे, आनंदे जूझार॥

॥ चौपई ॥ ४ ॥ काइर रहे दूर ही दूर।
लागे लरन सूर ही सूर॥
लरत लरत ही भै गई सांझ।
डर उपज्यो बहमन मन मांझ॥

अरदसेर सौं लर्‌यो न जाइ।
छूटि गये बहमन कंपाइ॥
भांजि गयौ बहमन तजि लाज।
अरदसेर लूट्यो सब साज॥
अांगै आगै बहमन धावै।
अरदसेर पाछै भग्यो आवै॥
आयौ लग्यो धरै चित कोह।
ज्यों चुंबक कै पाछै लोह॥
बहमन भाजि नगर मैं आयौ।
अरदसेर नीसांन दिवायौ॥
चमक पर्‌यो सुनि कै नीसांन।
अरदुवान चिन्ता भई आन॥

॥ दोहा ॥ दलजोरन पायौ नहीं, दाब्यौ दुरजन आइ।
अरदुवान नीसान दै, सनमुख चढ्यो रिसाइ॥

॥ चौपई ॥ ५ ॥

जुध राग बाजत दहूं वोर।
काइर सांझ सूर भई भोर॥

सुभट सुभट सौं लरत बिराजै।
आवध सौं आवध सुठ बाजै॥

लरत बहत गैंवर अभिराम।
बरसत मिलत घटा ह्वै स्याम॥

पीलवान गजते यों परिहे।
मतिवारे गिरते मनौ ढरिहे॥

नाल पसारे कै बदन डरावे।
अगिन फूंक सौं जगत जरावै॥

जो नालनि मुख सनमुख आइ।
सो हय गय नर कोट उड़ाइ॥

दौरै कुंजर माते माते।
ते तोरै बिन होत न हांते॥

अरदसेर है अचल पहार।
दुरजन के पग चलत बयार॥

॥ दोहा ॥

धीर धरें सुधरैं सकल, ये हूं सुभट कहंत।
जो केहूं भाजत नहीं, सो जीवत है अंत॥

॥ चौपई ॥ ६ ॥

अरदसेर जीत्यो जूझार।
अरदुवान लै मार्‌यो डार॥

बहमन भाजि गयौ लै प्रान।
आइ रहयो दुरिहि दसतान॥

अरदसेर लूट्यो सब नगर।
गौन्यो अरदवान कैं बगर॥

अरदुवान की तनया हेरी।
रीझि आपुनै आनी नेरी॥

नखसिख लौ देखी निरझाइ।
रो रौ चित्त रह्यो उरझाइ॥

जैसी ये छबि तैसी बैस।
रही साह कै हिरदै पैस॥

अरदसेर कौं बाढ़ी चाहि।
अति हित चित सौं कीयौ बिवाहि॥

वाही कै रस बसहू रह्यो।
रूप तिया गाढ़ौ करि गह्यो॥

॥ दोहा ॥ **रूप देखि राचत नहीं, तामै रंच न ग्यान।**
देखन कौ नैना भये, देखि लेहु कहि जान॥

॥ चौपई ॥ ७ ॥ अरदसेर चित रही न चिंत।
धन हूं लह्यो लह्यो पुनि मिंत॥

देस देस मैं फिरी दुहाई।
जो मन इंछया ही सो पाई॥

अरदेसर कै अनगन रानी।
पै सबही मैं यहु मन मानी॥

निस बासुर आनंद बिहात।
बहमन यह सुनि पाई बात॥

सुसा हाथ है लैबौ दैबौ।
वाही कै कर पीबौ खैबौ॥

मानस येक दयो दौराइ।
जासौ बहुत प्रान पतियाइ॥

दयौ हलाहल ताहि मंगाय।
दुर्‌यो सुसा कौ लै पहुंचाइ॥
कै वै जानै कै तू जानत।
उलट नाव ज्यौ नाहि न मानत॥

॥ दोहा ॥ यह उतते धायौ तबहिं, चपल चलाये पाइ।
भाई कह्यो जु बहन सौं, कह्यो सकल समुझाइ॥

॥ चौपई ॥ ८ ॥ भईया तोहि फिरत बौरानौ।
पर घर रंक भयौ हैरानौ॥
जा दिन कौ छूंट्‌यो है भौन।
को पूछत नाहिं न तू कौन॥
ज्यों तरवर ते बिछुर्‌यो पात।
त्यों इत उत डोलत भरमात॥
उडिगन गनत बिहावै रैन।
दिनहूं कौं पल परत न चैन॥
वाकै निसदिन अैसै जात।
तोकौं इत आनन्द बिहात॥
पिता आपुनौ मार्‌यो होइ।
तासौं प्रान मिलावै कोइ॥
भइया देस ते दयो निकार।
तासौ कैसे .... प्यार॥
मात पिता भया नहीं दीनी।
अप बर ही तू नाही कीनी॥

॥ दोहा ॥ जो आपुन सौं बर करै, सो बर लागै नाहिं।
मुख कुछु ना कहिं सकै, रिसराइ मन माहिं॥

॥ चौपई ॥ ९ ॥

बैर पिता कौ जो तू लैहे।
सर्व जगत तोहि जसु देहैं ॥

नंदन बैर सके नहिं काढि।
तनया बैर लयौ करि गाढ ॥

जुगि जुगि लै रहिहै यह बात।
तनया बैर लयौ है तात ॥

सुनत बात चित नारि रिसायौ।
पिय मारन ऊपर जिय आयौ ॥

लयो हलाहल बाकै पास।
चाहत कर्‌यो कंत की नास ॥

येक द्‌योस पति चढ्‌यो अहेरै।
आवत ही आयो तिय नेरै ॥

इन खडवान कियौ विष बाहि।
मारन चौंप दयौ कर ताहि ॥

प्यालौ कर पीवन कौ आनो।
दई चरित ते हाथ कंपान्यो ॥

॥ दोहा ॥

छूटि पर्‌यो प्यालौ धरा, फूटि गयौ तिह बार।
अरदेसर ग्यानी महा, चित मै करत बिचार॥

॥ चौपई ॥ १० ॥

यामै विषु बाह्यो है नार।
पै हौं राख लयौ करतार ॥

अरदसेर गौधूम मंगाये।
लै या विष कै माहि भिजाये ॥

कुरकट चारि मंगाइ चुगाये।
चुगत मुये पल ना ठहराये ॥

अरदेसर टेर्‌यो परधान।
सकल बात कौ कर्‌यो बखान॥
मंत्री भाष्यो सुनत बिचार।
याकौ मारत करहु न बार॥
जो करता टार्‌यो तुव काल।
अैसी बहुत आइ हैं बाल॥
अरदेसर सौंपी तीय आनि।
करि मंत्री यह जीय की हानि॥
मंत्री कर गहि बोझिल गयौ।
काढि .... ढाडौ भयौ॥

॥ दोहा ॥ तबहिं तिया अैसै कह्यो, सुनहु .... परधान।
मैरै जिय की कछु नहीं, पैं मोकौ आधान॥

॥ चौपई ॥ ११ ॥ सुनत करी परियार कटारी।
जाइ साहि ढ़िगु बात बिसारी॥
साह कह्यो सुनिहो परिधान।
कौन काज वाकौ आधान।
.... तैं झूंठ बिचार।
बेग जाइ वाकौ तू मार॥
उठि परधान तिया ....।
संग करे अपनै घर लायौ॥
धाइ बुलाई घर कै माँहि।
याहि कौ आहि कि नाहि॥
पेट देखि दाई यौं भाष्यौं।
.... नीकौ है राख्यो॥

मंत्री लै राखी तिहं ठौर।
पैठन .... ॥
दोइ सोच सोच्यो परधान।
तब रानी दीनौ ज्यो दान॥

॥ दोहा ॥ .... हौं याकौ मारिहौं, मरे गरभ में सोइ।
साहिब की संतति हनै, सुतौ नारकी होइ॥

॥ चौपई ॥ १२ ॥ जिनकौ होइ पेट में लौन।
तिह संतति चाहत नहिं कौन॥
साहिब संतत कौ नहिं चाहौ।
आपहि आपु नरक में बाहै॥
ताकौ भलौ न भाखै कोइ।
दहूं जगत कारो मुख होइ।
देखत नाहिं लौंन की वोर।
ना पहुंचे जप करै कठोर॥
और सोच सोच्यो मन माही।
पातसाह कै संतत नाही॥
जाकौ भलौ न भाखै कोइ।
दहूं जगत कारो मुख होइ॥
देखत नाहि .... की ओर।
ना पहुंचे जप करै कठोर॥
और सोच सोच्यो मन माही।
पातसाह कै संतत नाही॥
जाकै पाछै पूत न रहै।
मुये नाव ताको को कहै॥

देस बिलाइति कोधौं राखै।
बिन सुत पिता नाव को राखै॥
हौं याकौ केहूं नहि मारौ।
छल बल जिहं तिहं भांति उबारौ॥

॥ दोहा ॥

जैसे घर मै लै रखी, जहां न जानै और।
बिन इक चेरी दूसरौ, पैठन लहै न और॥

॥ चौपई ॥ १३ ॥

बहुरि सोच कीनौ परधान।
मैं यह घर मै राखी आन॥
काहू समये .... प्रगट होइ।
दुरजन भली कहै नहि कोइ॥
बैरी जो भावै सो कहै।
को रसना काहू की गहै॥
मेरै तौ माता तिय साहि।
पै दुरजन डर नर पत आहि॥
अपने मुक काढि कैं डारौ।
तौ लोगन ते जीव उबारौ॥
जौ मुक काढ़त हीं ज्यो जाइ।
तौऊ मोहि न कछु डरु आहि॥
स्वाम धर्म कीजै चित लाइ।
डरिये नाहिं जीव जौ जाइ॥
जौ कौ लौन पेट मैं लीजै।
तापर जीवरा बलि बलि दीजै॥

॥ दोहा ॥

काम संवारे स्वाम के, गनै न ज्यों की हानि।
सूधे मन सेवा करै, सो कीजै परधान॥

॥ चौपई ॥ १४ ॥
जब मंत्री ये भाव विचारै।
लै कै खपरिका मुरष्क निकारे॥
नाल केर में बाहे दोऊ।
मुख मुंद्यो बोलत ना कोऊ॥
रकते चल्यो अति ही दुःख पायो।
पै काहू सौं नाहिं लखायौ॥
संकट सहे स्वाम कै काज।
भाई नाहिं लौन की लाज॥
मोहि निपुंसक ही जग कहै।
पातिसाह जू कौ घर रहै॥
नालकेर लैके तब गयौ।
पातिसाह ढिग ठाढ़ौ भयौ॥
पातिसाह पूछत दै आन।
पीरै बदन तक्यो परधान॥
अरुन बरन काहे ते पीति।
सति कहु मोहि तोहि प्रतीति॥

॥ दोहा ॥
तबहिं कह्यो प्रधान यौ, बहुत दुख्यो मो पेट।
अव आयौ हौ जतन करि, लै यह तुम पै भेंट॥

॥ चौपई ॥ १५ ॥
यामै कहौ कहा धौं आहि।
सुनिबे की बाढ़ी अति चाहि॥
करि तसलीम कह्यो परधान।
याकौ अब ना करौ बखान॥
याकौ रखहु नीकी ढांव।
बिन मो कहे न लीजहु नाव॥

समयौ देखि बीनती करिहौ।
खोलि तिहारै आगै धरिहौ॥

अरदसेर लै भलै रखायौ।
वा दिन कौ तिथि बार लिखायौ॥

केतक दिनु बीते तब रानी।
बहुत पीर की पीर पिरानी॥

जरम्यो पूत भयौ उजियारो।
लह्यो बिलाइत कौ रखवारौ॥

मंत्री बहुत जीय सौं राखौ।
अपुनौ भेद न काहू भारवौ॥

॥ दोहा ॥

पल पल में प्यारौ लगै, तिल तिल तक्यो सुहाई।
छिन छिन मै छबि और है, दिन दिन बाढ़त जाइ॥

॥ चौपई ॥ १६ ॥

घरी घरी बाढ़त ही जाइ।
होनहार बिरवा कौ भाइ॥

चार बरस को जब वहु भयौ।
गुर कौ तबहि पढ़ावन द्यौ॥

बरस चारि मै सब कछु पढ्यो।
सकल सिखन ते आगै बढ्यो॥

कौठी बांधि मारि है बान।
नीकी बिधि खेलै चौगान॥

जे बिग्यान सकल ते जानौ।
जो देखै ताकौ मनु मानौ॥

मंत्री डरत दुरयो ही राखै।
काहू आगै भेद न भाखै।

येक द्योस पतिसाह अहेरै।
खेलतु है मंत्री हौ नैरै॥

हरनी हरन और म्रिगछौनौ।
पाछै गये देखि कै दौनौ॥

॥ दोहा ॥ अरदसेर दौराइ असु, घेरौ कीनौ आन।
म्रिगसावक कौ तकत है, लायौ छाहै बान॥

॥ चौपई ॥ १७ ॥ बान छाडिबे कौ जब होइ।
तब उठि बीच परै वै दोइ॥

लाबेन देहि न सावक बान।
आपहि बीच देतु है आन॥

देखि दया पतिसाह दयाये।
दोऊ नैन नीर भरि आये॥

पातिसाह कौ कछु सुधि नाहि।
म्रिग भाजि पैठे बन माहि॥

ताहि मै मंत्री ढिगु आयौ।
पातिसाह तब रोवत पायौ॥

असु ते उतर करी तसलीम।
सेवर रै सातौ अकलीम॥

नर हय गय रसना न समाहिं।
और दर्ब कौ लैखौ नाहि॥

जो भावै सो सब कछु आहि।
रही सु कौन बात की चाहि॥

॥ दोहा ॥ तुमकौ बीतत साह जू, चैन माहि दिनु रैन।
को चिंता चित कौ भई, जिह भर आये नैन॥

॥ चौपई ॥ १८ ॥

पातिसाह म्रिगन की बात।
एक एक मंत्री समझात॥
तक्यो मोह उनको मै भारी।
जगु मै संतत ऐसी प्यारी॥
हौ सुत हित लाग्यो द्रिग भरन।
मो तें भले बापुरे हरन॥
मेरे पाछै रहै न नाव।
नगर न देस न गांव न ढांव॥
बैस भई मो बरस इक्यावन।
लह्यो न नंदन नाव जिवावन॥
बिरध भयौ अब होत न संतत।
हो जगती मै रहौ न संतत॥
करि तसलीम कह्यो परधान।
चिंत हरौ दीजै ज्यो दान॥
पातिसाह तब दीनी बाहि।
मंत्री भेद दुरायौ नाहि॥

॥ दोहा ॥

ज्यों ज्यों राखी जतन सौं, सौं सब कर्‌यो बिचार।
अरदसेर मन मैं कहै, धन धन सिरजनहार॥

॥ चौपई ॥ १९ ॥

तुम रिस माहि कह्यो लै मार॥
मैं तब मन मे कियौ बिचार॥
साहिब संतति मारी जाइन।
तू बौछेरी बदन समाइन॥
और न संतत आहि तिहारै।
को मारै अपने रखवारै॥

दस बरसन में अब वहु भयौ।
पातिसाह उपज्यो है नयौ॥
पातिसाह के मन मे भाई।
मंत्री सौं कछु नाहि लुकाई॥
जब घरि आयो खेलि अहेरे।
मंत्री कह्यो तबै ह्वै नेरे॥
अबहि नारयर ल्यौ मंगाइ।
सूके मुक रहे मुरझाइ॥
देखत साहि अचंभै रह्यो।
अब मंत्री तू नीकैं लह्यो॥

॥ दोहा ॥

तिया तिहारी मै रखी, अपनै मंदिर माहि।
लोग कहा मौ कहत अब, जो मुक काढ़त नाहि॥

॥ चौपई ॥ २० ॥

अरदसेर देकत गह गह्यो।
मन मै भरम कछू ना रह्यो॥
कह्यो सुनहु मेरे परधान।
इन बातिन उपज्यो ...... ॥
सै लरके बैसेई लाव।
येक समान बसन पहिराव॥
छोरे सब पै येक समान।
मेरे ढिगु खेलै चौगान॥
जामै पाऊं अपुनी भांति।
अैन पातिसाही की क्रांति॥
मेरे मन कौ उपजै प्यार।
ताकौ नीकै लेउं संभार॥

चौप माहि खेलै चौगान।
देखहि पातसाह परधान॥

॥ दोहा ॥ **सब आगै पतिसाह सुत, लेकै बाढ़्यो गोइ।**
अरदसेर तब कहत है यह मेरौ सुत होइ॥

॥ चौपई ॥ २१ ॥ सबहिं लही आपुनी भांति।
अरदेसर कैसी मुख क्रांति॥
येते माहि लगी चौगान।
गोइ पटी छत्रपति ढिगु आन॥
जो धाव धावत उत आवै।
पातिसाह देखत थहरावै॥
डरत न नीरै आवै कोऊ।
देखै हसै खरे ये दोऊ॥
ताही मै सहजादो आयौ।
निडर गोइ चौगान लगायौ॥
लै जब चल्यो गह्यो पतिसाह।
गरै लगायौ बाढी चाह॥
संग लये अपनै घर आयौ।
सिंघासन पर आन बिठायौ॥
नौछावरि कीनी अनलेखै।
भिछुक करे भूप कै भेषै॥

॥ दोहा ॥ **हरख चैन पतिसाह कौ, बहुत दयौ करतार।**
इक रसना सौं जान कहि, आवत नाहि बिचारा॥

॥ चौपई ॥ २२ ॥ ताकौ नाव धर्‍यो सापूर।
येक पलकहूं करहि न दूर॥

सुत माता हू मारी नाहिं।
आनि बिठाई मंदिर माहि॥

अमर भयौ मंत्री परसाद।
मंत्री कौ दीनी बहु दाद॥

सब मंत्रिन कै ऊपर कीनौ।
जो वाको भायो सो दीनौ॥

बीच न रह्यो साहि परधान।
हैं घट दोइ येक ही प्रान॥

सुलप कथा गाई कबि जान।
दोइ पहर मै कर्‌यो बखान॥

ही बारस बदि माह कंवार।
सुकरवार जानहु हौं बार॥

सो रहसै नावा तब आहि।
जान कबि बांधी चित चाहि॥

॥ दोहा ॥ बहुत उतावर मै करी, छंद सचरी कै माहि।
भूल्यो लेहु सुधारि कै, पाहि ...... रहु नाहिं॥

कथा अरदसेर की संपूरन भई १७८४ मिती चैत बदी १०

लैला मजनूं

अरब प्रदेश के नजद पहाड़ नगर के एक व्यक्ति को नानाविध उपायों से पुत्र प्राप्ति होती है। बड़ा होने पर पुत्र का नाम मजनूं रखा जाता है और उसे विद्यालय में पठनार्थ भेजा जाता है। सहपठिता लैलै नामक युवती से मजनूं को प्रेम हो जाता है, जो कालान्तर में चर्चित भी हो जाता है। माता-पिता द्वारा लैला के विद्याध्ययन पर अकुंश लगाये जाने पर भी दोनों प्रेमी येन-केन प्रकारेण मिलते रहते हैं। मजनूं अपने आपको झंझीरों में बांधकर भिक्षाटन के बहाने लैला के आवास पर आता है और पागलों सा प्रलाप करता है। स्थिति अनियंत्रित देखकर मजनूं का पिता उसे लेकर मक्का चला जाता है। मजनूं का पिता लैला की पुत्रवधु के रूप में मांग करता है, किन्तु प्रस्ताव ठुकराये जाने पर निराश हो जाता है। बादशाह नौफल भी लैला के पिता पर दबाव डालते हैं कि दोनों प्रेमियों का विवाह हो जाये, किन्तु असफल रहने पर मजनूं का विवाह अन्य सुन्दरी से कराने का प्रयास कते हैं, किन्तु मजनूं द्वारा यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया जाता है। इधर इबनासलाम से लैलै का विवाह कर दिया जाता है, किन्तु इसके बाद भी लैला इबनासलाम के प्रणय को ठुकरा देती है और मजनूं के विरह में प्रलाप करती रहती है। लैला के विरह में मजनूं अपना घर छोड़ देता है। इसी बीच उसके मां-बाप का भी निधन हो जाता है फिर भी दोनों प्रेमियों की विरहाग्नि किसी तरह कम नहीं होती है।

लैला द्वारा प्रणय याचना ठुकराये जाने से क्षुब्ध इबनासलाम की एक दिन मृत्यु हो जाती है। इसके पश्चात् एक बार पुनः मायके जाते समय लैला मजनूं से जंगल में मिलती है और दोनों अपनी-अपनी विरहाग्नि का शमन करते हैं। लैला अपने माता-पिता के पास चली जाती है। एक दिन लैलै स्वप्नावस्था में मजनूं को मरा हुआ देखकर स्वयं विरहाग्नि में अपनी जान दे देती है। मजनूं का मित्र जैद लैला की मृत्यु सूचना अपने मित्र को देता है। मजनूं लैलै की कब्र पर एक वर्ष तक रोता रहता है और अन्त में स्वयं भी मर जाता है। मित्र जैद एवं नगरवासी अन्य लोग स्वप्नावस्था में प्रेमी युगल को स्वर्गस्थ सिंहासन पर समासीन मुद्रा में ताम्बूल चर्वण करते देखते हैं और उनके भाग्य की प्रशंसा करते हैं।

समीक्षा— *कला भावादि उभयपक्षों का समुचित निर्वहन करते हुए काव्य में संयोग वियोगादि के अतिरिक्त शान्त एवं करुणादि रसों की व्यञ्जना भी दृष्टिगोचर होती है।*

आलोच्य कृति में विप्रलम्भ श्रृंगार का सर्वाधिक वर्णन है, किन्तु संयोग की कहीं भी उपेक्षा नहीं है। इबनासलाम से विवाह हो जाने पर भी लैलै का अनुराग मजनूं के प्रति यथावत् बना रहता है। संयोग-वियोगादि का एक निदर्शन निम्नानुसार है :-

एक द्योस मजनूं छल कर्‌यो।
भेष आंधरे ही को धर्‌यौ।
द्रिग मूंदे बहु मागत डोलै।
को कछु देहु यहै मुष बोलै।
मांगत मांगत लैलै पौरि।
आई पर्‌यौ छलकैं तुहि ठौरि।
लैलै देषत ही पहिचान्यो।
माता सौ तब यहै वषान्यौ।

नायिका के मरण में करूण रस की अभिव्यञ्जना है, जहां नायक भी कब्र के पास रोता-बिलखता प्रेमिका की स्मृति में अपने प्राणोत्सर्ग कर देता है। लैलै मात्र स्वप्न में ही प्रेमी मजनूं को मृत रूप में देखती है और तुरन्त ही इस लोक से प्रयाण कर जाती है। यहां आकर ही प्रेम पाक एवं ईश्वरोन्मुख हो जाता है। सूफियों की दृष्टि में ही यहां आत्मा-परमात्मा में विलीन होने हेतु लालायित है- परमात्मा स्वयं भी उतना ही व्याकुल है- वास्तव में प्रेम पारस्परिक उत्सर्ग एवं समर्पण की यही भावना प्रेम का चूडान्त निदर्शन है। यदि गहराई से विचार किया जाये तो विग्रह प्रेम में साधक के समक्ष मात्र साध्य ही रहता है। लोकलाज एवं सामाजिक मर्यादा से जैसे बन्धनों से प्रेमीगण दूर हो जाते हैं। प्रेम का यही पाक पक्ष भावी प्रेमियों के लिये अनुकरणीय एवं पूज्य बन जाता है। यहां तक कि हिंसक जानवर भी उनके प्रेम के आगे अपने मूल वृत्ति का परित्याग कर प्रेममय बन जाते हैं।

वस्तुतः वियोगाग्नि में तपन के बिना साधक का स्वरूप निखरता नहीं- कंचन भी बिना तपाये अपनी स्वाभाविक निखार व्यक्त नहीं करता है। वैसे ही जीव सांसारिक वासनाओं एवं कालुष्य से विरत होने पर ही ईश्वराभिमुख हो सकता है- साध्यावाप्ति की ओर अग्रसर हो सकता है। प्रेम में निरह पक्ष का उत्पीड़न निजामीकृत लैला मजनूं में इतना मार्मिक है कि नायक विरहाग्नि में तड़प-तड़पकर प्राणोत्सर्ग कर देता है। खुसरो-शीरी में फरहाद भी इसी अग्नि में तपड़-तड़पकर मर जाता है। जामीकृत युसुफ जुलेखा में जुलेखा जीवनपर्यन्त विरह में तड़पती रहती है। जायसी ने ठीक ही कहा है कि प्रेम में विरह एवं रस दोनों ही हैं, जैसे मोम के छत्ते में बर्रे एवं शहद दोनों का ही वास है। भारतीय काव्यशास्त्र में चार प्रकार

का वियोग माना गया है। यथा पूर्वराग, मान, प्रवास और करुण लगता है कि हमारा नायक इन सभी पक्षों से गुजरकर आगे बढ़ता है। साधक को साध्य की अवाप्ति मरणोपरान्त ही हो पाती है।

संसार की नश्वरता प्रतिपादन में शान्त रस की स्पष्ट व्यञ्जना द्रष्टव्य है :-

नेते आये जगत में। सकल पाहुने आहि।
अन्त न कोहु थिर रहै। द्वै द्वै दिन की चाहि॥

विविध कष्टों एवं दान-पुण्यादि से मजनूं का जन्म होता है। माता-पिता द्वारा इस पावन अवसर पर अकूत धनराशि व्यय की जाती है, जहां याचक अयाचक बन जाने की स्थिति चरितार्थ हो जाती है, यहां वात्सल्य की स्फुट व्यञ्जना है।

छंद योजना— कुल 46 कवित्तों में प्रणीत इस काव्य में 31 वर्णीय मनहरण कवित्तों का प्राचुर्य है। कहीं-कहीं कवित्त एवं सवैयों में अभेद की स्थिति बन पड़ी है, जिन्हें ठीक कर दिया गया है। कुल 8 सवैयों का प्रयोग है, जिनमें 23 वर्णीय मत्तगयन्द का सर्वाधिक प्रयोग है। कुल 112 दोहों का प्रयोग किया गया है।

अलंकार— जान कवि की इस रचना में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अनन्वयालंकार, अनुप्रास, मीलित, यमक, संदेह, श्लेष आदि का प्रयोग है। अलंकारों में स्वाभाविकता है। अनुप्रास में छेका, वृत्यानुप्रास, लाटानुप्रास प्रयुक्त हैं। कहीं-कहीं व्यतिरेकालंकार भी है। उपमा, रूपक अलंकार अधिक हैं। अलंकारों के कुछ दृष्टांत निम्न हैं:-

उपमा— कवहूं तौ सूरज की नाईं ऊंचै ऊंचै फिरै।
कवहूं किरन नाई घर-घर जाई है।

यमक— मंगू मंहमद व्है गयौ, अलह बंकहि जांन।
नबी नांव पायौ तबहि, नबी नबिये पहिचान॥

रूपक— रूप-कँबल की प्रगटीबास, मगन भयौ मन क्यूं करता॥
बदन चंद देखहि जब बोर, दूरि भये ज्यों कँवल चकोर।

उत्प्रेक्षा — आवत मानौ पंख लगाये, फिर पंथ कंटिक बहरायें।
पवन बेगि चढ़ि मांनहु जाई, फिरत परे फलिका मनौ पाई।

मीलितालंकार— दर्पन मैं जब देखि है, लैलै अपनी जोत।
दर्पन लैलै होत है, लैलै मजनूं होत॥

छेकानुप्रास— *अनुप्रासों में छेकानुप्रास अधिक आये हैं। वृत्यानुप्रास, श्रूत्यानुप्रास, लाटानुप्रास कम है। अन्त्यानुप्रास भी हैं।*

वृत्यानुप्रास— चोरी चितवो चिंतवै दोऊ। ज्यों यहु वात पावै न कोऊ॥

लाटानुप्रास— *लैलै मजनूं पीति लगानी। मुख-मुख रूख-रुख भई कहानी॥*

श्रूत्यानुप्रास— *श्रूत्यानुप्रास के भी कुछ दृष्टांत आये हैं। चरणों के अंत में अत्यानुप्रासों का प्रयोग है।*

भाषा— *जांन कवि कृत 'लैलै मजनूं' रचना की भाषा ब्रज है जिसमें राजस्थानी का प्रभाव है। राजस्थानी के अनुनासिक व्यंजनों का भी आगम है। उकारान्त ध्वनियां शब्द और क्रियाओं में अधिक हैं। 'म' के स्थान पर 'व' वर्ण का प्रयोग हुआ है। जैसे नांव (नाम)। सहायक क्रिया 'हैं' का प्रयोग अधिक होने से खड़ी बोली का प्रभाव है। कहीं-कहीं अनावश्यक वर्ण भी आये हैं। भी के लिए वाँ का प्रयोग जैसे: कहुंवां (कहीं भी)। और तरफ के लिए 'वोर' कहीं कहीं' अवधी भाषा का भी प्रयोग है।*

कहावत एवं मुहावरों का प्रयोग— *इस रचना में कहावतों का प्रयोग अधिक हुआ है, मुहावरों का कम। जैसे:- सलिता लहै गई नहीं प्यास। पै उन येक्कै कांननि कींनीं॥*

कहावतों के प्रयोग से भाषा प्रभावशाली हो गई है।

मुहावरे— *मुहावरों का प्रयोग बहुत कम है। जैसे :-*

सलिता लहै गई नहीं प्यास॥
पै उन ये क्कै कांननि कींनी॥

लोकोक्ति— *जिंह मर बेकौ डरू नहीं, लरिबेकी का चिंत।*

शब्द शक्तियां— *इस रचना में लक्षणा, व्यंजना और अभिधा तीनों शक्तियों का प्रयोग हुआ है, जिनमें अभिधा और लक्षणा शक्तियों का प्रयोग अधिक हुआ है, जिससे श्रेष्ठ काव्यत्व में श्री वृद्धि हुई है।*

शब्दावली— *इस रचना की भाषा में संस्कृत, हिन्दी, ब्रज, राजस्थानी, अरबी, फारसी, एवम् देशज शब्दों का प्रयोग हुआ है, जिनमें तद्भव शब्द अधिक है। क्रमानुसार शब्दावली का विवरण निम्न है:-*

तत्सम— *'लैलै मजनूं' कृति में संस्कृत के तत्सम शब्द तो कम आये हैं, किन्तु तद्भव अधिक हैं। जैसे:—अलख, अगोचर, जगत, नर्क, कवि, अधम, सकल, बाम, निर्मल, नन्दन,*

षट्, समर्थ, पंडित, ससि, पवन, नाम, मुख, अर्ध, कूप, अंक, चित्र, पारद, नग्र, बात, प्रवर, काल, हुतासन, द्रुबल (दुर्बल), रकत (रक्त),

तद्भव— संस्कृत, शब्दों के विकृत-तद्भव शब्दों का लैलै-मजनूं में अधिक प्रयोग हुआ है। जैसे:-बसतर, ध्ररम, उद्रपूरनां, दर्ब, दर्बा, कछु, मारग, पुरांन, धरम, रावा, परसाद, सूरज, नांई सत पुंन, कंवल, बांन, पंवन, पैम, पैमु, पीय, चंवसठ, नेहु, मजनूं, लै लै, गरी-गरी (घटी-घटी), पौढिबौ, माता, पिता, मिंत, दीपग, म्रिग, घर, पाती, अंकवार, तात, ध्रित, दूध, रौम, बेद, पर्बत, विस्राम, पांनिपुता, दुर्नी, प्रसतर, मसीद, मसीत, देहुरै, दर्पन, भरतार, निरजीत, आँचर आदि।

अरबी— इस कृति में अरबी-फारसी के शब्दों का भी तत्सम और तद्भव रूपों में पर्याप्त प्रयोग हुआ है।

हकीक, हकीकत, अबीध, अरबी, अर्बा, खर्बा, मका (मक्का), मुल्कै, नजद-पहार, जंजीर, रुखनि, नजर, हजूर, कजा, मुकर, तकत (तख्त), राइ, नबी, चटसार, वटसार, नूर, मंजनूं, मुकरर्र, कैद।

फारसी शब्दावली—गोर, पतिशाहि, बादशाह, कजावै, गोरल, निकाई, कजावा, जहान।

देशज— 'लैलै मजनूं' रचना में देशज शब्दों का भी प्रयोग किया है। जैसे—ढिग, लून्यों, लेखे, पहिंयां, कितीयेक, चटसार, बूडक, गब-गब, लरकता, व्यापना, ज्यावै, बैत, हांतौ, अंकवार, गहर, जिन, बिगोवत, चाई, करेज, बसीठ, दमका, दमका, डिस्ट, पटीठ, अजर, हां तो, ज्योनार, दाय, सीरी, लपोरि, सोंहनि।

शब्द-विन्यास— संस्कृत शब्दों का प्रयोग हो या अरबी फारसी का तत्सम के बजाय तद्भव शब्द अधिक हैं। शब्दों का चयन सुन्दर है। गेयता या तुकान्त के लिए शब्दों एवं क्रियाओं को तोड़ा-मरोड़ा गया है। अभिव्यक्ति में कहीं तो क्रियाओं से छंद प्रारम्भ किये हैं तो कही शब्दों से।

शैली— 'लैलै मजनूं' रचना की शैली मसनबी है, जिसमें दोहा-चौपाई, चौपई छंदों का अधिक प्रयोग है। जायसी के पद्मावत में भी दोहा-चौपाई छंदों का प्रयोग है। तुलसीदास की मानस में तो दोहा-चौपाई छंद शैली का प्रयोग है ही। कवित्व शैली का प्रयोग दूसरे स्थान का है। जांन कवि की शैली स्वयं की भी है तथा उनकी शैली पर कुछ अन्य महाकवियों का प्रभाव भी प्रतीत होता है। श्रेष्ठ शैली, अभिव्यक्ति से कविता श्रेष्ठ बनती

है। इस रचना में पदशैली का प्रयोग नहीं हुआ है। कहीं-कहीं छन्दों के पूर्व गद्यों में प्रसंग भी दिये हैं। गेय शैली बहुत कम है।

संदेश— 'लैलै मजनूं' रचना के प्रणेता जांन कवि का पाठकों को यही संदेश है कि ईश्वर को प्रेम से ही प्राप्त किया जा सकता है जिसमें त्याग, बलिदान, एवम् सहिष्णुता की महत्ती आवश्यकता होती है। मजनूं (भक्त) का मुख्य उद्देश्य लैला (परमात्मा) को प्राप्त करने का है, तो लैला का भी उद्देश्य मजनूं (भक्त) को प्राप्त करना ही है। अर्थात् प्रेम की अभिव्यक्ति दोनों ओर से है। ईश्वर भी अपने भक्तों से मिलने के लिये उनसे प्रेम करते हैं। लक्ष्य की प्राप्ति होने पर भी काव्य दुःखांत है, बलिदान, त्याग की पराकाष्ठा है, जो संसार में अमर रहता है।

कवि ने इस प्रेम कहानी में अप्रत्यक्ष संदेश के अरिक्ति संसार को प्रत्यक्ष संदेश में यही कहा है कि इस नश्वर संसार में शाश्वत आनन्द केवल ईश्वर भजन से ही प्राप्त हो सकता है। भोगों में लिप्त रहने से ईश्वर प्राप्त नहीं हो सकते। मनुष्य जन्म को सुधारने के लिये राम-भजन की प्रेरणा दी है। निराकार ईश्वर की प्राप्ति साकार ईश्वर (गुरु महाराज) के द्वारा ही प्राप्ति संभव है। लैलै रूपी गुरु के बिना निराकार ईश्वर की प्राप्ति दुर्लभ है।

लैलै मजनूं की राजस्थान के बीकानेर जिले के अनूपगढ़ कस्बे में भी मजार बनी हुई है, जहां उनकी पूजा की जाती है। बुजुर्गों की अपेक्षा युवक-युवतियां मन्नतें मांगने अधिक आते हैं और वहां मेला भी लगता है।

संदेश पाक मोहब्बत (पवित्र प्रेम), निस्वार्थ प्रेम का है जहां इबन सलाम रूपी शैतान, भी सच्चाई और पवित्रता के आगे नतमस्तक हुआ है।

सूफी प्रेमाख्यान काव्य परम्परा में लैलै मजनूं का स्थान— सूफी प्रेमाख्यानक काव्य परम्परा में 'लैलै मजनूं' का विशिष्ट स्थान है। लैलै मजनूं की कथा का अन्य प्राचीन ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हो सका है। 'लैला मजनूं' के नाटक के अतिरिक्त एक फिल्म भी बनाई गई है। 'हीर रांझा' नाटक में इनके प्रेम की पूर्व के 6 जन्मों की प्रेम कहानी बताई है। लैला मजनूं की प्रेम कहानी का प्रथम ग्रन्थ अप्राप्त है। लैलै मजनूं का र.का. सम्वत् 1691 वि. है। लैला मजनूं की कथा में 'लैलै मजनूं' रचना का अपना महत्व है ही अपितु सूफी प्रेमाख्यानक काव्य परम्परा में भी इसका अमूल्य स्थान है। यह काव्य सुखान्त और दुःखान्त दोनों प्रकार का है। फिल्म में मजनूं का मूल नाम कैश माना है, जबकि 'लैलै मजनूं' रचना में मजनूं का मूल नाम का उल्लेख नहीं है। इसमें मजनूं के पिताजी के नाम का उल्लेख भी नहीं है तथा मां के नाम का उल्लेख भी नहीं है। सूफी प्रेमाख्यानों में गुरु के नाम प्रेमिका से अतिरिक्त माने है, जबकि इस काव्य में लैलै को ही गुरु मानना जांन कवि का दृष्टिकोण भिन्न है।

❑ ❑

॥ दोहा ॥

प्रथम चित सौं लींजिये, अलष अवगोचर नांम।
सुमरित ही कबि जांन कहि, पूजै मनसा कांम॥ १॥
चिंता कौ तारौ जर्‌यौ, इंछया डिस्ट न आइ।
तारी करता नांव है, लेत तंत खुलि जाइ॥ २॥
येक सब्द मैं जांन कहि, सिरज्यो सब सँसार।
जो चाह्यो सोई भयौ, होत नं लागी बार॥ ३॥
गुर झांर करतार कौ, लेष नां लिख्यो न जाइ।
उद्र पूरनां जगत की, करत न रंच घटाइ॥ ४॥
कर्ता गन की जांनि हैं, अबिगत अलख अभेस।
मन कौं गम कछु ना चलै, बुधि कौ नां परवेस॥ ५॥
अंग चैंन सुत जैंत द्रब, सब काहू यहु चाहि।
सकल भिखारी अलख के, जे कहि यें पतिसाहि॥ ६॥
मेरे वकि अपराध जो, देहु न नर्क जगत[3] हुतास।
मोसौं तैसी कीजिये, जैंसी तेरी आस॥ ७॥
रंच कहू अधिनांपरी, नां कछु सूझ्यो अंछ।
हमकौं हैं कंबि जांन कहि, पसु मांनस किधौ पंछ॥ ८॥
अधम अधर्मी लंपटी, कपटी जड़ पहिस्ट।[2]
तौऊ रमैं जान कहि, अलख दया पर दिस्ट॥ ९॥

॥ सवैया ॥[1]

रच्यो हैं रचनहार काहेते सवारि की, नौंनते कछु यहु जीं न धरियतु है।
जांन कहै मारग श्रावत पुरांनऊ जांन, बूडि दीयालयो कुवा परियतु है॥
जाकौ दयौ षाला कैं देस मैं वसत ताकै, देखत ही पापु करै नांहि डरियतु है।
महा निरषधि जाकौ कांहू बात कीन सुऔ सौऊ मुगध अपराधी करियतु है॥ १०॥
रावा तैं न छपात नैंकु तोते उपजत सोई, अन उपजी हूं पांवै मन मैं ही जानिये।

---

1. छंद नाम सवैया लिखा है, परन्तु यह 'कवित्त' छंद है।
2. इस शब्द में एक वर्ण कम है।
3. 'जगत' शब्द अनावश्यक प्रतीत होता है।

॥ कवित्त॥

जांनि बूझि करत अधरम सु बूझिय तु अनजांने होइ तूं न जांनै सोई जानिये।
जांन कहै काहे ते रच्यो है कछु यहो ग्यांन ध्यांन जांनैं सोई जांनिये॥
जांन कहे काहे ते रच्यो है कछु यहो ग्यान, ध्यांन धौंसयान नहीं आयो पहिचानिये।
छाड़ि दै कुटिल तूं कुटिल ताई कह्यो मांनि, चातुर सौं क्यौ रे चतुराई कैसैं गनिये॥ ११॥

॥ कवित्त॥

यौही यौंही यौंही यौंही यौंहि दिन गये हैं।
बालपन बाल लीला तरुना पै कांम कीला, ब्रिधपंनु आयें ते निबर बर भये हैं।
अजहूं न चेत्यौ मन बीति गये तीनौ पन, अंग-अंग नये तऊ अपराध नये हैं॥
जांन कहै इनकी जिये सुऽत आवै यांनि, सुख फलु पावै जिन सेवा वीज बये हैं।
जप तप कीनौं है न धरम कछु, जैसौ जिन बीज बोयौ तैसौ तिंन लुन्यों है॥
पाइये परमं पद धरम कैं परसाद कुकरम करि पुहच्योहू कोऊ सुन्यो है॥ १२॥
रह्यो लपटाइ बांम सुध्यान कछु कांम उधर्‍यो ना बेंन नांम उधर्‍यो जु बुन्यो है।
कहै कबि जांन मेरे मन सिख धरिकन इतहि न चेत्यो तिहिं आयौ सिर चुन्यो है॥
सीचे विषु बेल कैसैं लागत अमर फलु हों तौ अपराध कौ उदधि हौं।[1]
अगाह महाबिनं करतार कोऊ कह नहीं पाइ हैं॥
गुपित गुंनाह रहै गुपित गुपित आगै लेखनं दे अर द्वारि लिखे नहीं जाइ हैं।
परगट पाप हैं अमित सो बिचित्र पत्र चक्रित रहत चित लेखै मैं न आइ हैं।
किंधौं अपराध कौ पहार हौं भयौ हौं जांन नैंन झरना पै कभूं नाहि न बहाइ हैं॥ १३॥

॥ कवित्त॥

और न सुधार कछु नाव कौ अधार है।
नैंकु न निकाई राई हंरी सम पाइयतु, पापकी बड़ाई कहा कहिये पहार है।
जप तप ग्यान ध्यान सूझि बूझि घट प्रांन, पंछी मन बपरौ पर्‍यो जंजार है॥
करनी जु करनी सुरंचक न करी कभूं, अन करनी कैं कढ़ि बेको नहीं पार है।
अधम उधारि बैकौ बिरद निबाहिये जू॥ १४॥

1. इस चरण में कुछ वर्ण कम प्रतीत होते हैं।

॥ दोहा॥

मन चंचल कबि जांन कहि, तासौं कछु न बसाइ।
और वोर कौं आनियें, आंन कैद कौ जाइ॥ १॥

॥ सवइया॥

चित की चपलताई कहत कही न जाई, निहचल व्हैं न येक ठौर ठहरातु है।
इत टेरै उत धावै उत भेजे इत आवै, अपनैं ही सुख कौहै सीख नं सुहातु है॥
कवहु न होत बस में भरमत विसादख जान कहै यारौ मेरी कछु न बसातु है।
ध्ररमंकी आने वोर करै अधरम दौरि, कहू कौं चलावत कहूं कौं जलिजातु है॥

॥ कवित्त॥

कबहू तौ सूरज की नाईं ऊंचै-ऊंचै फिरै, कबहुं किरननाई घर घर जाइ है।
कबहू पाहरन नाईं उअचल संथुल रहै, कबहू फिरत भरमत डोलै बाइ है॥
कबहू तौ संत कबहू तौ अपराधी बडौ, कबहू तौ रंक और कबहू तौ राइ है।
कहै कबि जांन ठौर येकन रहे निदान, अैसौई चलि-बिचल चित्त कौ सुभाई है॥

॥ दोहा॥

जो मंजन है जात ह्वै, लै लै कर्ता नाम।
सोई पावै जांन कवि, प्रमखद्[2] मैं विश्राम॥ २॥
पेम पंथ अति कठिन है, चलन सकै तहँ कोई।
जापर आप क्रपाल ह्वै, सुगम चलैं तिंह होई॥ ३॥
निर्मल दर्पन पैंमुको, जामैं सूंझत पीय।
नांह[3] नैंह तैं पाइये, कहत जांन सुंनि जीय॥ ४॥
नेहैं षलै तैं मांजिये, दिल दर्पनु कहि जांन।
[4]निर्मल तब देखिये, मूरति मोहिन प्रांन॥ ५॥
पैमु महंमद कौं भयौ, जप्यो नांव करि प्यार।
तौं कछु आत नां रह्यो, पायौ है करतार॥ ६॥
मंगू महंमद व्है गयौ, अलह बंकहि जांन।
नबी[1] नांव पायौ तबहि, नबी नबिये, पहिचा़न॥ ७॥

---

1. भगवान का दूत। 2. आनन्द, ईश्वर। 3. मालिक, स्वामी, परमात्मा।
4. इस चरण में दो मात्राओं का वर्ण कम है।

मिंत महंमद को सार, येक्कै कीने नेहु।
मिले नबीनैं ज्यौं मिलत, सागर बूंदैं मेहु॥ ८॥
सहि जहां जुग जुग जियौं, जिंह हजरत सौं हेत।
जोई इंछया जीउ की, सोही करता देत॥ ९॥
कहत आंन अब बरनिं हौ, लैलै मजनूं प्रीति।
सोई विध प्रागूद[2] करौं, जो ग्रंथनि मैं रीति॥ ९॥
लै लै मजनूं की कथा, अधिक सुहावै कांन।
बिरही बिरहु बढाई है, आहि पैम मुषक्यांन॥ १०॥

॥ चौपई॥ १॥

कहत जांन अब बरनि हौं, लै लै मजनूं प्रीति।
सोई विध प्रगूद करौं, जो ग्रंथनि मैं रीति॥ ११॥

॥ अन्य बार्ता॥ चौपई॥

अरवीयेकर कौ गन्यो। नजै है दर्ब दमकाते मानसकौ मांन[1]॥
दंमका पांनि पुआहि जहांन। जाकी गठिया वाहि नंदांम॥
ताकेनां पूजै मनकांम॥
अरबी और कछू दुष नांहि। चिंता पुत्र रहै चित मांहि॥
तहै कहत किह काज बिभूत। जौ कर्ता मुहिदयौ· न पूत॥
पुंन करै निस बासुर अर्बा। भूंखे नांगे पांवहि दर्बा॥
वडी रात उठि बिनती करै। तुंम बिंनु करता को दुख हरै॥
तुमतें पूजै मन की साध। तुमतें पांवहि दुखित संमाध॥
तुम मंन इंछ्या पुरबा आहि। तुमते लहिये चित की चाहि॥
मोकौं दयौ दर्ब तुम भारौ। तौ याकौ दीजै रखवारौ॥

॥ दोहा॥

तुम समर्थ पौषन भरन, तुमतें सब कछु होइ।
आस धरै सेवा करैं, होइ निरास न कोइ॥

1. इस पंक्ति में चौपाई का क्रम सही नहीं है। 2. प्रकट, वर्णन।

॥ सवैया ॥

हरिये हरनहार चिंता मेरे चित्त की। चैन के निवास तुम दाता हर हरख हुलास पुंजवन आस हौ सतकी॥
चैंन के निवास तुम दाता हरष हुलास, पुजवंन आस हौ सकल सितासित की॥
त्यागी रुच लोच तुम मोचन हौ सो मोच, लेत हौ संभार बार-बार हीं दुखित की॥
ताते जांन जांनि इछ्या मांगत है जोरि पांनि रावरी तौ बांनि चली आई यहैतिकी॥
करियौ सुहीठि काहूं डरते न डरिये ज्यौं॥

॥ चौपई॥ २॥

पुंन करत करतार दयायौ। अरब उजागर नंदन पायौ॥
आलो पूत पिता डिठु परयो। नयौ चंद कि बंदन कर्‌यो॥
अरब खरब द्रब दींनैं अर्बा। करे धनाढ़ि भिखारी सर्बां॥
षट् दिन कीनै मंगलचार। करी सात वैं दिन ज्योंनार॥
आयौ बहुत कुटंब परवार। भोजन जींयौ सब सैंसार॥
जबहिं भयौ दसबरस निनां हिया[2]। तबहिं पठायौ पंडित पहियां॥
मजनूं पढन बिठायौ जहां। बालक बहौत पढ़त हैं वहां॥
किती येक कन्या उत आवत। पंडित सबकौं भलैं पठावत॥
कन्यां येक बहुत अभिरामं। बाकौ लैलै कहियुत नांम॥
मुक्र अबीध[1] तीय बहु आहि। जौ देषत छेदत चित ताहि॥
रूप कंवलकी प्रगटी बास। मग्न भयो मन क्यूं करतास॥
बदन चंद देखहि जब बोर। दूरि भये ज्यों कंवल चकोर॥

॥ दोहा॥

ससि कबहू बोलत नहीं, नांहि मिलत कहिंजांन।
नीकी पीति चकोरकी, तऊ न धरत ध्यांन॥

॥ लैलै रूप बखानं॥ चौपई ॥ ३॥

बार रैंन लखै मुख चंद। भौंहैं बंदन आपौ मंद॥
चौंननी रातल मुख हर नंछी। चाहि-चाहि तरफत चित पंछी॥
मुख उज्जल कारे सिर बार। ससि ऊपर बैठी आलहांर॥
मीठे अधर मिस्टी हीं बात। सुधा स्रवत ससि तें दिनरात॥

---

1. अच्छा-बुरा, संसार। अक्षत, अक्षिद्रित।
2. इस चरण में वर्ण अधिक हैं।

द्रिग-द्रिग तापर अंजंनु दीनौं। बावर बानि चिंतु हरि लीनौं॥
संघ बिक्रम अबला भई। अंग-अंग उपजी छबि नई॥

॥ दोहा॥

रजनी से तीयबार हैं, और बदन रजनीस।
उडिगन मुकता भंग के, सुभग बिराजत सीस॥ २॥
कंवल सदा तरसत रहैं, कबहूं चंद लहंत।
नैंन कंवल तिय जांन कहि, मुख ससि मांहि रहंत॥ ३॥
पैंने पांनि पुमैंन भुव, धानु देत चलाई।
नैंन बांन नैंननि लगत, मंन मैं निकसत आई॥ ४॥

॥ सवैया॥

जलरज पवन अगिनिते मनुषकारे, जारौं बात उलादे् बलादे कै तू करी है॥
जठांव सांन्यो है सुधाकौर सुदैदै भलैं, जगव कुंकुम तू घालि धरी है॥
गवन की गवतो मैं मलयां सुबासा मिली, अगिन की ठांवतोमैं[1] सारी दुति जरी है॥
अमित अधर ससि-बदनी सुवास स्वास कुंकम बरनुं सबलन सोभा भरी है॥
लै लै मजूं के नैन लगे॥

॥ चौपई॥ ४॥

लगे औचका मजनूं चैन। चक्रित भयौ झाकै दिन-रैन॥
लै लै हूंकी लागी अखिया। भूल्यौ पढ़िबौ भूली सखियां॥
कदोऊ कींने बिरहु उदास। भूली नींद भूष सुख प्यास॥
पढ़िबौ और जीभ सौंरढ़ियो। पैमु पाढ़[2] नैंननि सौं पढ़ियो॥
गुर पढ़इ सब कुछ समझावै। पैम गुरु सब जगत भुलावै॥
प्रभू जुके तन केट भगावै। पैमु सकल ही अंग गवावै॥

॥ दोहा॥

श्रवन भरे पिय बैंन सौं, नैंन भरे पीय जोत।
रसूं भरी पीय नाम कौ, पढिबौ और न होत॥ २॥
छबि कौ तरवर ताकि मन, बल होइ न पढाइ।
ताकौ नैंना सींचि हैं, धन आंसू बरसाइ॥ ३॥

---

1. ठांवततो= ठांव, जगह, गोलका निशाना। 2. पाठ, अध्याय।

पलकैं पलक मिलत हैं, सो मूंदि-मूंदि लैं नैंन।
डरत कहूं जिन रीझि है, हमन भलै दिन रैंन॥ ४॥

॥ सवैया॥

लाज कौ तारौ खुल्यौ छबि तारी सौं पैढगयौ पीय नैन की पौरी।
धाम हिये तें सयांन् कौ दर्बहि राइ लयौ तब घालि ठगौरी॥
आंगन तें घर मैं धरतें फिर आंगन बौरी भई करौ दौरी।
ढौरी लगाई है जांन प्रभु बिरहानल देहु जगै जिभ मैंरी॥

॥ सवैया॥[1]

सूघी निरषन चखि रुख जुग सन मुख, बाकी चितवन गति फर जीकी लीनी हैं।
पाइक दसन की फीलछाल मैंन मांती चलैं, चलंलता असुना की आंनि सहि दींनी है॥
रूप की बिसात चवसठ धरसोई कला, हांसी मन सूबनि सौं खेलि बुधि झींनी है।
मेरौ मन छत्रपति घेरयौ कबि जांन कहै, पलक मैं लाज कीतौ बाजी नासकीनी है॥

॥ चौपई॥ ५॥

नैंन सैंन मैं करि हैं बात। मुख बैनन की बनत न बात॥
चोरी चित वो चिंतवै दोऊ। ज्यो यहु वात पावै न कोऊ॥
बिरही की गति बिरही जानै। गुंगसैन गूंगौ पहिचानै॥
दोऊ रोवैं भये अधीर। पाटी भीजै अंसुवा नीर॥
जैतो कोऊ पैंम दुरावत। अंसुवा संगरौ भेद लखावत॥
पीति बरन करि है मुख प्रपीत[2]। नांहिन दुरै नेहुकी रीत॥
येक रीत है नेहु सुबास। दुरित न केहूं करत प्रकास॥
रुई मांहि को अगिन दुरावै। दुरत ननैंकु चलत प्रगटावै॥
पीत दुराइ दुरतन केहूँ। बिरही जतन करत सो येहू॥
केतक दिन यहु बात दुरानी। अंत पीत इनकी प्रगटानी॥
पर्थम बात चली चटसार[3]। पाछैं नग्र लया विस्तार॥
परी बात लरकांनि मुख मांहि। निर्बुधि नैकु दुरावति नांहि॥
लैलै मजनूं पीति लगानी। मुख मुख रुख रुख भई कहानी॥
घर-घर मैं यहु सौरौ[4] होइ। और कहानी कहै ना कोई॥

---

1. सवैया छंद प्रति में लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है।
2. 'प्र' शब्द अधिक है। 3. शाला, विद्यालय 4. शोरगुल

॥ सवैया॥

जेते उपाइ करैं बनि अपन रंचक पीति दुरै न दुराई।
कुंड मैं चंदन मूध्यो रहै अरु आंगरू ईम छपै न छपाई॥
उत्तिम बांस प्रकास करै कबि जांन भनत लुकैन लुकाई॥
तौ रसना करि कै बसि राखिये रोंवहि नैंनन मानै दुहाई॥

॥ लैलै की मात ने बात सुनीं॥ चौपई॥ ६॥

सुनीं बात लैलै की माता। सगरे बसतर फारे गात।
हाइ-हाइ करि मुखहिं पुकारै। गहि-गहि सिरके बार उपारै॥
दौरी आई लैलै पास। रोवत अैसें कर्‌यो प्रकास॥
आज जात मैं यौ सुनि पाई। तैं मजनूं सौं पीति लगाई॥
तोते हमनीके जस पायौ। निर्मल गोत कलंक चढायौ॥
काहे कूं जग मैं तू भई। जर्मत ही मारि काहिन गई॥
तो ऊपर तौरीझहिं कोर। तौऊ ताकौ लगैं न खोर॥
ससि कौं अनंगन तहि चकौर। वहु कबहूंना देखत वोर॥
वहुत पतंग दीप जीय देत। पैं दीपग कछु करत न हेत॥
कहा भयौ वहु रीभयो तोहि। पै तू रीझी यहु दुख मोहि॥
अब चटसार पढ़न जिन जांहि। जौ अपनै ज्यो की है चाहि॥
जौ तूं घरते बाहर जे हौ। तौ फिर जीवत धाम न पैहौ॥

॥ दोहा॥

तै तौ निर्मल गोत कौं, लाबै बहुत कलंक।
घरतें जौ बाहर गई, मारहिं अबहि निसंक॥

॥ लैलै बटसार[1] तें राखी॥ चौपई॥ ७॥

लैलै मुख अतर नहीं आई। पव्दै[2] घर मैं रखी बिठाई॥
जांन नि पावत है वटसार। लैलै रसना पावै यार॥
सब मिटि गई बदन की जोति। घरी-घरी में दुर्बल होति॥
ज्वाला बिरहुन बाहर भई। दुरी दुरी के हरि जरि गई॥
बिरहैं कीनौं छांदी छेद। काहू सौं नां भाखत भेद॥

1. ताले में बन्द करना। 2. परदे वाले।

भूख प्यास. न निंद्रा आवै। तारे गनि-गनि रैंन गवानै॥
पीति बर्न मन ह्वै गयौ बाल। मारित माचे करि है लाल॥
छलि करि लैलै मगनि भई। रोवत ही सगरी निस गई॥
भीजे सकल बिंछौना भारी। छलकैं बात दुरावत नारी॥
बहुत प्रसेद चलत मोगात। सब बसतर भीजें ही जात॥
हाई-हाई करि उठै अधीर। कहत येक मेरैं मैं पीर॥
लैलै या विधि निस दिन जात। अबहुं सुनहु मजनूं की बात॥

॥ दोहा॥

लैलै आंवन ते रषी, नां आवै चटसार।
मजनूं बूडक खातु है, विरह-उदधि की धार॥
लैलै बिनुं मजनूं बात करतु है॥ चौपई॥

॥ चौपई॥ ८॥

लैलै कहूं वाडिस्ट न आवै। मजनूं नैंननि नदी बहावै॥
कबहूं घर कबहूं चटसार। गरी गरी मैं करत पुकार॥
असुवान गरी छिरकतौ जहां। जिन कबहूं इत लैलै अैहां॥
पाछैं बहुत लरकता डोलै। बौरा-बौरा ही मुख बोलै॥
मजनूं कौनं जगत की कांनि। बदनैं अपनैं ज्यों की हांनि॥
दार्‌यो कींनाई दिल फूट्‌यो। बीज बरन तातें रति छूट्‌यो॥
पाइपान हियां नासिर पाग। जरतौ फिरै बिरहु की आग॥
कबहुं गावै कबहुं रौबै। अंसुवनि सौंतन बसतर धोवै॥
अर्ध निसा कौं मजनूं आई। लैलै पौरि चूमि उठि जाई॥
दौर्‌यो लैलै कैं दरबाइ। उनतैं चलै चल्यो नहीं जाइ॥
आवत मांनौं पंख लगाये। फिरत पंथ कंटिक बहारायें॥
पवन बेगि चढ़ि मांनहु जाइ। फिरत परे फलिका[1] मनौ पाइ॥

॥ सोरठा॥

लैलै लैलै नाम, मजनूं रोबै रैंन दिनं।
कबहूं न लै विश्राम। गव भव बिलपति फिरै॥

1. फलिका=बाधा, काँटे।

॥ दोहा॥

खैबो पीवौ पौढिबौ, अैबौ जैबौ काज।
सब निसर्‌यो कबि जांन कहि, भयौ नेह कौ राज॥

॥ सवैया॥ ९॥

लैलै की चरन धूरि लैलै सिर धरि है॥
कबहूं कबहूं जीय जानत, अंजनि आहि।
पाननि सौं आंनि आंनि नैननि कौं भरि हैं।
जांन कहै कबहुं कहत यहु चंदनु है, उमिग-उमिग अंग अंग खौरि करि है॥
घरी-घरी अंसुवनि छिरकै पिरमंगरी पाइन की खेह कभू प्रह्म मैं परिहै॥
मजनूं बिवोगी तनमन कैं भंजन काजैं॥ ३॥
लैलै की धरी की धूरि मजनूं कौ अंबर है, कीदम गबीचिकी सुचोवा कैं लाइ है॥
आधी निस जब होई रहै सोइं सब कोइ लैलै पौरि चूंमि बेकौ तब उत जाइ है॥
मन के गवन ज्यों चलत है ख़खलत, पंछि न पैलीनों पंछ किधौं चढ्योबाइ है॥
घर कौं चलत सब लभ सकति नैकु, गिरत परेत आंनौ कांटौ चुभ्यो पाई है॥

॥ मजनूं छल करि लैलै देखी॥ चौपई॥ १०॥

येक द्यौंस मजनूं छल कर्‌यो। भेख आंधरैं ही कौ धर्‌यौ॥
द्रिग मूंदे वहु मांगत डोलै। कौ कछु देहु यहै मुख बोलै॥
मांगत मांगत लैलै पौरि। आइ पर्‌यो छलकै तहि ठौरि॥
लैलै देखत ही पहिचान्यो। माता तौ तब यह बखान्यो॥
पर्‌यो आंधरौ पौरि हमांरी। याहि उगवति हौं महितारी॥
कर गहि मजनूं लयौ उचाइ। रहे जुगल तब डिस्ट मिलाई॥
दहुंन कै द्रिगु अंसुवा दौरै। बोरे भये अधिक ही बौरे॥
लैलै बहुत प्यार जनायौ। बिदा कियौ लै पंथ बतायौ॥
मजनूं[1] ते मूंदे नैन। डिस्ट परीतो लैंलै अैंन॥
औरन सूंझै जासौ नैन। सोपिय कौ देखैं दिन रैंन॥

1. रिक्त स्थान में 'हाथ' शब्द हो सकता है।

॥ चौपई॥ सवैया॥ १०॥

येक द्योस आंधरे कौ भेष धरि मजनूं, मांगत-मांगत लैलै दरबार गयौ है॥
आंधरै को पुंनि कीजै प्रारग[1] बताइ दीजै, छल करि पर्‌यो भौंम मुरछित भयौ हौ॥
लैलै पहिचान्यों जायो भेद मेरैं लये ठान्यों, कर गहि उचांइत बल्यौ है॥
मजनूं उधारे नैंन तन मन भयौ चैन कहै धन भागु जुद[2] जस लैलै दयौ है॥

॥ मजनूं छल॥ चौपई॥ ११॥

मजनूं हर्ष नी घरू आयौ। तरसत हो सो द्रसनु पायौ॥
मजनूं बहुरि जर्‌यो लओर। भिछ्‌या लेत फिर्‌यो सब ठौर॥
आइ पुकार्‌यो लैलै पौरी। यहु पहिचान भीख लै दौरी॥
माता कहै चली कतलारी। अपवर दये पुंन है भारी॥
कह्यो भीख लै जाहि ले आरी। मजनूं उरते आहि निकारी॥
लैलै प्यार जनायौं भारी। मजनूं चल्यो भीख लै दरसा॥[2]

॥ दोहा॥

कहत जांन कबि जानियौ, उलटौ पैमु सुभांइ॥
दरस भीख जौ पाईये, बहुत भूख प्रगटाय॥

॥ सवैया॥[3]

मजनूं भिखारी भेष धरि कैं नगर गयौ, जिंन कहूं लैलै की दरस भीख पाइये॥
आवत आवत यहुं प्यारी पौरि आगैं आखौ, कह्यो करतार नांव कछुवा दिवाइयो॥
लैलै भीख लैकैं धाई, मजनूं कैं नेरैं आई, यहै कह्यो स्वामी आगैं नहीं आइयो॥
दरस परस कैं सरस भयौ रौम रौम, अैसी भीख पाइये तौ न मागत लजाइये॥

॥ मजनूं पवन सौं सदेसौं देतु है॥ चौपई॥ १२॥

लैलै कुटंब जहां बिस्राम। पर्बत नजद कहत ता नांम॥
उहिं पहार ऊपर निनै है। जिन कहुंवा लैलै उठि अैहै॥
बहदै मजनूं और पहार। झरना बहै नैंन जलधार॥

---

1. 'प्रारग' शब्द के स्थान पर 'मारग' शब्द होना चाहिये।
2. इस चरण में तुकात नहीं है।
3. सवैया नाम लिखा है, जबकि सही छंद 'कवित्त' है।

लैलै लैलै करत पुकार। यह सबद तब करत पहार॥
गिर पाहन चूंमत कर प्यार। तूंह लेत नाव मुहि यार॥
बहुर पवन सों देन संदेसौ। कहु लैलै सौं मोहि अदेसौ॥
वाकै तन हांहां लगि जाइ। बहुर मोहि तंन लागीं आइ॥
पाती लिखि देत उडाई। पवन संग जिन पुंहचैं जाई॥

॥ सवैया॥ दोहा॥ १२॥

घरी घरी मैं बिरहु दुख, लिखि लिखि देउ पठाई।
पंवन कभूं जौ मिंत पैं, पाती लैलै जाइ॥

॥ सवैया[1]॥ १२॥

मजनूं कहै पवन हाहा तूं गवन करि, मेरौ तू संदेसौ पहुंचाइ लैलै प्यारी कौं॥
बौरा भयौ नाम लोग आरे हंसै आठौ जाम, मेरौतौसौंकाम जानौं गुर करि गारी कौ॥
तन मैं बियोग ब्याध बेदन कर्‌यो असाध, तौई है समाधै तुम देखौ आई नारी कौ॥
कछु नाहि रह्यो मोमैं यहै अब मांगौं तोपैं, औषद-दरस दीजे पनैं भिखारी कौं॥

॥ दूरतें मजनूं लैलै निहारी॥ चौपई॥ १३॥

येक द्योस पर्बत पर दूर। डिस्ट पर्‌यो लैलै कौ नूर॥
दूरीहिं मिले दु हुनि केंनैंन। तौऊ[3] चित मैं उपज्यो चैन॥
दूरि-दूरि ही देखहिं वोर। भेद भयौ है चंद चकोर॥
दूरहीं दूर बहुत सुख भयौ। सैंन दई तब उठि घर गयौ॥

॥ दोहा॥

निकट रहै नांहिन मिलै, यहै चित मैं चिंत।
तौनीकी जौ दूरिहूं, डिस्ट परै लप मिंत॥ २॥
जान कहै अंसुवा ढरै, देखें मूरति मैंन।
पांनि पुता[2] न समात है, उमगी चलत मग वैन॥ ३॥

---

1. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, किन्तु 'कवित्त' छंद होना चाहिये।
2. पानिपुता= लक्ष्मी। 3. तभी

॥ सवैया ॥ १३ ॥

मजनूं चढ्यो पहार येक दिन घर पर ही लैलै चितचोर।
इन इतते उन उतते हेर्‌यो झांकि रहे हैं दोऊ कोर।
नैंननि कै मग जाइ मिले मन हांती रही दुहनिं की खोर।
दूरि-दूरि देखैं सुख पांवै जान कहै ज्यों चंद चकोर॥

॥ दोहा ॥

येक द्‌योस जंजीर मैं, मजनूं आप बंधाइ।
फिर्‌यो नगर मत कहूं, लैलै कौतिग आइ॥

॥ सवैया ॥[1]

मजनूं जंजीरनि मैं अपनौं बंधाइ तन, नगर बगर डगर निमति जाइ है॥
लैलै लैलै नांव अति रोवत धोंवत हाथ, कबहुं पक हंसि और कबहू गाइ है॥
काहू पैं न मांगै कोऊ देत तौऊ लेत नांहि, फिर्‌यो ईकरत कछु पीवत न खाई है॥
बावरौ ही भेष कीनौं मजनूं सु याहि हित कौतिग कनजनि लैलै कह आइ है॥

॥ मजनूं कौं पिता बात सुंनी ॥ चौपई ॥ १४ ॥

पिता सुनों मजनूं की बात। चिंत अधिक बियापी गात॥
कंटिक चुभै पूत कै पांव। परै पिता की छाती घाव॥
पूत अंग जौ उपजै पीर। सो वहु ब्यापै पिता सरीर॥
जौह्वै खोर पूत कैं गात। तऊ निर्मल करि जांनत तात॥
कैसौई व्है पूत कपूत। मात तात कौं लगै सपूत॥
रहै पूत तें जग मैं नांव। रहे पूततें घर की ठांव॥
दुखित भयौ मजनूं कौ तात। पूछत काहू देख्यो जात॥
कहू कह्यो नजदगिर मांहि। डोलत समझत धूपन छांहि॥
गयौ उतहि मजनूं कौ ताता। द्रिग देखयो जु सुनांही बात॥
फटे बसन तन बैठ्यौ रोवत। बदन धूरि अंसुवनि जल धोवत॥
छीन-हीन मजनूं कौ गात। बौरा भयौ देखि कैं तात॥
रोवन लाग्यो कपरे फारे। रुखनि सौं सिर उर देमारे॥
पूत कहा तोकौं यहु भयौ। तेरौ बरन भेष फिरि गयौ॥
बौरा भयौ बिलाम्यो भूत। किधौं नेहु उपज्यो कहूं पूत॥

---

1. छंदनाम सवैया लिखा है परन्तु ठीक नाम 'कवित्त' होना चाहिये।

॥ चौपई॥ सवैया॥[1] १५॥

सुनी मजनूं की बात ब्यापौ दुख तात गात, रोवत है दिन-रात कछु न सुहात है॥
मजनूं कौं देत सिख वाकौं लागै जैसी विषु, मानस कह्यो रिष कैसे समझात है॥
सो सुनैं धरिकांन जाकैं बस होंहि प्रांन, मन फिरै भाज्या वाकैं पाछै तन जात है॥
टूट्यो तरपात बलगैं बात फिरै भरमात, जेसैं बिहरी कौ जीउ नाहीं ठहरात है॥

॥ चौपई॥ १५॥

लैलै पिता अंक मैं भरै। मजनूं लैलै लैलै करै॥
अैसौ बिरहु पैमुंभर मान्यो। मजनूं पिता नांहि पहिचान्यो॥
पूछत तौकौं कितते आयौ। कछु संदेसौ लैलै लायौ॥
तबउं न कह्यो पिता हौ तेरौ। येक बार नीके करि हेरो॥
माता पिता कौम सौं कहिये। पैम पिता जासौं सुख लहिये।।
रोबो पिता कछू नहीं बात। तबहि बनांई औसी[2] घात॥
हौं लैलै तुव पास पठायौ। बहुत प्यार सौं बेग बुलायौ॥
सुनत नाव लैलै उठि धायौ। पिता कियें छलु डेरैं आयौ॥
सौंज्यौं मजनूं माता आंनि। कीनौं सिगरौ बिपति बखांनि॥
माता दौरि भर्‌यो अंकवार। पीटत सीस उपारत बार॥

॥ दोहा॥

मजनूं कौं कर पकरिकैं, न्यारै बैठे जाइ।
मात-पिता सिरलख[3] देत हैं, बात कहै सुमुझाई॥

॥ पिता मजनूं कौ सिख देतु है॥ चौपई॥ १६॥

उन जतनंनि करिकैं हम पायौ। तू अब हमतें भयौ परायौ॥
हम जांनत बाढी हंम आव। तैं अैसौ उर लायौ घाव॥
हम जानंतं हे बूढ़े भयो। अब तोते फिर व्है हैं नयो॥
तैं सौं बातैं करी प्रकास। जीवन की हम रही न आस॥
काहूं सेती पीति न कीजै। कतज्यो हाथ पराये दीजै॥
जो नारी कैंरसु मैं पढ्यो। तिंन आपुंन पौ निहचैं ठग्यौ॥

1. प्रति में चौपई/सवैया नाम अनुचित लिखा है, वास्तविक छंद 'कवित्त' ही है। 2. 'अैसी' होना चाहिये।
3. इसमें दो वर्ण अधिक हैं।

तन मन सुधि बुधि लैहैं चोर। जांननि दैं करता की ओर॥
ता कारन तैं आप गवायौ। आपुंन पर सब जगत हंसायौ॥
बुरौ कहत सबही जगतोकौं। कहा लह्यो यामैं कहि मोकौं॥
ज्यों ज्यों तोकौं दुषिया दैखैं। हम आपुंन कौं मिर्तक लैखैं॥
हूक परे फारहि दुखतीय। त्यौं-त्यौं फटै हमारौ हीय॥
बिरहा जाय अंग तिहारौ। देखि करै जौजर[1] हमारौ॥
जिंहर बात की नाहीं चास। ताकैं लयें न होहु उदास॥

॥ दोहा॥

हाहा करें हम कहती, अबहिं ग्यांन पर आव।
तू मरि है तौ हम मरैं, तूहीं हमारी चाव॥

॥ मजनूं पिता सौं कहतु है॥ चौपई॥ १७॥

मजनूं कहत पिता कों बैंन। तुम जीवहु अंनिगन दिन रैंन॥
जौलौं सुथिर रहैं सैंसार। तौलौं तुम ज्यावै करतार॥
तुम सब नीकी बात बखानी। मैंरै स्त्रवनन लगी सुहांनी॥
मन मेरौ बौरा ह्वै गयौ। हौं डोलौं ता पाछै भयौ॥
मेरौ मन नाहीं मो हाथ। हौं भर्मत डोलौ ता साथ॥
मेरौ कह्यो न रंचक मांनत। जात जहां मन कौ मन मांनत॥
सीख देउ तौजौं डिठ आवै। दुस्यो दुर्‌यो मोकौं भरमावै॥
मंन कैं तौ है स्त्रवन न नैंन। ना कछु देखै सुनत न बैंन॥
छत्र पीतन मैं मनु आहि। अंग सकल हैं सेवक ताहि॥
नैंन कहै जित मंन को भांवरि। हम आपहिं करि है नौछावरि॥
मन की लगंन लहै हम जाइ। है बार सौ मजनूं फिरत अधीरा॥[2]

॥ चौपई॥ १९॥

पितारोइ पाछै तैं धायौ। सोधि रह्यो मजनूं न पायौ॥
पेखा निकरहत उहिं नगरी। पीति रीति जांनत वहु सगरी॥
मजनूं पिता जबहि ढिगु जाइ। पर्‌यो दौरि पुरषा कैं पाइ॥
अैसौ मोहि उपाइ बताइ॥ मजनूं कछू चत[3] पर चाइ॥

1. इस शब्द में एक वर्ण कम है।
2. इस शब्द में तुकान्त नहीं है। वर्ण भी अधिक हैं।
3. इस वर्ण में एक मात्रा कम है। 'चित्त' शब्द हो सकता है।

बसनन फारै रोवै नांहि॥ तौ उपजै सुख मोघट माहिं॥
लैलै परी घूरितूं आंनि। मजनूं नैना अंजन सांनि॥
निहचैं मजनूं नाहिन रोवै। द्रिगुन मां हित पूतन खोबै॥
लैलै स्वांन वार तूं लाव। सींव सुहायौ वसन बजाव॥
मजनूं पिता तहि उठि धायौ। बार धूरि दोऊ लै आयौ॥
बहुरि सोधि मजनूं कौं लायौ। यद्रि गरज बसन निबार बनायौ॥[2]
मजनूं रोवत बहुत संकाई। लैलै गरी धूरि बहि जाइ॥
स्वांन बार बसनीकैं माहीं। तातें बसतर फारत नांहीं॥
हांइ-हांइ करि बहुत पुकारै। सिरनौं कर भीतन सिरमारै॥
हिंरदो कूटै नखर चुभावै। रक्रमांहि सै सनर गावै॥

॥ दोहा॥

कहा भयौ जौ बिरहिया, कपरे फारत नांहि।
मन कौं फाट्यो देखि कैं, अंग-अंग फटि जांहि॥

।। सवैया।।[1]

मजनूं कैं नैंननि मैं लैलै केगरी की धूरि, आंनि करि आंजी कैसैं रोवै बहि है॥
लै लै स्यानं बार लैलै सीयौं बसननि मांहि, फारे दूरि होत ताते अधिक संकाइ है॥
कीनौं मुख हाइ ज्वाला अंदर लगी है जाइ, जरतिनि हरिजल अंसुवा बुझाइ है॥
कहै कबि जांन कोऊ कोटका तन करौं, पैमु पीर हरि बैकौ कुछ न उपाइ है॥

॥ मजनूं कौ पिता मकै लै गयौ॥ चौपई॥ २०॥

सोच करत नित मजनूं तात। आई यहै जीऽमैं बात॥
मजनूं कौ मुल्कै लै जैहौं। उतहि सयानौं करि लै अैहौं॥
उतहिं जाइ मागै कछु कोइ। करता वाकौ दै है सोइ॥
मजनूं सें यौं भाख्यो तात। देकर सुनहु तुम मेरी बात॥
मकै चलहु हमारे साथ। ज्यो मन इछ्या आवै हाथ॥
जौ तुम करि हौ कह्यो हमारौ। तौ हांन करि है तुम्हारौ॥
मजनूं कौ संग लै कैं गयौ। जाइ मकौ मै गढौ भयौ॥
कह्यो पूत अब बिनती करहु। करता बिरहु रोग दौन हरहु॥

---

1. छंद नाम सवैया लिखा है, किन्तु सही छंद 'कवित्त' है। 2. इस चरण में वर्ण व मात्राएं अधिक हैं।

मजनूं विनती लाग्यो करनां। हौं आयौ करता लु वरना॥
(करहु) वीनती मेरी आंहि। बाढहु बहुता मंत की चाहि॥
जौलौ .... महा सरान नांहि घटाई। लैलै प्यार यै सौ मेरौ पैमुं बढाई॥
जौ नार जाउ पैमुं नां जाइ।[3]
जौलौं रह जगत सहनांनी। तौलौं मेरी कहै कहानी॥
पिता सुनहं बहुत दुख पायौ। मजनूं कौं लैकैं उठि धायौ॥

॥ दोहा॥

मानस ह्वै कीनौं कहा, जप तप संजम नाहिं।
जे जन तीरथ जात है, क्यों वे भये तिन छांहिं॥

॥ सवैया॥[1]

मजनूं मका मैं जाइ बिनती को बिललाइ, लैलै तेजु मेरी पीति कबहू न घटाइये॥
दैजा तसि कैसी नांई दिन-दिन कला चढ़ै, जैसैं बलि जाउं मेरी प्रीतहिं बढ़ाईये॥
नेह की हुतासन मैं जरत है देह मेरी, पल पल माहि तातें अधिक जराइये॥
अपनौ धरम नेम मै तौ करि जांनत पेंम, जौहौं मरि जाउं तौऊ मेरौ पेमु गाइये॥

॥ लैलै बखान॥ चौपई॥ २१॥

अब लैलै कौ करौं बखांन। ज्यों ग्रंथ न देख्यो रहे जांन॥
है लैलै के कटंब अपार। रहिबौ सबकौ नजद पहार॥
लघी उनकैं अमित अनंत। ऐसौ और नाहिं धनवंत॥
लैलै की छबित[2] कही न जाइ। जौ कहिये तौ पार न आइ॥
लैलै छबि को कहा बखानै। मजनूं होइ भेद सौ जांनै॥
केते सिंध नैंन म्रिग मारो। लट जंजीर कितेगहि डारो॥
द्रिग म्रिग जोरे राती डोर। स्त्रिंग भौंह चंचल चितचोर॥
नागपास अलिकांवर आहि। जो देखे पासत है ताहि॥
कूप चिबक ले जूलट आहि। जो परि है गहि काढैं ताहि॥
मजनूं डस्यो सर्प अलिकांवर। कै म्रिग ज्यों फांध्यो बधि बाबर॥

---

1. प्रति में छंद नाम सवैया है, जबकि छंद नाम 'कवित्त' होना चाहिये।
2. 'छबत' शबद में 'त' शब्द अनावश्यक है।
3. इस चरण के बाद एक चरण नहीं है।

॥ दोहा॥

दर्पन मैं जब देखि है, लैलै अपनी जोत।
दर्पन लैलै होत है, लैलै मजनूं होत॥

॥ लैलै बिरहु॥ चौपई॥ २२॥

जब की पीति आइ घट भई। तबतें और बर्न ह्वै गई॥
दीपग ज्यों सगरी निस जरै॥ बिन कर ज्यौं दिन कौं तप करै॥
दीपग नाईं जीव चत आहि। भीतर तेंतन नहि है आहि॥
लैलै घर चलिंग विहोई। मजनूं आनि दिखावै कोई॥
कौंन बैंन जिंह दरस निहारौं। आपुन सौ उहि छिन पर चारौ॥
सबल चैठी न्यारी होइ। कर दर्पनुं लै तब ह्वै दोइ॥
कै तिय कैं संग रहि है छाहिं। वहु पुनि कछु बोलत है नाहिं॥
सीस धुनै लैलै दुख पावै। तब छहिंया हूंसीस डुरावै॥
लैलै करत पवन सौं पात। मजनूं पास जाहु तुम बात॥
मो बद लै मजनूं पग गहौ। बहुर मोहि दुख बतियां कहो॥
मैरो दुख पर छंहियां जोवत। जब हौं रोऊ तब व हु रोवत॥
कै मेरौ दुख जानत तारो। रोवत मैं सब रैंन निहारो॥

॥ सवैया॥ २२॥[1]

चढ़ि-चढ़ि ऊंचै धांम बैठति है लैलै बांम, जिन कहूं मजनूं परत डिठ आइकैं॥
जैसैं घर पर चढ़ि चंद कौं निहारत हैं, ताकत पहार वोर तैसै चित चाइकौ॥
हैज ससि कैसी नांई छीन भयौ डोलत है, सखिन सौ कहै हा हां देहुरी दिखाई कै॥
दीठ जौं न परै तौ सकारैं हूं उपास करौ, ईद चंदनाईं सुख पाई येरी पाइकैं॥

॥ कवित्त॥

बावरैरी मेरौ तो सयान हरि लीयौ है।
जेतौ हौं दुराव पीति दुरति न काहू रीति, भई भसमीत चित चेटक सौं दीयौ है॥
कांहू की रही न कानि रोइ बेकी भई बानि, कहा चित चेटक सौ चीयौ है॥[2]
छीन भयौ जैसौ बार देखौं तब आवै प्यार, जानौ सिर राखौं मांती पैमु मद पीयौ है॥

1. प्रति में छंद नाम 'सवैया' है, किन्तु वास्तविक 'कवित्त' छंद है। 2. इस चरण में वर्ण कम हैं।

लैलै कहैत मजनूं कौं देखत मिट्यो है ग्यांन॥
लैलै कहै सखिन सौ लैलै मजनूं कौ नावं भई हो सखीरी हौं तौ.....र की बावरी॥
घर-घर घैरौ होई नीकैं न कहै कोई, जहां मिलै दोइ तहां मेरौ ईच बावरी॥
जित तित हांसी होत लाजत हमारौ गोत, द्रुजा के पूरे परे पायौ बड़ौ दावरी॥
पैहौं कहा करौं मेरी सुधि बुधि बगई, अैसौ वाकै पैमु कौ लयो है उरघावरी॥

॥ दोऊ बैतौ लिखै पत्र रौ॥ चौपई॥ २२॥

लैलै लिखि-लिखि बैतें डारै। लै उचाइ मग मैं जु निहारै॥
जब काहूं बलक कर आवै। मजनूं कौ तब जाइ पढावै॥
मजनूं लैलै अछिर[1] निहार। नैंननि तें डारै जलधार॥
वामैं समझैं लैलै प्यार। जीवत डोलै इहीं अधार॥
मजनूं पुनि लैलै लिखि नेसत। प्रगटाव्रतु है अपनौ हेत॥
बालक लैलै पैं धावत[4]। लैलै लैलै पछि सुख पावत॥
नई बैत[2] जोरत हैं दोइ। प्रगठावै सौ चेत मैं होइ॥
दुहूंवनि कौ बीतै दिन रात। अपनौं अपनौं दुर प्रगटात॥
बात करैं नित बै तन मांहिं। भेद और को जांन न पाहिं॥
आधौ मिलिबौ पाती कहियत। पैं पूरौ हीं मिलि जाबे लहियत॥

॥ दोहा॥

पाती पूरौ मिलिन है, अपकर लिखत जुपार।
पानही सौ जांन कहि, भरियतु है अंकवार॥[3]

॥ चौपई॥ २४॥

अंत सुनी लैलै कैंतात। ये बैतनि मैं करि हैं बात॥
तबतें बहुत करी रखवारी। पाती यौ लिखि जात न डारी॥
दुख मैं दुख मजनूं कौं दीन। कैसर बरन बार सौ छींन॥
गावत रोवत फिरै पहार। जाहि लहै लैलै दीदार॥
सबै कहैं मजनूं बौरांनौं। मनुष नही पसु पंछी मानौं॥
सुंनि सुंनि पिता बहुत दुख पावै। मजनूं सौं कछुं नाहि बसाबै॥

---

1. अछिर= एकटक 2. बैत= बातें-चर्चायें। 3. अंकवार= गोद में। 4. इस चरण में एक वर्ण व मात्रा कम है।

खोटौ आढ कहातौ कीजै। दोस पारखी कैसै दीजै॥
मजनूं पिता यहै जिय आयौ। सगरौ अपनौं कुटंब बुलायौ॥
मैं बहु सिख मजनूं कौं दीनीं। पैंडंन येकै कांननि कीनीं॥
लैलै लैलै हीं मुख बोलै। गरी गरी बौरानौं डोलै॥
हांसी भई सर्ब जग मांहि। मोकौं जीवत जांन हुं नाहिं॥
सब मिलियहु आंनहु मन आंहि। लैलै पिता पास हम जांहि॥
जौ लैलै कौ देइ बिवाहि। तौ पूजै सब मन की चाहि॥
जौ लैलै कौं नांहिन देत। मजनूं मरि है लैलै हेत॥

॥ दोहा॥

जो लैलै पाई नहीं, ज्यो न रहै तन ठांव।
मजनूं निहचैं मरत है, लैलै लैलै नांव॥

॥ मजनूं कौ पिता लैलै मांगिबे कौं गयौ साकनं[3] भयौ॥ चौपई॥ २५॥

सब मिलि कह्यो गहर[1] जिन लावहु। भाग होइ तौ लैलै पावहु॥
मजनूं पिता कुटंब लै संग। गये नजद गिर भनैहिं उमंग॥
लैलै पिता तबहि सुनि पायौ। काहूं काज आंभरी आयौ॥
बन्दत बड़े मानस ये आहि। वैसौ हैं आये करि चाहि॥
बहु आदुर सौं घर लै गये। बिधि बिधि भोजन आनें नये॥
भोजन जेयौ धोये हाथ। बात करैं बैठे सब साध॥
लैलै पिता कह्यौ तब अैसैं। आंवन भयौ तुम्हारौ कैसैं॥
तब बोल्यो मजनूं कौ तात। प्रगट करी जुही मंनं बात॥[1]
लैलै मजनूं ब्याह रचावौ। हंम तुम हित मैं हेत बढ़ावौ॥
घोरा ऊंट और बहु दर्बा। जो मागैहु सो दैही सर्बा॥
मांगहु जो मन इछ्या आहि। पैं अब गहरन[2] लाबहु व्याहि॥
तुमतें छपो न गोत हमांरो। हमतें छप्यो न गोत तिहारौ॥
लैलै पिता सुनीं यह बात। अैसैं ऊतर दयौ रिसात॥
बहुर बात अैसी जिन कहौ। काहे हमैं अगिन मैं दहौ॥
जौ तुम नीके उतिम जात। तौऊ अैसी कहौ न बात॥

---

1. इस चरण में एक वर्ण कम है। 2. गहर= देरी। 3. झगड़ा

जौ कंचन की होत कटारी। काहू अपनैं पेट न मारी॥
फूट्यो मोती काज न आवै। हार माहिं कोऊ न बनावै॥
काहे कौं कोई ब्रिषु खाई। काज पराये को मरि जाइ॥
पुत्र तिहारौ बौरा भयौ। यहु आपुन हूतें उठ गयौ॥
बालक तासौं खेलत डोलैं। बौरा बौरा कहि कहि बोलै॥
फाटे बसतर आंन बिभूत। पाहन परत फिरत ज्यों भूत॥
मजनूं पिता कह्यो सुनि बात। बाकौं बौरा कह्यो न जात॥
सुन पेम लाग्यो उहिं प्यारौ। सो पीये डोरत मति वारौ॥
जब वहु मन इंछा पैहौ। वावरपनौं सबै मिटि जैहै॥
मजनूं कौ हम लै है हेरा। तुमनेंककरि देखहु हेरा॥
जौ वहु बातै करै सयांनी। तौ तुंम कहि न आनाकानी॥
मजनूं कौं मांनस दौरायौ। बन मैं गावतु मागतु पायौ॥
भलैं न्हवाइ सिंगार करायौ। तब मजनूं कौ लै बहु पायौ॥
कुटंब देखि कैं सनमुख धायौ। सबतें ऊपर आंनि बिठायौ॥
मिंत अवास जबहि इन तक्यो। पैमु सुरा मैं बहुतैं छक्यौ॥
औंचका लैलै त्वांन।[2] मजनूं भूल्यो सकल सयांन॥
दौर दौर पाइन पर्‌यो। पाइ चूंम फिरि आंको भरयौ॥
तैंरै पाइन कै बलि जैहौ। मिंतगरी नित तोकौं पैहौ॥
तू मेंरै प्रीतम कौ स्वांन।[3] रीझि भयौ हौं तेरौ स्वांन॥

॥ सवैया ॥[1] २५ ॥

लैलै कौ तक्यो है स्वांन नैनु म रह्यो सयांन, मजनूं अग्यांने होइ दौरि पाइ रह्यो है॥
बहुर्‌यो भरयो है अंका काहूकी न कछु संक, चूंमि कै चरन वाकौ सीस आनि धर्‌यो है॥
फेर-फेर कहैं बेर-बेर धन भाग तेरे, लैलै दरबार पायौ कौंन पुंन कर्‌यो है॥
हा हा मोहिं पकरि अहेरौ करि लैलै तूं जाहि, वाकै ढिग जिन मेरौ प्रांन-प्रांन हर्‌यो है॥

॥ चौपई ॥ २६ ॥

देखि हर्‌यो लैलै कौ तात। अैसिय होत सयांनी बात॥
अपनैं पसु कौं लैकैं जाहु। आये करन कौंन कौ ब्याहु॥

1. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है।
2. इस चरण में कुछ वर्ण कम हैं। 3. स्वांन=स्वामी, कुत्ता।

जौ बहुरौं यहु बात चलाई। तौ हम तुम मै होइ लराई॥
मजनूं पिता अनंत लजायौ। ह्वै निरासं तब धर उठि आयौ॥
मजनूं सौं सिख बचन बखानें। सभा माहि तैं पूत लजानें॥
मजनूं कहै सुंनहूं हो तात। पैंमहिं लाजहिं बनैं न बात॥
आयौ स्वांन तुम्हारी डीग। मै तौं वामै देख्यो ईठ॥
जिंह उरबसी मिंत की जोत। ताकौं सब कछु दर्पन होत॥

॥ दोहा॥

कहत जांन जाकैं रम्यो, रोम रोम मै ईग।
जित जित नैंन पसाहि है, तित तित आवै डीठ॥

॥ सवैया॥ २६ ॥[1]

मजनूं मगन अैसो नेह की लगन कीनौं जोई देखै ताकौं लैलै दर्पन कैं जानि है॥
प्यारौ बनै द्रिग माहिं और कछु सूझै नांहि, परछांहिहूं कौ करि प्रीतम बखांनिहौं॥
देखै जल गिरवांन घर पशु पंछी गन, सबन मैं झांई क्रांति ईठ पहिचानी है॥
चित्र मैं बिचत्र चित्र कारही कौं चाहतु है, मित्र बिन आंनि नांहि यहै जिय आंनि है॥ २७॥

॥ कवित्त॥

रौम रौम मिंत जैसै .... सन समौ[2]
पुतरी निवास करि पलकैं कपाय बरि, बरूनि रजरि बैठ्यो द्रिगु रस मैं॥
रसना रसत हीय बसतन निकसत, मन की मुकर दरसत हूं दरस मैं॥
कहै कबि जांन अैसौ भलौ है उज्यारौ प्रांन, सूझत न आंनि बिन प्यारै दिस दिस मैं॥

॥ दूध घ्रित बास किधौं चकमक मैं हुतास॥ सवैया॥ २८॥

पैंमु की है गति दर्पन कैसी।
प्रेम ही मधि सबै कछू सूझत प्रांन पियारै की है छबि जैसी।
पैंमु उदोत रहै निस बासुर जोत नहीं रबि चंद मैं अैसी॥
पैमु समुद्र भरयो मुकता संख पैं लहियै मन सा व्है तैसी॥

---

1. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है। 2. इस चरण में वर्ण कम हैं।

॥ है परियार मनौं तन मांनस॥ मजनूं बंचन॥ चौपई॥ २९॥

मजनूं कहैया सुनहूं हो तात। मेरी जिनहं चलावहु बात॥
केतेई तुम करहु उपाइ। पैंम रोग केहूं नहीं जाइ॥
अंजन कीजै फूटैं नैंन। कहा बहुर व्है है है वैन॥
ऐसौ कौंन उपाव उपावै। जातें फिर मिर्तक ज्यों पावै॥
यों कहि मजनूं बनकौं भाग्यो। पिता बापरौ रोवंन लाग्यौ॥
बन रोवै को संगन साथ। सिर कूटन कौ हैं द्वै हाथ॥
कै रोवंन कौं है ह्वै नैंन। उर सीतरकरि है दिन रैंन॥
नैननिं अंसुवा कंटिक पाइ। तन संग छहियां मुख मैं आहि॥

॥ दोहा॥

जबहि अंध्यारी रैन मैं, मजनूं करि व्है हाइ।
मुखतें ज्वाला प्रगटै, उजियारौ व्है जाइ॥

॥ सवैया॥ २९॥

रैंन दिन येक छिंन नाहि गहि रात केहूं बावरौ भयौई नित डोलत है बन-बन॥
ब्रिछन के बामैं पात जानैं मोसौं करैं बात, दिनरात .... लात बाढी चिंत तन मन॥
पंछिन सौं कहै बैंन पीवो जल मैरै नैंन, चैंन मोती चाहिये तौलेहु आसूं गंनगंन॥
रुखनिं चढत धाइ लैलै कहूं डिठ आइ भखै बाइ पीवै द्रिग जल लयरै अंनसंन॥

॥ पिता मजनूं सौं बात करुतु है॥ चौपई॥ २८॥

मजनूं पीति आग पर जरी। आंच डिस्ट सब जग की परी॥
कीनौं लैंलै कुटंब निखार। मजनू कौ हम डारहिं मार॥
बिन लैलै मुख बात खोलै। लै लै नांव बिगोवत डोलौ॥
सुंनी बात यहु मजनूं तात। लैलै कुटंब करी है घात॥
मजनूं पिता लोग लै धावै। सोधि रह्यो पै कहूंन पावै॥
मजनूं कुटंब बहुत दुख पायौ। रोवत-रोवत फिर घर आयौ॥
मजनूं दुख मैं बौरा भयौ। नांत जांत कहुवा उडि गयौ॥
पर्‌यो जाइ इक पट पर मांहि। रोवत मजनूं कछु नांहि॥[1]
येक मनुष उत निकर्‌यो जाइ। बनी साद तिंह जात कहाई॥

---

1. इस चरण में वर्ण और मात्राएँ कम हैं।

मजनूं परयो धूरि डिठु आयौ। निकट आइगहि हाथ उचायौ॥
मजनूं कैं संग कोऊ नांहि। दुबरी सी ढिगु देखी छांही॥
मजनूं सौं की बात अनेक। पैं उन ऊतर दयौ न येक॥
तबहि चल्यो उठि होइ निरास। मजनूं लोगनि आयौ पास॥
उनसौ मजनूं भेदु बतायौ। सुनत पिता मजनूं उठि धायौ॥
आगैं गावत रोवत पायौ। पकर पिता तब गरैं लगायौ॥
बहुत बार पाछैं सुधि आइ। मजनूं परयो पिता कैं पाइ॥
हा-हा पिता न तुम दुख पाव हु। सोधन मोहि बहुरि जिनं आवहु॥
कह्यो नांहि मांनत हौं तेरौ। कारौ दरस हीन है मेरौ॥
हौं तुमतें अब न्यारौ भयौ। तुमतें कहा आपतें गयौ॥
जेती सीख पिता उहिं दीनी। मजनूं येकै कांनन कीनी॥

॥ दोहा॥

सोई मानत सीख को, जिंहिं हिरदैं बुधि होइ।
कह्यो न काहूं समझि है, रातें माते दोइ॥

॥ सवैया॥[1] ३०॥

मजनूं पिता सौं कहै मोकौं जिन सीख देहु, बिरहै बिवोगा पैमु हौं तौ बाठ लयौ हूं॥
तुम कहौ मेरौ पैमु बिरहु न छाड़ैं घेरौ प्रथम हौं तेरौ अैषें अब याकौ भयौ हूं॥
इनते छिडाइ मोहि लेहु अपनांइ तुम, चुपके व्है रह्यो जौ पैं इनही कौं दयौ हूं॥
तुम जु कहत मोसौं हमतें गयौं तू पूत, तुमतें कहा जु हौं तौ आपुन तें गयौ हूं॥

॥ दोहा॥

मजनूं कौं लैकैं पिता, घर में बैठ्यो जाइ।
येक सीख मानीं नहीं, बहुरि गयौ बनधाइ॥

॥ चौपई॥ २९॥

सिला येक लैलै की पौर। निस लेटत मजनूं उहि ठौर॥
बैठ पढ़त रोवत सब रैंन। येक पलक ना पावत चैन॥

1. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जवकि वास्तव में 'कवित्त' है।

भोर भये बन मैं उठि जात। रोवत गावत द्रुबल गात॥
मिले येक दिंन कितेक निरदौ। जिनकै रंचक पीर न हिरदै॥
लकरी बंन तें बहुत मंगाई। वा सिल ऊपर आनि जराई॥
अंगिन दूर की जब निस आई। भई सिलाकौं अधिक तताई॥
निकट न जाइ सकत को ताहि। मनहु नरक कौ पाहन आहि॥
तिहिं बार मजनूं उत आयौ। लेट्यौ सिलां नं कछु लखायौ॥
जर्‌यो बहुत ही जरि बरि गयौ। नांक न मुर्‌यो अधीर नं भयौ॥
काहू कह्यो जर्‌यो कछु तेरौं। मिंत काज जरि है मन मेरो॥
मजनूं पिता कह्यो कहूं जाइ। डार्‌यो तेरौ पूत जराइ॥
आइ पिता मजनूं लै गयौ। औषद करी भलौ तब भयौ॥

॥ दोहा॥

मातौ सुरा सनेह मैं, जरतन मोर्‌यो अंग।
सिलामनो .... दारग[2] भई, मजनूं भयौ पतंग॥

॥ चौपई॥ ३०॥

इक दिन मजनूं उबटन जाइ। बैठयो है लै लै कै चाइ॥[1]
मूंदि रखे द्रिग धरि कैं ध्यान। मिलन आस उपज्यो सुख प्रांन॥
ताही मैं लै लै उत आई। करता अैसी जुगत मिलाई॥
मजनूं निकट भई जब खरी। देखे अरन मुख अति रिस भरी॥
मो बिनु अरुन बरुन यहु रहत। बिरही भूलि याहि जग कहत।
कह्‌यो मजनूं वां खोलहु नैंन। खोल दये सुनि लै लै बैंन॥
मजनूं लै लै रूप निहार। पीरौ बरन भयौ तिंहवार॥
लै · लै कहयो कौंन यहु रीति। बिछुरे अरुन मिलै मुखपीति॥
बिछुरें हुती मिलन की आस। मिलें भयौ बिछुरन कौ आस॥

॥ दोहा॥

मिले मिंत बिरहा मिटै, तौ बिछुरन दुख होइ।
कहत जान या जगत मैं, बिरही सुखि तन कोइ॥

---

1. चाइ= इच्छा। 2. दीपक।

॥ चौपई ॥ ३१ ॥

इक दिनं मजमूं लै लै चाइ। निकस्यो वाकैं घर ढिगु आई॥
पकर मंगाइ पोछायौ अंग। रकत चल्यो फीकैं से रंग॥
कह्यो अजूं लौं काचौ आहि। मोकौं नांही याकी चाहि॥
छाडि दयौ रोवत उठि गयौ। इक दिन फिरउत आंवन भयौ॥
बहुरौ वाकौ अंग पछायौ। रक्तन रहयो नीर ही आयौ॥
उतते तब निकरि कै दयौ। अजहू पूरन पैमुं न भयौ॥
इक दिन बहुरयों निकस्यो आइ। लै लै देख्यो अंगपछाइ॥
चोट लगत पछ नैंकी गात। यहै सब्द तातें प्रगटात॥
हौं लै लै लै लै हौं आहि। मुहि मजनूं करि जानहु काहि॥
तब लै लै मन उपज्यो प्यार। बिदा कर्‌यो धीरज दै यार॥

॥ दोहा॥

बिरहानल जेतन जरे, कछु न रह्यो ता मांहि।
ठौर ठौर जौ चीरिये, तौरत निकसत नांहि॥

॥ चौपई ॥ ३२ ॥

काहूं लै लै सौं यौं कह्यो। तो मैं रूप अधिक नां लह्यो॥
तेरौ सोर परयो जग मांहि। कौंन बात पर समझे नाहिं॥
लै लै कह्यो न बुधि तुम मांही। इन बातनि मैं समुझत नाहीं॥
पूछहु मजनूं कौ तुम जाइ। जैसौ मो मैं रूप सुभाइ॥

॥ दोहा॥

जैसी छबि की ऋोनि ह्वै, भांपते तन माहिं।[1]
बिरही बिनु कवि जांन कहि, काहू सुझत नांहि॥

॥ इबन सलाम अरबी लै लै कौ आसक भयौ॥ चौपई॥ ३३ ॥

लैलै रूप फूल की बास। सगरै जग मैं कर्‌यो प्रकास॥
मुख मुख मैं लै लै छबि बात। जो सुनि है तिंहं अधिक सुहात॥

1. इस चरण में एक वर्ण या मात्रा कम है।

इक अरबी धनवंत अभिराम। नाव ताहि कौ इबनसलाम॥
रूप कंत धनवंत सुजात। मग्न भयौ सुनि लै लै बात॥
बौरा भयौ सुनत ही लै लै। रोयौ करत नांव नित लै लै॥
चढि आयौ लै लै कै गांव। छलि करि उतरि रह्यो इक ठांव॥
चित मैं यहै रहत है चिंत। काहू मिस देखौ मुख मिंत॥
लै लै सखी यैक दिन आई। बाग सैल की बात चलाई॥
रित बसंत बिरु वातर गहरे। सुभग बौर आभूषण पहरे॥
चलहु जाइ मन कौं विरमांवहि। फूल देखि जिन कछु सुख पांवहिं॥
सखी गई लै लै लै बाग। देखहि फूल बढै अनुराग॥
लै लै देखे फूले फूल। व्याकुल भई उठी उर सूल॥

॥ लै सवैया॥ ३१ ॥[1]

लै लै गई बाग जिंन व्है हैं अनुराग ब्रिछ, भये नाग घाइ मनौ खातु हैं।
बाइंकी नुराई डारी डुरैं सु पवन भखैं, लहि लहि देखि रौम रौम लहरातु हैं॥
पुहप की बास तन पैठत है बान नाईं, परै मुरछाई पाइन....ठहरातु है[3]
मजनूं दरस बिंन पावै दुख छिन-छिन, भई चलि चित प्रांन बिच लेई जातु हैं॥ ३२॥

॥ कवित्त॥

मिंत बिनु अंतक बसंत लै लै भयौ है॥
राते-राते केसूं ह्वै ह्वै केहर वै फारत हैं, कारे आबठजदंत बौर दुख दयौ है॥
श्रीफल के फल गोला नाल के प्रबल मांनौ, बौर सिरी बौरी सिरी करि अंक तयौ है॥
अलि केतुकी कौ भेद काटै कर्‌ये उर छंद, इनकौ मिलाप देखि भयौ दुख नयौ है॥
मजनूं न आवै डीठि बढी है अनंत चिंत, लै लै कौ मनोरथ॥[2]

॥ चौपई॥ ३४॥

लै लै बिरहु-हुतासन जरि है। मन ही मन यौं बातैं करि हैं॥
हौं आई हौं उपबन माही। तूं मजनूं कत आयौ नाहीं॥
देखत तेरौ दरस अघाई। जिन मन तें कछु बिरहु घटाइ॥
तुम दिठ आव हुतौ यह बाग। नांतर फूल जरत मंनौ आग॥

---

1. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है। 2. अपूर्ण चरण
3. इस चरण में दो वर्ण कम हैं।

अैसै हीयहु मन मैं कहत। अपनौ तंन बिरहानल दहत॥
येक बटाऊ निकस्यौ आइ। मजनूं बैतें पढतौ जाइ॥
मजनूं बैतन मैं दुख गयौ। सबै बटाऊ कहि प्रगटायौ॥
मजनूं बूढत दुख-दधि मांहि। लै लै आइन पकरै बाहिं॥
मजनूं सदा करेज जरावै। लैलै कबहु लीन[1] न आवै॥
मजनूं रोवत उर दुख बसत। लै लै फिरत बाग मैं हसत॥
लै लै सुंनत परी घर माहिं। सुधि बुधि कछु रही घट नाहिं॥
सखियन कर गहि पकरि उठाई। पूछि रही कछु नांहि लखाई॥

॥ सवैया॥ ३३॥

प्रीत की रीति कही नहीं आवै।
बीतत ज्यों तन जांनत सो मन आपहीं आप दुर्‌यो दुख पावै॥
दीप बरै ज्यों पनूंस कै भीतर त्यौं उर पैंमु की आग जरावै॥
लैलै कैं संग सखी छंहियां सम पैं कछु बोलिकैं नाहिं नावै॥
चोरी की चारी करैं अंसुवा मुख इबन सलाम कौं लैलै मांगी॥[2]

॥ चौपई॥ ३५॥

इबनसलाम सुंनी यह बात। गयौ बाग मैं अंग नमात॥
उतहि कहूं लै लै डिठ परी। पीति अगिन बहुतैं पर जरी॥
चाहत गरैं लागि हौं नार। काहू चंद भर्‌यो अंक वार॥
पाये इबनसलाम बसीठ। लै लै पिता पास ह्वै ढीठ॥
हौं मरि हौं कै लैलै देहु। जो तुमू भावत है सो लेहु॥
लछी जो मांगत सो देउं। बचन तिहारौ सिर धर लेउ॥
सुनी बात लैलै कैं तात। फूल्यो बहुत न अंग समात॥
यहै कह्यो मैं लैलै दींनी। बात तुम्हारी सिर धरि लींनीं॥
बचन तिहारौ डार्‌यो जातं न। तुमतें उत्तिम कोऊ जातन॥
निहचैं साक कर्‌यो हम तुम सौं। पैं इक बात करहु तुम हमसौं॥
लै लै बहुत भई है छींन। केतक दिन छाडहु पर बींन॥
जबा कछु मौंटी ह्वै है बाल। तबहिं ब्याह करि हैं ततकाल॥

1. लीन= निकट। 2. इस चरण के अन्त में तुकान्त वर्ण नहीं है।

॥ दोहा॥

लैलै आपहिं मांगि कैं, हस्यौ इबनसलाम।
केतक दिन की अवधि करि, आयौ अपनै धांम॥

॥ नौफल भूप मजनूं की दिलास करतु है॥ चौपई॥ ३६॥

मजनूं बंन-बंन रोवत डोलै। लैलै-लैलै ही मुख बोलै॥
निस दिन डोलै नजद पहार। रोबत झरने बढे अपार॥
जो मजनूं कौं गावत सुनैं। बसतर झारै सीस हिं धुनैं॥
येक भूप आयौ उठि ठांव। नौ फल कहियत ताकौ नाव॥
उतहिं अहेरे कौं वहु आयौ। मजनूं परयो धूरि मैं पायौ॥
देखत लोगन सौ यौं कहयो। यहु को है मैं नाहिनं लह्यो॥
नौफल सेवक पूछन आयो। पूछि भेद तब जाइ जंनायो॥
नौ फल सुनत उतरि असु परयौ। मजनूं आइ अंक मैं भर्‌यो॥
बिरह बियाप्यौ नौफल गात। पूछत है मजनूं सौं बात॥
मजनूं बात कही समझाइ। नौफरसीरौ ह्वै ह्वै जाइ॥
सुनि कै बात कहयो सुनि मिंत। अब चिंत मैं जिन राखहु चिंत॥
हौं लैलै तुहि देउ विवाहि। तेंरै चिंत की पूजी चाहि॥
पहलै उनकौ दमका दैहौ। लो भलाइ कैं लैलै लैहौ।
हम काऊ पर करहिं न प्यार। रोइ-रोइ करि हौं मनुहार॥
जोवैं नाम नहिं मनुहार। तौ उन पर बांधौ करवार॥
उनहि मारि लै लै लै आंऊ। निहचै जांनी तोहि मिलाऊं॥
लै लै पंछी ह्वै उडि जाइ। तौऊ तोकु देऊं मिलाइ॥
मजनूं उठिकै करये जुहार। बहुर यों अैसौ कर्‌यो बिचार॥
बहुत जतन हौं करि-करि हार्‌यों। मन मोहन तौऊ न निहारयो॥
के हूं बुझैं न बिरहा आग। हौं जानत हौं अपने भाग॥
तुम आपहि काहे दुख देहु। मेरौ भूल न मंजिन लेहु॥
नौफल कह्यो धरि धरि जीय कौं। हौं तुहि मिलऊ लैलै तियकौ॥
बावरपनौं छाडि तूं देहु। द्वै दिन राखि छपायौ नेहु॥
जब तुहि देखौं भयौ संयानौं। तब उनकौं ना रहौ बहानौ॥
मजनूं बसतर भले पिन्हाये। भोजन अनगन भांति जिवाये।
केतक दिन याही बिधि राख्यो। सुख की बतियनि अति अभिलाख्यौ॥

॥ दोहा॥

निस बासुर मजनूं रहै, सुखसौं नौफल संग।
जांनत लै लै पाइहौं, हिरदै बढी उमंग॥

॥ चौपई॥ ३७॥

नौफल ब्याह करन की बात। लिख पठई लैलै कैं तात॥
लैलै मजनूं देहु बिवाहि। ज्यों पूजै हम मन की चाहि॥
दमका जो भावै सो लेहु। जैसे कैसे लैलै देहु॥
जौ तुम लैलै नाहिन देत। तौ निह चै हौं जुध कर लेत॥
मैं मजनूं सौं दीनी वांहि। लैलै के हूं छाडौं, नांहि॥
पाती पढि लैलै कौ तात। बिषधर की नाईं बल खात॥
तुम दल ऊपर करहु न गर्बा। कहा दिखावत हमको दर्बां॥
लैलै का तुम लेहु न नाम। जौ ना रहौ रहु संग्राम॥

॥ दोहा॥

जरिबे कौ डरौ नासंती[1], चींय चढै संग मिंत॥
जिंह मरि बैकौ डरू नहीं, लरि बेकी का चिंत॥

॥ चौपई॥ ३८॥

नौफल लरन चाल्यौ दल साज। लैलै कौं लैबे कैं काज॥
दहूं वोर बाजे नींसांन। भादौं धन कैसी घहरान॥
दुहूं वोर छूटहि बंदूक। लागहिं मारहिं मनुष अचूका॥
लागिं बिंदूक पार व्है गात। पावै रंध निकसि जिय जात।
दुहूं वोर तें छूटहिं बांन। पैंठि अंग नि कसै लै प्रांन॥
बैठ्यो काल धनुष मैं आइ। बान संग पहुंचत तन जाइ॥
दहूं वोर कर वार कटारी। करैं एक तें दोइ दुधारी॥
तन कौं फारत हैं करवार। सींवत बान न लागत बार॥
रही धूरि नभि घर बिच छाई। नीकैं कछू डिस्ट नहीं आई।
सुभट नांस धरनी पर डोलै। मार मार घर बिन मुख बोलै॥
अरुन धरा रत यहु छबि पाई। मांनहु नद सरसती आई॥

---

1. इस चरण में मात्रा अधिक हैं।

मजनूं नौफल कैं हौ संग। करत कैंटिया कैसैं रंग॥
लैलै के इन लोगनि मारहिं। सीस काट धरनी पर डारहि॥
तब मजनूं कौं आनदु होत। अरुन बरन प्रगटै मुख जोत॥
जब लैलै के मरहैं लोग। तब मजनूं कौं उपजै सोग॥
यहै कहै करतार मुंसाई। मिंत वोर के कटक जिताई॥
नौफल लोग तकी यहु बात। तब मजनूं सों कह्यो रिसात।
हिम जियरा दैहैं तुव काज। तो कौं नाहिन आवत लाज॥
उनकी जैत हमारी हार। तूं मांगत यहु कौंन बिचार॥
मजनूं कह्यो सुंनहु सत बात। लैलै पर जारौ जिय गात॥
कहा करौं हौं जीय तिहारौ। लैलै जियरौ आहि हमारौ॥
जीव और जेते जग मांहि। अपनै जीव बराबर नाहीं॥
लैलै सौं लरिहो मो काज। हौ मरिहौ आवत ओ लाज॥
भारी भयौ जुध घमसांन। पर्‌यो दहूंघां की चकधान॥
सनमुख आवध केते खाये। भूखे सुभट सुनांहि अघाये॥
नौपल निकस्यो आप रिसाई। केते जोधा दये गिराइ॥
लरत लरत जब भैगई सांझ। जुगल कटक सोचे जिय मांझ॥
सब अपनैं-अपनै घर जाहु। भोर लरहु जौ लरन उमाहु॥
सबको अपने-अपने आये। भोर भये फिरि जुध मवाये।
राच्यो जुध आयौ ततकाल। जिय जो नार पाहंनौ काल॥
लैलै कौ दल लग्यो अपार। नौं फल सूझी अपनी हार॥
नौफल दीनौ पठय वसीठ। जुध करें ना रहै पटीठ॥
हौं अब तुम सौं करौ न रार॥ रोस छांडि उपजावहु प्यार॥
दमका[1] तोकौं देंउ अनंत। आप संम्मानं करौ धनवंत॥
जौ मन इंछ तिहारी होइ। तौ ये जरत सिरावहु दोई॥
यौं कहि नौफल डेरें आयौ। छल बर अपनौं जीव जिवायो॥
थोरे मांनस नौफल साथ। देख्यो कछु न आवै हाथ॥
नौ फल सौं मजनूं यौं कह्यो। सुरापन तेरौ सब लहयो॥
मोसौं भली भलाई कींनी। लैलै तैं नींकी लै दीनीं॥
मेरौ इनसौं बैर उपायौ। बहुर गरी इंह जात न आयौ॥
नौफल कह्यो नैंकु धर धीर। हौं हरि हौं सब तेरी पीर॥

---

1. दमका=धन, दीनार।

मांनस थोरे हे मो संग। लरें बात कछु होत न ढंग॥
अब हौं अनंगन कटक बुलाऊं। निहचै लैलै पकरि मिंगाऊं॥
पाती ताती तंत पठाई। अपनी सगरी सैंन बुलाई॥
आये दल बल अमित अपार। पाती पढन न लाई बार॥
कर दल बल नौफल चढि आयौ। लै लै पिता बहुत डरुपायौ॥
लैकैं कटक अपनौ आयौ। पैं मन डोलत है भरमायौ॥
नौफल दींनी अति रणभार। तबहिं चले लैलै दलहार॥

॥ दोहा॥

हाथ लैंन कौं नां रह्यो, बित द्रुजन घर मांहि॥
मूठी मैं बिंन आगुरी, कछू देखिये नांहि॥

॥ चौपई॥ ३९॥

लैलै पिता कुटंब संगलाइ। पर्यो आइ नौफल के पांइ॥
दंत तिनौ लैकै ये आये। नौफल देखत तबहिं लजाये॥
कह्यो दयो तुम कौं ज्यो दांन। नांहि बिछोरौ तनतें प्रांन॥
पैंलैलै बैगे लै आवहु। मजनूं से ती आंन मिलावहु॥
लैलै पिता कह्यो सुंनि स्वाम। ज्यो बलि देहिं तिहारै नाम॥
लैलै मजनूं कौं जिन देहु। पाप आप सिर पर मत लेहु॥
है बावरौ नया मैं ग्यानं। मानस ना है पसु उद्यांन॥
सेवक बहुत रावरै संग। औरहिं देत न मेरौं अंग॥
लैलै चेरी आहि तिहारी। अपनैं चेरै दै बलिहारी॥
मजनूं कौं हम देहि न केहूं। जौ मारहु तौ मारहु येहूं॥
लैलै सीस काटि दैं आंन। ज्यों भखि जांहि तिहारे स्वान॥
नौफल सेवक बोले अैसैं। लैलै मजनूं दीजै कैसैं॥
बहुतौ तेरौ द्रुजंन आहि। साजन कै. जिन जानहु वाहि॥
यहै कहत हाहा करतार। वै जीतैं नौफल जैहार॥
नौफल सुनि यहु बात रिसायौ। लैलै छाडि आप घर आयौ॥
मजनूं रोषत उतही छाड्यो। जीवत मनहुं घरा मैं गाम्यो॥
मजनूं रोवत बन मैं गयौ। दुख मैं फिर उपज्यो दुख नयौ॥

मजनूं कहै भाग मो गये। सोवत हे अब मिर्तक भये॥
प्यासैं कौं पानी पर लायौ। लग्यो न वोठंनि नैंन दिखायौ॥
पाग पंखारी आंनि दिखाई। पैं बपरी पागन नहीं पाई।
नौ फल घर जैकैं पछितायौ। मैं मजनूं सौं बुरौ कमायौ॥
बहुरौ सगरौ देस ढुंढायौ। पैं मजनूं कहुंवा नहीं पायौ॥

॥ दोहा॥

घर की कछु सोधी नहीं, जिंह घट उपजै हेत।
बिरहु फिरै दौरावतौ, कहुवां रहे नंन[1] देत॥

॥ चौपई॥ ४०॥

लै लै पिता कह्यो घर आई। हम लागे नौफल कैं पाइ॥
नौफल हम पर[2] बहुत दबायौ। मजनूं रंचक मुख न लगायौ॥
नौफल अैसी क्रिपा कीनी। लैलै लै हम ही कौं दींनी॥
लैलै सुनिकैं रोवंन लागी। कहत न मोसी कोइ अभागी॥
वैसैं ह्वै फिरि अैसैं भई। जानत मोसौं बिरच्चो दईं॥
बैर-बैर मैं उपज्यो नयौ। अब बहु इन गरियनि तें गयो॥
मजनूं आहि परत मांकांन। याही तें सुख पावत प्रांन॥
मैं जान्यो दल सुख कौं भयौ। कटक मार मोही कौं गयौ॥
ज्यों नारी की ठुन वनि चाहि। हरषत है जानै जलु आहि॥
घन बरसै ह्वै सीतर ताई। अब घटि है कछु नर्कत ताई॥
उनतें बरसैं बिर्छक नाग। वहै भई गति मेरैं भाग॥
लै लै रवै-रवै पीटी छाती। नखु चुभिरत चलि ह्वै रही राती॥[3]

॥ दोहा॥

लैलै रोवै रैंन दिन, लैलै मजनूं नाव।
मिंत कहू डिठ ना परत, ऊजर लागत़ गाँव॥

---

1. नंन शब्द में 'न' अनावश्यक है।
2. ''पर'' शब्द अनावश्यक है।
3. इसके अंतिम चरण में वर्ण और मात्राएँ अधिक हैं।

॥ चौपई ॥ ४१ ॥

मजनूं नैंहि रेन छुडायो .... ।[2]

मजनूं डोलै चढ्यो तुरंग। देखे बापर परे कुरंग॥
छाडन की मजनूं मन आई। लैलै द्रिग सहनांनी[3] पाई॥
ताही बीच बावरी आयौ। मिर्ग फंधे देखत हरषायो॥
मजनूं कह्यो छांडि इन देहि। इनकी हत्या कर हे लेहि॥
लैलैं कैसें नैंन दिखावत। इनकौं मारत लाज न आवत॥
कह्यो बावरी छांडे धर्म। कहा करौं पै मेरौ कर्म॥
मेरैं घर के भूखे आहि। म्रिग आइ मैं फांद्ये ताहि॥
कीजै धर्म राखि कैं कंया। छाडि सकत नाहीं करि दया॥
जौ उपज्यो है इनसौं नेंहु। लै छुडाइ मोकौं कछु देहु॥
मजनूं दीनौं उतरि तुरंग। वापैं लीने मोल कुरंग॥
उन चढ़ि घोरा घर कौं हांक्यौ। पाछैं कौं फिरि नैंकुन झांक्यो॥
मजनूं म्रिग द्रिग चूमे हित सौं। पाछै छाडि दये है हित सौं॥
दौरत म्रिग देखि ललिचायौ। द्रिग देखन कौं पाछैं छायौं॥
रोवत धावत डोलै बन मैं। लैलै बिना कछु नां मन मैं॥

॥ सवैया ॥[1]

मजनूं छिडाये म्रिग रीझि गयौ देखि द्रिग, इनमैं तौ लैलै सहंना न पाइयतु है॥
सुनि भाई बावरी हौं रावरी बलइया लेउ, अैसो छबिवंत पसु कैसे साइयतु है॥
बड़े-बड़े नैंन याके लैलै कैसे लौंनें अैंन, जांमैं र्मित झांई ताकैं बलि जाइयतु है॥
दीनौं है तुरंग और लींने हैं कुरंग मोल, सीख देत अैसै मूढ मैं आइयतु है॥

॥ चौपई ॥ ४२ ॥

मजनूं नैं साबर छिड़ाये

इक बन इक दिन मजनूं आये। साबर बावर[4] फांधे पाये॥
उन हूं के द्रिग मंन मैं भाये। निकट बावरी मजनूं आये॥
मजनूं बहुर दया पर आइ। म्रिगन ज्यों ये दयो छिडाई॥
बसतर आवध सब कछु दये। मजनूं साबर पाछैं भये॥

---

1. छंद नाम सवैया लिखा है किन्तु सही छंद ''कवित्त'' है। 2. इसमें एक चारण अप्राप्त है।
3. फूंकनी, फूंकनी बनाने वाली औरत। 4. शिकारी।

जौसावर लैलै पैं जै हौ। तौ भेरौ दुख उनहिं जितै हौ॥
मजनूं सुधि बुधि भूली गात। पसु पंछी सौंकरि है बात॥

॥ दोहा॥

पैंमु सुरा मैं मग्न ह्वै, तिहं सुधि रहै नं गात।
जो डितु आवै जान कहि, तासौं करि है बात॥

॥ चौपई॥ ४३॥

मजनूं बाइसौं बातैं करतु है
बनं बनं बनं[1] डोलत हारत नांहि। मजनूं काग तक्यो तर मांहि॥
लग्यो करन काग सौं बात। स्यांय करे कंत बसतर गात॥
तोकौं उपज्यो है दुख मोहि। कै कछु तेरौ ई दुख तोहि॥
काकैं बिरहु देह तैं जारी। कैला सम जुभई है कारी॥
तरवर मैं अैसी तुव जोति। सीसैंह हरत परी मनौ पोत॥
कै अैसौ लागत है भाई। दुस्यो संनीसर बुधि मैं आइ॥
कै मानौं सुरजतें डारी। रैंन सुकवि तखर मैं बारी॥
भया बाइस सुंनंह ूसंदेसौ। जाइ कहौ मो मिंत अंदेसौ॥
लैलै कौं समझावहु अैसों। तुम बिनु मजनूं जीवै कैसें॥
तुम अजहूं उहिं सुरत नलीना। मरि हैं भयौ देह तें छीनां।
जब बपरौ मजनूं मरि जाइ। तजहि कर[2] कौन उपाइ॥
फूटै नैंन रहै कछु जोतनं। तब अंजन ते तेक कौ होतंनं॥
जब तिन सूंकि टूरि हीं जांहि। बरसें मेहु हरे ह्वै ताहिं॥
बाइंस जब उततें उडि गयौ। तब मजनूं तकि चुपका भयौ॥

॥ दोहा॥

बांइस पयां लागि है ट्रिग लै जाहि पराइ।
ह हा करहु लै पावडै, जितहि धरत पिय पाइ॥ २॥
द्रिग पाती पीय पठयें हूं, बांइस कैकर चाहि।
सितकागर मस स्यांमता, डोरे ईगुर आहि॥ ३॥

1. एक शब्द अतिरिक्ति प्रतीत होता है।
2. यहां एक शब्द अप्राप्त है।
3. पक्षी विशेष

॥ सवैया ॥ ३४ ॥[1]

हा हा जाइ कहौ कहूं लैलै कौं जौ लहौ तुम, बाइंस सौं मजनूं संदेसौ अैसौ देतु है॥
जादिन कौ बिछुर्‍यो है बिसर्‍यो न येक पल, तूही-तूही जपै और नांव नाहीं लेतु है॥
तेरैं रंग रातौ तेरैं पैमुं मदमातौ डोलै, सबतैं भयौ है हांतौ[2] तोसौं बंध्यो हेतु है॥
बडौ चितकीनौ तुम दरसन दीनौ कभूं तेरोई कहावतजौ बवरौ अचेतु है॥

॥ पातसाहि मजनूं सौं कहतु है॥ सवैया॥ ३५ ॥

येक दिन पातिसाहि मजनूं बुलाइ कह्यो, लैलै तें सरूप नारि येक तोहि देतु है॥
मजनूं कहयौ जू मेरैं नैननि समाइ लैलै, और कौन ठौर है निबाहौं तासौं हेतु है॥
ठांव-ठांव डीठ हौं लगावत फिरौं धौं कैसैं, मानस कहावत हौं हौंतो नही प्रेतु हैं।
और दयौ चाहत तौ नैंन हूं ह्वै और दे हु, और द्रिग पाऊं तब और तिय लेतु हैं॥ ३६॥

॥ कवित्त॥

पाति साहि कह्यो मजनूं सौं कहारी भन्यो लैलै, वा मधितौ रूप कांति कछु नांहि पेखिये॥
बिरहु बिबोग ज्वाला जरि बरिकारी भई, गई सब छबि अब नीकें कैं परेखिये॥
फूल बास जाइ मुरझाइ तौन आइ अलि, वाकौं तजि मेरी सिख हीयें अवरेखिये॥
मजनूं कहयो जू लैलै गति देख्यो चाहतु, तौ नैकु पैठि मेरैं नैंननि मैं देखिये॥ ३७॥[3]

॥ कवित्त॥

लैलै मजनूं कौ चित्र चित्र्यो हौ चितैरैं, भीत, मग जात कहूं मजनूं की डिठु आयौ है॥
देखत रिसायौ यहु मनमैं भायौ भेद, धाइ आइ पाहुंन लै नीकें कैं बुडायौ है॥
अज हौं ये लोग मोहि मजनूं कैं जांनत हैं, लैलै भयौ आपहि लै लै मिलायौ है॥
नहिं जांनियत मैं तो काकौ अपराध कीनौं, लैलै तें निकार मोहि न्यारयो कैं दिखायौ है॥

॥ लै लै कौ ब्याह होत है॥ चौपई॥ ४४॥

लैलै अवध ब्याह की भई। तब दूलहु कौं पाती गई॥
चढि कैं आयौ इबनसलाम। ब्याह करन लैलै अभिरांमा॥
लैलै पिता बात सुनि पाई। अति ही नींकीं सभा बंनाई॥
न्यौतौ सब अपनौ परवा़र। भांति भांति कीनीं ज्यो नार॥

---

1. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जवकि वास्तव में 'कवित्त' है। 2. हांतौ= उदास।
3. इस चरण में एक वर्ण कम हैं।

इबंनसलांम बहुत मंन चाइन। लैलै संग पछायौ काइन॥
लैलै जबहिं सुनीं यहु बात। बसतर फारन लागी गात॥
हौं मजनूं बिन करौं न और। मन मैं नाहि आंन कौं ठौर॥
जो कोऊ मुहि डारै मार। दूजौ नाहिं करौ भरतार॥
येक पुरष कैं नारि अनेक। द्वै पुरषंनि कैं तियां न येक॥
लगी मुसाता[1] करन सिंगार। दूर करैं पल पल मैं नार॥
रोवत अंजन नैंन बहाइ। पूंछत करमिंह दीढ रिजाइ॥
सुनि आई लै लै की मात। सुता न कीजै अैसी बात॥
ऐसौ भूलिन कीजे काज। जातैं लगै कुटंब कौं लाज॥
लैलै बहु बिधि कै समुझाई। नैकु समझ पर नाहिन आई॥

॥ सवैया॥[2] ३८॥

मंजन किये बिनुं कंचन ज्यौं दीपैं देह, अंजन दीयें बिनु खंजन लजाये हैं॥
बिनु मुख रंजन ही मुख मन रंजन है, कंजन के जूह देखि-देखि कुंभिलाये हैं॥
भूषन बिना ही कछु छबि की रही न भूख, सबके तिलक जॉन तिलक बनायौ है॥
इते पर जांन कहै बानिक जौ बानत है, आनि आंनि सर्पन कैं पंख मनौं लाये हैं॥

।। लैलै ब्याह पानी॥ चौपई॥ ४५॥

लै लै रोवत दीनी ब्याहि। बहुत दायजौ दीनौं चाहि॥
इबनसलाम बहुत हरषायौं। लैलै लै अपनैं घर आयौ॥
केतक दिन उंन नाहिं खिझाई। ब्यापो मदन रह्यो नहीं जाई॥
येक द्योंस उन हाथ चलायौ। लैलै भलौ तमाचौ लायौ॥
तूं जौ मैंरै हाथ लगावहि। जीवत मोहि बहुरि नहीं पावहिं।।
अति डरप्यो तब इबनसलांम। बहुरौ कबहुं न ब्यापौ कांम॥
दूरि-दूरि देखै सुख पावैं। पै लैलै कै हाथ न लांवै।।
इबनसलांम षहै डर आई। जिन कबहुं लैलै मरि जाइ॥
लैलै लाज बुधि सब खोई। मजनूं-मजनूं कहि-कहि रोई॥
लैलै निस दिन रोवत जात। लैलै नाव मिंत बिललात॥

1. मुसाता= श्रृंगार कराने वाली।

2. छंद नाम 'सवैया' लिखा है, परन्तु 'कवित्त' है।

॥ दोहा ॥

अंसुवा ढारत विरहनी, जांनत हौ किंह लीनं ॥
चिंता धोवन कारनौ, नैन पनाले कींन ॥ २ ॥
कंवल-बदन पिय चंद बिन, सूकि चल्यो कुंमिलाई।
कहत जांन कीनौं सरस, अंसुवनि सौं छिरकाई ॥ ३ ॥
अंसु ढरत उर पर परत, तिय सौं करत पुकार।
डारि दये जौं नैंन ते, मन तें देहु न डारि ॥ ४ ॥
बटाऊ मजनूं सूं लैलै कै ब्याह की बात
करतु है मजनूं पाती लिखी लैलै कूं।।

॥ चौपई ॥ ४६ ॥

मजनूं डोलत बन भरमायौ। ऊंट चढ्यो मांनस इक आयौ ॥
मजनूं सेती अैसें कह्यो। तैं ये तौ दुख ये हू लह्यौ ॥
लैलै ने हु मुवो बे काज। उन कछु तेरी करी न लाज ॥
लैलै तो इक कर्‌यो भतार।[1] तासौ करत रैंन दिन प्यार ॥
इबनसलाम बध्यौ है हेत। तेरौ कबहूं नाव न लेत ॥
भली नाहिं मिहरी[2] की जात। निस राचै तौ बिरचै प्रात ॥
मजनूं सुनत बिर्छ सिर मार्‌यो। सिरसौं तर तरसौं सिर फार्‌यौ ॥
पाहन सेती फोंरै सीस। कहत कहा कीनौं जगदीस ॥
जब मजनूं अऐस दुख पायौ। बात कहन हारौ पछितायौ ॥
उतरि ऊंटते नेंरें आयौ। यहै कंह्यो मैं झूंठ बनायौ ॥
ब्याह भयौ लैलै कौ साच। पैं वहु जरत बिरह की आँच ॥
नैंकु न मुख लावै भरतार। लैलै कौ तुम हीं सौं प्यार ॥
मजनूं मजनूं निस दिन करै। दूजौ शब्द न कछु उच्चरै ॥
सुनत भई कछु सीतर छाती। लैलै कौ लिख पठई पाती ॥
हौ तुस काजै या बिधि भयौ। जांत-पांत कुल सब तें गयौ ॥
बौरा नाव भयौ सैंसार। मात-तात सौं रह्यो न प्यार ॥
बन पर्बत कै रसनां होइ। तौ मेरौ दुख कहि है रोइ ॥

1. सही शब्द 'भर्तार' हो सकता है।
2. मिहरी= औरत।

कै मेरौ दुख देखत छांहि। बहू कैं मुख रसनां नाहिं॥
हौं तेरैं दुख अैसै भयौ। तैं भतौर अब कीनौ नयौ॥
वैसी अवधि करी तैं मोसौं। बहुत हुतौ पतियारौ तोसौं॥
अब हौं जीऊ कैसी आस। पीति लाइ तैक रचो यों बिसास॥
मैं अंसुवनि सींची बनराइ। जबहि भयौ फलु औरैं खाई॥
तरवर सीचि बडौ मैं कर्‌यो। लयौ छिडाइ जबहि गहबरयो॥
मेरी डिस्ट परत तर नांहि। अंनत बढाऊ बैठत छांहि॥
जब लैलै कौ पहुंची पाती। लैलै अंसुवनि छिरकी छाती॥
रोवत पढत भीज जब जाइ। बहुरि धाम मैं पढत सुकाइ॥

॥ सवैया॥[1] ३९॥

मजनूं की पाती आई छाती जरती सिराई, घटी हैतताई घट लै लै दुख भयौ है॥
मिंत के अछिर देखि अछिरा उमंग बढी, अंनमिलबे कौ दुख कुछक तौ गयौ है॥
दुहूंनि के कर येक कागर कैं लागे आई, उन लिख्यो उन बाँच्यो दई जोगि दयौ है॥
अधरिनि चूंमि द्रिंग राखि ऊपर धरी, प्रीतम कै अंकनि सौं अंकमाल लयौ है॥

॥ लै लै पाती लिखी मजनूं कौ॥ चौपई॥ ४७॥

उलटि लिखी मजनूं कौं पाती। लैलै बिरहु पैंमु रंग राती॥
तुम मो काजैं जो दुख पायौ। ताते मोकौं भयौ सवायौ॥
तबही मरत भयौ जब व्याह। जीवत तेरैं रही उमाह॥
मरिजै हौंतो तोहि न पाऊं। आस तिहारी जीव जिवाऊ॥
अैसी रंगी बिरहु कैरंग। जागत सोवत तुमही संग॥
नाहि न कहू ब्याह की बात। याकौं बांधि दई हौं तात॥
मेरौ बरू कछु नांहि बसायौ। पिता कर्‌यो जो उन मन भायौ॥
हम तुम बीच अलख करतार। मेरै तौ तूं ही भरतार॥
तुम बिन जितीं पुरष की जात। हैं मेरैं सब भया तात॥
यह मजनूं कौं पुहंची पाती। अधिक सिरानी है देह ताती॥

1. छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तविक नाम 'कवित्त' होना चाहिये।

॥ दोहा ॥

पाती राती पैम रंग, प्रीतम देत पठाइ।
छाती ताती जरत व्है, सो सीरी व्है जाइ॥

॥ सवैया ॥ ४० ॥

देखत ही मजनूं उपज्यो सुख, लैलै धरै सिर लैलै की पाती।
बांचत नांचत गावत डोलत पाई है प्रीत सुरंग मैं राती॥
कबहूं धरि नैंन भिजावतु है कबहुं धरि सैं कु सुकावत छाती॥
बहुरौं धरि कैं द्रिग सीरी करै जब होत महा उर कैं लगि ताती॥

॥ मजनूं पिता बातैं करतु हौं ॥ चौपई ॥ ४८ ॥

मजनूं बंन बंन डोलै चाहि। डोलत द्रिग जल मुख मैं आहि॥
कबहूँ भूलि नहीं घर आवत। मात तात बहुतैं दुख पावत॥
मजनूं पिता येक दिन गयौ। सोधन काजैं बनं बनं भयौ॥
सोधि रह्यो पैं नांहि न पायौ। बहुरौ कांहूं पंथी बतायौ॥
अहि सघन बन तामैं गाडि। अब हौं आयौ वा मधि छाडि।।
मजनूं पिता उतहिं उठि धायौ॥ सोधत सोधत मजनूं पायौ॥
पर्‌यो छांह सौ देख्यो गाड। कहुं न मास चांम कै हाड॥
तन मैं बसन न मन मैं चैंन। पर्‌यो पेसौ सकच्यो अैंन॥
पिता रोइ मजनूं गर लायौ, इन पायै पै उन नहीं पायौ॥
पूत-पूत कहि बुहत पुकार्‌यो। तब मजनूं द्रिग खोलि निहार्‌यो॥
देखि रहयो पैं नां पहिचान्यों। तब मजनूं मुख यहै बखान्यों॥
तू को कहा कहत है मोहि। हौं तौ नां पहिचान्यो तोहि॥
अपनौं नांव मोहि समझाई। कत दुखिया गर लाग्यो आई॥
तबहिं कह्यो हौं तेरौ तात। काहे समुगिन भाखहि बात॥
तेरैं लवे बहुत दुख पायौ। तै अैसौ अब हमहिं भुलायौ॥
मजनूं पर्‌यो पिता कैं पाइ। रोवत करत हाइ हीं हाइ॥
जौ आपुन कौं भूलै तात। तापैं और लख्यो नहीं जात॥
मजनूं पिता पिन्हायौ बागौ। कह्यो पूत अब सोवत जागौ॥

अब चलि बैठौ अपनैं धांम। बहुत भयौ जग मैं बदनांम।
तैं बहुतैं कीनी हैं दौरि। मन इंछ्या की खुली लपोरि॥
चंद देखि बालकु हुलसावै। कहा चंद बालकु कर आवै॥
तैसें तू बालक पन छोर। चंदन आवै हाथ चकोर॥
गिरवर तजि झरनां जौ धावै। फिरत फिरत जग मैं भरमावै॥
नेह पंथ भरमत तूं ये ह्वां। तौली पंवन जातनां के व्हां॥
कूकर पुंनि छाडत ना ठौर। बैठ्यो रहै आपुनी पौर॥
तूं मांनस गनि यहि जग माहीं। पैं मांनस पन तो मैं नाहीं॥
मानस ह्वै बौनी की बात। सबते उतिम मानस जात॥
भूत लगत मांनस कौं आइ। सुतौ मनुष ह्वैबेकैं चाइ।
तैं मानस पन छाड्यो पूत। बन मैं भयौ फिरत ज्यो भूत॥
अबहिं राख नंदन मन मेरौ। हौं तौ आहि पाहनौं तेरौ॥

॥ दोहा॥

नेते आये जगत मैं, सकल पाहुंने आहि।
अंत न कोऊ थिर रहै, द्वै द्वै दिन की चाहि॥

॥ सवैया॥ ४१॥

॥ अंत कोऊ जगना ठहरावै॥
बालकु ह्वै तरुनौ बहुरौं ब्रिध आगैं ही आगैं कहां कोऊ धावै॥
स्वास बिसास कहा करिये निकस्योई करै घट आवै न आवै॥
मांनंस औ पसु पंछी जिते, ...येक न छूटत काल संतावै॥
अंत कसौं कछु तंत न मंत है॥[1]

॥ चौपई॥ ४९॥

मजनूं पिता सौं कहतु है॥
मजनूं कह्यो पिता सुंनि बात। मेरौ ज्यो तुम पर बलिजात॥
द्वै दिन कौ घर बदैन कोइ। घर सौ जहां रहन नित होई॥
बिरहु आगिन अैसों हौं गह्यो॥ छार भयौ कछु नाहिंन रह्यो॥
मुख देखें पहिचान्यो तोहि। पूछें नाव न आवत मोहि॥

1. अंतिम चरण में कुछ वर्ण कम हैं।

हौं आपुन कौं ना पहिचानौं। पहिचानौं तौ नांव न जानौं॥
बिसमय भयौ नाव हौं लै लै। ता सुधि हौं मजनूं कि धौंलै॥

॥ सवैया॥[1] ५२॥

मजनूं कहत लैलै हौं ही होइ गयौ हैं॥
सूरज किर्न करै दर्पुन फरक सूर अगिनतें काठ ह्वै अगिन तैंसैं तयौ हों॥
बूंद घन सलिता उदधि मिलि सागर ह्वै तै सैं मिंत मांझ मिलि हौं हू मिंत भयौ हौं॥
भ्रिंगी ज्यौं पतंग कीट आपसौ करत गहि आपतैं निकारि तैंसें अपनाइ लयौ हौं॥
लोग अनजान लैलै अंनकार जांनत है पिता मजनूं सौ कहतु है॥[2]

॥ चौपई॥ ५०॥

तबहिं रोई कैं बोल्यो बाप। हम तुमं बहुर यों नांहि मिलाप॥
मेरौ संगी रह्यो न कोइ। रहंन हंमारौ कैसैं होई॥
मोदांई के रहे न रूंख। जीवन की कछु रही न भूंखा॥
तेरी चिंत लये हौं मरि हौं। नैकुं जीव की चिंतन करिहौं॥
रोवत बिदा भयौ तब तात। पलिका पर्यो तंत घर जात॥
मजनूं मजनूं कहि कहि रोवत। सगरी निस याही बिधि खोवत॥
पुत्र चिंत पुंनि पुरषा भयौ। दिन द्वै माहि पिता अरि गयौ॥
यहु जग रीत सुंनहुं सब कोइ। जो जरम्यों सो अमर न होइ॥
काचौ पिंड मनुष कौ आहि। बिन सतबार न लागै ताहि।
कूप अटैं गढ घर गिरि जाहिं। प्रसतर कठिन सुना ठहरहि॥

॥ दोहा॥

कहा चली घन कुटंब की, तनहि छाडि जिय जांहि।
मेरौ मेरौ करतु है, तेरौ तूं हूं नांहि॥ २॥
लयौ सेत रंग स्यांम कच, सुनि मूरिख मन मोर।
तू अजहूं चेत्यो नहीं, भई साझ तैं भोर॥

---

1. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है।
2. इस छंद में लैला-मजनूं की एकरूपता दिखाई है।

॥ मजनूं नै पितामुये की सुरत पाई॥ चौपई॥ ५१॥

पारघ येक अहेरैं धायौ। मजनूं नजद फिरत डिठ आयौ॥
पारध लेग्यो उराहंन दैंन। तूं इत डोलत है दिन-रैन॥
मात तात की कछु सुधि नाही। तूं काहे जीवत जग मांही॥
तेरी चिंत पिता महिर गयौ। तोकौं दुख रंचक ना भयौ॥
मजनूं खाई सुंनत पछार। पर्यो धुरा मिर्तकि आकार॥
बहुरौं चेत गाँव कौं भाग्यो। पिता गोरतक रोवन लाग्यौ॥
पिता गोर[1] फिरि फिरि लपटाइ। द्रिग रोवत मुख बोलत हाइ॥
लैलै धूरि सीस मैं बाहै। पिता चिंत ज्वालातन दाहै॥
तुंम बिनु कौंन करैं रखवारी। अब बिगरी सब बात हंमारी॥
हंम सौं रुठि रहे तुंम सोइ। धरौ हाथ सिर बैठे होइ॥
यह बिछोह समझति मन माहीं। कह्यो तिहारौ डारत नाहीं॥
तब मैं कह्यो न कीनों तात। अब तुम सुनहुं न मेरी बाता॥
दूर करहु मुख अंचर गोर। हाहा तकहुं हमारी वोर॥
गोर छाडि अब बाहर आवहु। सो करिहौं जिंहं तुम सुख पावहु॥
जौ चलिबे कौ कीनौं चाइ। काहे हौं संग लयौ न लाइ॥
आवै सुरत तिहारी सीखु। त्यों त्यों लगै करे जैं ईखु॥
सीख तिहारी धरी न कांन। तौ ऐसौ दुख पावत प्रान॥
आपहि[2] मारि पास तुम आऊ। पैं मुख कहा तुमहि दिखराऊं॥
तै हौं पाल इतौ जगु कीनौं। मैं तोकौं कछु चैंन न दीनौं॥
सो चलि गयौ हुतौ हौं जाकौ। अब धौं कहौ कहां ऊं काकौ॥

॥ दोहा॥

रूदन करत मजनूं मलिन, दुख उपज्यो दुख माहि।
चिंता की लागी पवन, प्रांन-प्रांन थहि रांहि॥

मजनूं की सेवा पसु करैं॥ चौपई॥ ५२॥

मजनूं ऐसैं करत बिलाय्प। गयौ नजद बाढी दुख ताप॥
मजनूं सदा रहै बंन माहिं। मजनूं तें पसु डर पैं नांहि॥

1. गोर= घर, कब्र।
2. आपहिं= अहंकार।

खरहासाबर के हर हरर्नां। सब पसु सेवैं मजनूं चर्नां॥
सब पसु डोलैं मजनूं साथ। को काहू कैं छवै न हाथ॥
जिंह घर यह सोवत कर हेत। तापसु सोंहनीं पौंछ सौं देत॥
सोइ रहै पसु हींक संग। रंग रह्यो इन ही कैं रंग॥
रहै सीस तर पसु दै सोइ। उजल करत नैंन जल धोइ॥
करैं उसीसा मजनूं कौं पसु। सबंही भये बावरैं कैं बसु॥
मानस सिंध देखि थहरावै। को मजनूं कैं निकट न आवै।
बिन टेरे मजनूं पै अैहैं। तिनं कौं सिंघ फारि कै खैहैं॥
जिंह मजनूं टेरत कर हेत। ताकौ सिंघ नांव नां लेत॥
मिंत कुटंब को जांन न पावत। जौ लौं मजनूं नांहि बुलावत॥
मिर्गनि सौं राखत बहु प्यार। द्रिग मैं मिंत नैंन उनिहार॥
मिर्गन के चूमत नित नैंन। हां तौ होत नाहि दिन रैंन॥

॥ दोहा॥

जाकौ निर्मल पैंम व्है, सब जग बंदत ताहि।
पसु पंछी रचना सकल, मानस को धौं आहि॥

॥ सवैया॥

मजनूं कै भये बसु पाछै फिरै पसु ज्यों घट कैं संग डोलत छांही॥
सेव करैं नित सेवक की गति रैंन दिनां बिछुरे छिंन नांही॥
येक ही ठौर रहैं रिप और भख पै नहीं क्रोध धरैं मन माहीं॥
मांनस को ढिगु जांन न पावत केहर देखि परैं भजि जांही॥

॥ मजनूं पास लै लै के संदेसे पंथी लायौ॥ चौपई॥ ५३॥

मजनूं हौइक द्योस पहार देख्यो इक आयौ असवार॥
मजनूं देखि उतरि वहु पर्‌यो। आइ जुहार सांम हैं कर्‌यो॥
मजनूं पूछयो को तूं आहि। मैरैं ढिग आयौ किंहं चाहि॥
तब असवार कह्यो धरि चित्त। हौं पठयौं हौं तैरैं मित्त॥
मिंत्त नाव सुंनि कैर हंसायौ। वह मानस लै गरैं लगायौ॥
कहु लैलै तैं कहां निहारी। कहा करत है बिरहा जारी॥

हौं निकस्यो मारग मैं आइ। बनिता देखि रह्यो भरमाइ॥
देखी येक चंद संमं नारी। पैंजरि है सूरज तें भारी॥
नैंन-कवल अंसुवा जल भरे। लू के नां पांनी बर हरे॥
देखी बनितां रूप अपार। छींन करी पैं बिरहा जार॥
तन सूंघौ है जै सौ बांन। अबहि सकुच कैं भयौ कंमांन॥
द्रिग तें अंसुवा परत निहारे। ससि मधि तें टूटत मंनौ तारे॥
मैं पूछ्यो रीह् तूक्यों आहि। तुव दुख देखि परी उरि दाहि॥
तब उंन कह्यो सुंनहु हो भाई। हौं मजनूं कै बिरहुं जराई॥
लैलै नांव कहत ते लोइ। अबहिं गई हौं मजनूं होइ॥
वह तौ पुरष सहत दुख गात। हौं बपरी मेहरी की जात॥
वाकौ हैं यैक्कै दुख मेरौ। मोकौं कर्‌यो दोइ दुख घेरौ॥
छाडि न सकौं पुरष कौ साथ। पर्‌यो मोहि पांहन तर हाथ॥
मजनूं जित जांनै तित जाइ। हौं तौ परी भाकसी आइ॥
चढै कलंक भाजि जौ जैहौं। संग रहे निस दिन दुख पै हौ॥
बिरहु कहत अब ही उठि भाज। घर मैं गहि गहि राखत लाज॥
मेरौ ज्यो ये तौ दुख भरि हौ। नां जांनूं मजनूं का करि है॥

॥ सवैया ॥[1] ४४॥

मजनूं कैं आगैं पंथी करत बिचार अैसैं, पंथ माझ आवत दीखे पेक नारी है॥
कंवल से नैंननि तें वोस से ढरत आंसु, चंदसी हुती सु अब मंद सम कारी है॥
ताक्यौ सब तन छींन लंक सम भयौ ही न, द्वीठहूं न आवै कटि खीन भई भारी है॥
पूछ्यो जब नांम तब कह्यो हौं तौ लैलै बांम, मजनूं सनेह मेरी देह दुति जारी है॥

॥ चौपई॥ ५४॥

तब हौं बोल्यो लै लै प्यारी। मजनूं दुख पावतु है भारी॥
वाकी कोऊ लै न संभार। पिता मुंये ना रहयो अधार॥

॥ सवैया ॥[2] ४५॥

तज्यो है अवास बनवास बास कर्‌यो है।
रूखन सौं भयौ प्यार सींचै जल आसू ढारि, सूकत न बन नित देखियत हर्‌यो है॥

1. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है। 2. — " —

नैंननि तें नारे रतनारे रतभारे चलैं, भौम कीनि वाने कौ सरोवर द्वै भर्‌यो है॥
लैलै तेरौ नांम लैलै मजनूं पुकारत है, गयौ सब ग्यांन तेरौ ध्यांन नहीं टर्‌यो है॥
आसपास घेरौं काये रहत हैं पंछी पसु॥[1]

॥ चौपई॥ ५५॥

तेरी विथा सकल मैं गाई। सुंनंत बिपत लैलौ मुरझाई॥
घरी चार लौं रही अचेत। चेती बहुर तिहारैं हेत॥
पाती लिख मेरैं कर दई। वहु रोवत अपनैं घर गई॥
तव लैलै की पाती दींनीं। मजनूं देखत [2]सिर धरि लींनी॥
रीझ्यो लैलै अंक निहार। पर्‌यो भौंम परछाइ पछार॥
पाती बहुरि उधारी वेत। अंसुवा नीकैं पढन न देत॥

॥ दोहा॥

पाती आई मिंत की पढिये कौंन सुभाइ।
पढत भीजि है नैन जल, कर लागें बरि जांइ॥ १॥

॥ लै लै नैं पाती मजनूं कौं पठाई॥ दोहा॥

लैंलै यों पाती लिखी, मजनूं प्रीतम जोग।
सो दिन कैसो होइगौ, जा दिन मिटै बिबोग॥ २॥
दई मिलावहु प्रांनपति, दूरि करहु द्रिग वोट।
कै जब पाती लिखति हौं, तबहि देहु कर कोट॥ ३॥
हौं तुम बिनु अैसों रहौं, जैंसै जल बिन मींन।
तुम मौ बिन कैसें रहौ, सो भाखहु परबींन॥ ४॥
तुंम बंन के पंछी भये, डोलत जित चित चाहि।
हौं पंछी पिंजरै परी, यहु दुख मैं दुख आहि॥ ५॥
तुव रोवत निस दिन फिरत, अरुन रकत की धार।
मांनहु भयौ हकीक कौ, सागर नजद पहार॥ ६॥
कहा कहत का करत हौ, कैसैं बीतत रात।
मांनस कौ संग नांसुत्यौ, कहत कौंन सौं बात॥ ७॥

---

1. इस छंद में अंतिम चरण नहीं है। 2. एक अतिरिक्त 'स' हटा दिया है।

मेरै दुख मैं जरत हौ, निस दिन आठौ जांम।
लाज ग्यांन सब ही गयौ, बौरा पायौ नांम॥ ८॥
तुंमं जिन जांनहु भूलि कैं, मो मुगवै भरतार।
जौ हौं चाहौं और कौं, तो रूसहु करतार॥ ९॥
हौं तौ मुक्त अबीध हौं, तो रूसहु करतार॥ ९॥
हौं तौ मुक्त अबीध हौं, मोहि तिहारी आंन।
जित आसंन ह्वै सिंध कौ, तितन स्वांन असथांन॥ १०॥
जिंहं कांनन मैं बिस्तरै, पंचानंन की बास।
म्रिग न आंवै भूलि कैं, कबहू तिहं बन पास॥ ११॥
अंग-अंग तुम कौं रखे, तुमही करहु कलोल।
छाप तिहारी दर्ब पर, सकै न दूजौ खोल॥ १२॥
फुलवारी मो अंग के, मधुकर तुम ही आहि।
कंटिक ह्वै उरछै दहूं, करत आंन जौ चाहि॥ १३॥
मैं अंबुवा राखे सरस, पिक प्रीतंम कैं काज।
नौ बाइंस कौ देति हौ, मुहि आवत लाज॥ १४॥
कहा भयौ जौ नारि पर, बानंर कै कर आइ।
यहु जिंन जांनहु भूलि कैं, काढि गिरि वहु खाई॥ १५॥
तुम बिन सब कोंमल कँवल, कंटिक से भोलाग।
कंटिक तेंरै पंथ कैं, लागंत है मुहि बाग॥ १६॥
जौ तुंम दुतिया चंद से, बहुत भये हौ छींन।
तौऊ दूरितें डिंठु परहु, येक बार परबींन॥ १७॥
जा दिनं तैं मैंयौ सुंन्यो, मुवो तिहारौ तात।
तबतैं निहचैं जानियौं, रोवत हौं दिनरात॥ १८॥
मैं सुंनि कैं सब कछु करे, होत जु सोक सुभाइ।
यहै येक चिंता रही, सकी नं तुम पैं ज्याई॥ १९॥
चिंता मिंत की जांन कहि, चितु आपुंन लै धाइ।
ज्यौं कंटिक तकि हिय पुहप, मधुप लेत उर लाइ॥ २०॥
निहचैं ज्यौं मैं जांनियो, जौ तन तुमतें दूरि।
पैं मंन मेरौ रहत है, निस दिन तोहि हजूर[1]॥ २१॥

---

1. हजूर= मालिक, स्वामी।

ताहि सयानैं जांनियैं, दुख मैं साधै मौंन।
जाइ सु बहुरि न आइ है, लोग हँसावे कौन॥ २२॥
मजनूं पठि धरनीं पर्‍यो, कछु नांहि सुधि गात।
बहुरि चेत बैठ्यो भयौ, यहै कही मुख बात॥ २३॥
कागर मस लेखन नहीं, कछु ऊतर लिखि देत।
लिखबेऊ की सुधि नहीं, कर्‍यो बावरौ हेत॥ २४॥

॥ मजनूं लै लै कौं पाती पठई॥ दोहा॥

लेखन मस कागर सबै, दये बटाऊ आंनि।
लिखि लिखि पठवै, नैंन जल, परी रूदन की बांनि ॥ २५॥
अंसुवंनि पाती भीजि है, जगत हाथ कौ सैंकु॥
ताते सूकत नां गरत, पढ़ी जातु है नैंकु ॥ २६॥
तब मजनूं पाती लिखी, ताती दुख की बात।
जौ अंसुवनि भीजत नहीं, तौ सगरी जरि जात॥ ४॥
मजनूं दुख पाये जिते, लिखि कागर पर दीन।
पाती लै पंथी गयौ, जित लैलै परबीन ॥ ५॥
लैलै पाती सिर धरी, पुनि चूंमी बहु बार।
बहुरि खोलि बाचन लगी, द्रिग छूटी जलधार ॥ ६॥
मजनूं यौ पाती लिखी, लैलै लै तूं बांचि।
निस बासुर हौ जरति हौं, बिरहु अगिन की आंचि ॥ ७॥
कोऊ जै है दैहुरै, कोऊ जात मसीत।[1]
धर्म नेंम मेरै यहै, पूजै तेरी पीत॥ ८॥
पैमुं प्रकासै जाहि घट, है ताकी यहु टेक।
दुविधाई मैं नाप रै, जपै येक ही येक ॥ ९॥
मै रिझाइ अप वसु करयो, बिरहा कारौ नाग।
मिंत दर्ब पैं ना लह्यो, बांच हमारे भाग॥ १०॥
कहा करौं कासौं कह्यौ, नीदौ आवत नांहिं।
मन पल तुमकौं सोइ कैं, देखौ अपनैं मांहि ॥ ११॥
जौ लौ जीऊ जगत मैं, करि हौं पीति निबाहि।
हमं तुंम मन करि लिलि[2] रहे, तन की तनक न चाहि॥ १२॥

---

1. मसीत= मस्जिद।

2. यह शब्द 'मिली' हो सकता है।

जब़ परछंहिया डिठु परै, हमकौं भूलहु नांहि।
मनसा डोलै संग लगी, ज्यों अंग लगी छांहि॥ १३॥
हमकौं कबहुं आपतें, हां तौ कहौ न मिंत।
दयौ तुमारै संग गहि, बसत अमोलक चित्त ॥ १४॥
दुख मैं सुख कबि जांन कहि, बिरहनि याही माहि।
जौं तन तैं पिय बिछुरि है, मनतें बिछुरत नाहिं ॥ १५॥
ध्यांन मिलत हिरदैं बसत, ताते चित कौं चैंन।
पैं परगट पर से बिना, दुख पावत है नैंन ॥ १६॥
हौं सुपनै की मुकर मैं, देखत हौं पीय सोइ।
जबहि नैंन खुलि जाति है, तबहि बिछोहा होइ ॥ १७॥
मनतो ते बिछुरत नहीं, संग रहत निस भोर।
खोर लगांवंन पैमु कौं, रही पास हम खोर॥ १८॥

॥ सवईयां॥[1] ४६॥

मुरझाइ रह्यो है सु कैसैं डहडहौ होत, तेरौ मुख देखूं तब मेरौ मुख देखिये॥।
तेरै बैंन सुनौं तब मैंरै बैंन सुनियत, उपजै कबि तरंग सागर बिसेखिये॥
तेरै नैंन हेरें मेरे नैंन हे रैं तीनौं लोक, तारिकांनि माधि जोत अमित परेखिये॥
मेरौ हीयौ-कंवल खिलत कवि जांन कहि, तेरी छबि-रबि हिरदै मैं अब रेखिये॥

॥ मजनूं कौ मामू आयौ॥ चौपई॥ ५६॥

मजनूं कौ मामू इक आहि। नाम सलीम कहत हैं ताहि॥
येक द्योस वहु सोधन आयौ। मजनूं बन मैं रोवत पायौ॥
देख्यो मजनूं बसतर हीनं। भयौ बहुत देही तें छीनं॥
रोइ सलीम गरै वहु लायौ। पाछैं अपनौं नाव बतायौ॥
मजनूं तब सलीम पहिचान्यौ। अपनौ दुख सबही प्रगटान्यौ॥
कह्यो सलीमं पेन्ह[2] तू बसतर। और बांधि ता ऊपर ससतर॥
कहा होइ बसतर पहिरांये। डारौ बिरहा अँगिन जरायो॥
नीके बसन सलीम पिन्हाये। फिर खैबेकौं भोजन आये॥
तब सलीम पूछी यहु बात। साबन मांहि कहा तुम वात॥

1. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है। 2. पेन्ह = पहन।

बिन खांये जीवत हौ कैसैं। साचु कहौ बीतत है जैसै॥
मिंतवोर की आइ बयार। वहै हमारौ आहि अहार॥
मजनूं फिर पूछी यहु बात। जीवत आहि हमांरी मात॥
अबलौं तौ वहु जीवत आहि। पैं दुख कौ विषु पीवतु आहि॥
येक बार तुम देखहुं जाइ। नांतर बहुर न पावहु माइ॥
मजनूं चित्त मोह उपजायौ। संग सलीम मात पैं आयौ॥
गरैं लागि रोवत महतारी। हौं काहे तैं पूत बिसारी॥
हहा पूत अब घर मैं रहौ। मुये कहा हिंदुवनि ज्यौ दहौ॥
पिता चल्यो अब मेरी बारी। द्वै दिन संग रहौ बलिहारी॥
अपनौ तन कौ कत दुख देत। कछु इक करहु जीव सौं हेत॥
तेरौ ज्यो पांहन कौ नाहि। काहे रहत पर्‌यो गिर माहीं॥
मजनूं रोइ कही यह बात। माता मोपै रह्यो न जात॥
तन डोलत ज्योकै संग आछैं। त्यौं जिय डोलत प्रीतम पाछैं॥
मेरौ मन नाही मो हाथ। हौं भर्मत डोलौं मन साथ॥
हित मग मरैं मुसेते नाहिं। लागै सोर मरें घर माहिं॥
कहि मजनूं मारग लींनौ। कछु माता सौं मोह नं कीनौ॥
पूत चिंत अरु बिर्छा भईं। बिछुरत ही माता मरि गई॥
मजनूं गयौ जिही बन दौरि। गयौ सलीम बहुरि उहिं ठौर॥
जाइ कहीं माता की बात। द्यौस भयौ मजनूं कौं रात॥
फिर फिर घर पर खाई पछार। रोवत बहुत पुकार-पुकार॥
रोवत ही उततें उठि धायौ। माता गोर पास तब आयौ॥
डिस्ट परी माता की गोर। लागी होंन जीव बिन खोर॥
अैसी चोट सीस की मारी। रत सौं गोर भइ रतनारी॥
मजनूं कीनें बहुत बिलाप। ज्यों पहलैं कीनें दुख बाप॥
भाखै कुटंब भयौ घर सूनौ। गये तात माता मरि दूनौं॥
अब तूं अपनौं धांम संभार। जीवन आपन करहु उजार॥
मजनूं सुनत बात उठि भाग्यो। लाइ उहीं बन रोवन लाग्यौ॥

॥ दोहा॥

कहत जांन कबि बिरहा, पैठत जिंह घट मांहि।
ऊजर भयौ कि वसत है, घर की सोधी नांहि॥ २॥
जिंह बन मैं मजनूं बसत, काहे नां जरि जात।
आहि जरावत सोंचद्रिग, हरे करत फिर खात॥ ३॥

॥ जैदआयौ मजनूंसौंमिल्यौ॥ चौपई ५७॥

मांनस येक जैद तिंह नांम। रूपवंत बिरही अभिरांम।
येक ठौर उन नैंन लगाये। मजनूं नाई बहु दुख पाये॥
बौरा नाव भयौ सैंसार। भरम्यों बन-बन नदी पहार॥
मजनूं सेती कीनी बात। अति सुख भयौ जैद कैं गात॥
मजनूं काहू रहन न देत। कीनौं बहुत जैद सौं हेत॥
दोऊ दुखिया सुखी न कोई। निस दिन बात करत हैं रोइ॥
जैसौ ह्वै तिंह तैसौ भावै। को अंन मिलसौं मन मिलावै॥
जैद भयौ तब आप बसीठ।[1] पांती पहुंचावै जुग ईठ॥
मजनूं के ले जाई संदेसे। लैलै के लै आइ अंदेसे॥

॥ दोहा॥

दुखिया दुखिया मन मिलै, सुखिया सुखिया प्यार।
जैसै सौंतै सौ बनैं, यहै रीत सैंसार॥

॥ मजनूं सूरज चंद तराइन सौं रैन सौं बातैं करतु हैं॥ चौपई॥ ५८॥

बिरह अगिन मैं मजनूं जरि है। दिन दिन करसौ बातैं करि हैं॥
जागत बीतै सगरी रात। करत तरांइन ससि सौ बात॥
तू ससि कबहुं पूरन होत। कबहु रंच रहै नहीं जोत।
हौं जानंत कहुवा तुव पीत। ताते दोइ भांत की रीत॥
मिंत लहै तब पूरन होत। देखत नाहि मिटै तब जोत॥
तुम सगरी निस चलि हौं तारे। हौं जानत सोधत पिय प्यारे॥
नैंन पसारें सब निस रहत। काहू मिंत कौं देख न लहत॥

1. बसीठ= दूत।

जब ससि छबि निस ह्वै अंधियारी। तब पूछत तूं किह गुनकारी॥
जरि बरि स्यांम भई कछु रोग। कै काहु कौ लग्यो बियोग॥
पैंजौ तूं कछु होहि दुखारी। तौ मोकौं दुख देहिन भारी॥
चलि न जाहि कत मोहि संतावै। द्रिग उडिगंन सौं धूर डरावहिं[1]॥
चतुर पाइतरै तौ आहि। चलि न जाहि बैठी किंह चाहि॥
निस कौ नैंकु न आवत वोर। कबहुं होन न पावत भोर॥
भखीं सर्प चिरिया़ सैंसार। कुकढात खाये मंजार॥[2]

॥ दोहा॥

ससि दर्पन मैं जांन कहि, जौ ना होत कलंक।
तौ बिदेस तें देखिये, यामधि मिंत निसंक॥

॥ मजनूं नैं सुपनौं माहि लै लै देखी लै...हारदीया जागे तें पायौ सुख भयौ॥ चौपई॥ ५९॥

अैसें मजनूं करत बिलाप। ररत[3] नाव लैलै कौ जाप॥
आइ रही जब थोरी रैंन। नैंकु लगे मजनूं के नैंन॥[4]
सुपनैं आई लैलै नारि। मजनूं कौं दीनौं इक हार॥
ताही बीचि गये खुलि नैंन। पायौ हार गरै मधि अैंन॥
बाढ्यौ मजनूं चित्त हुलांस। लही हार मैं लै लै बास॥
रवै-रवै असुवन हार भिजावै। यहुमर जिम कब हूं कुमिंलावै॥

॥ दोहा॥

मजनूं कौ लैलै दयो, सोवत सुपनैं हार।
मुरझावन ना देतु है, सींचत द्रिगु जलधार॥

॥ सवईया॥[5]

मजनूं के नैंन के हूं के हूं लगे येक रैंन लै लै सुपनै मैं गई हार पहिराइकैं॥
उधर गये हैं चखि तन मन भयौ सुख अैंन फूलमाल देखी ग्रीवनि रझाइकैं॥
केतुकी पैं अलि मति वारौ होइ आवै चलि मगन भयौ है तैसैं लै लै पास पाइकैं॥
पल-पल मांहि असुंवनि जल सींचतु है डरत तबहुं जिन जाइ कुमिलाइकैं॥

---

1. इस चौपई की तुकांत की एकरूपता नहीं है।
2. इस चरण में एक वर्ण कम है।
3. यह शब्द 'रटत' हो सकता है।
4. इस चरण में एक वर्ण कम है।
5. सही छंद 'कवित्त' है।

॥ इबंन सलांम मुवो सुन्यों मजनूं नौं॥ चौपई ६०॥

मजनूं कौ निस दिन यौं जात। अबहिं सुनहुं लैलै की बात॥
निस दिन रोवै संग भरतार। कबहुं नांहि जंनावै प्यार।
बहुत करे भरतार उपाइ। लैलै के हूं हाथ नं आइ॥
आइ हाथ न आइ हाथ। सुपनैं कैसौ झूंढौ साथ॥
इबंनसलाम बहुत दुख भयौ। अंत याही दुख मैं मरि गयौ॥
इबनसलांम सुन्यौ मरि गयौ। लैलै कैं मन आनंद भयौ॥
पैं यहु मिसकर लागी रोवन। अंसुवन सौं मुख लागी धोवन॥
चिंत मिंत की ज्यौं कै दंहै। लैलै भेदन कोकु लहै॥
निडरत माचे मुख पर मारौ। गहि-गहि सिर के बार उपारौ॥
लैलै रोवै मजनूं काज। राखत सभा पुरषे की लाज॥
रौयौ चाहति लैलै जैसौं। अब अघाइ संवत है तैसौं॥
ज्यों जांनत तिहं भांति पुकारत। छल बर छाती पीरि निकारत॥
चहै बटाऊ फिरि उत आयौ। इबनसलाम मुवो सुंनि पायौ॥
हर्षवंत ह्वै कैं उठि धायौ। जित मजनूं हौं तितहीं आयौ॥
यहै के मुहि देहि बधाई। भई बात तेंरै मन भाई॥
दुर्जन तेरौ इबनसलाम। काल ज्वाल जलि भयौ तमाम॥
महापंथ बहुपंथी भयौ। अपनौ जीउ तोहि दै गयौ॥
मजनूं सुनंत भयौ दुख चाव। रोवै हंसै भये द्वै भाव॥
दुर्जन जांन बहुत सुख पावत। काल सुरति करि कैं दुख पावत॥
दुंर्जन मुये कहा उछाहि। जौ आपुंन कौं अरिबौ आहि॥

॥ दोहा॥

दुर्जन कौ मुवौ सुनैं, नाचत है बुधि मंद।
आप अमरनांहू जिये, तौ यहु कहा अनंद॥

॥ लै लै को बिलाप॥ चौपई ६१॥

लैलै घर बैठी करि सोक। निस कूकत ज्यों नारी कोक॥
बडी रैंन लागत हैं भारी॥ गंन गंन तारे वितवत नारी॥[1]

---

1. इन दोनों चरणों में चौपाई छंद है। 2. इस चरण में एक वर्ण कम है।

कौंन काज ते उयौ[4] न भांन। करत कहि न करत बिहांन॥
अजहूं भान न निकसन भयौ। जांनत राह लील उहिं गयौ॥
कुकटात खाये मंजारी। सब्द सुंनावत नाहीं नारी॥
कारैं नाग चिसिंयां भखी। बो...कौतगु माहिन रखी॥
लैलै करत दीप सौं बात। क्यों जरि हौ तुम सगरी रात॥
सब निस दीपग जरत सनेह। पीरैं बदन गई ह्वै देह॥
दीपक कौ जरिबौ सुठ चाहि। जरे पतंग रीझि कैं ताहि॥
आवत जैसैं दीप पतंगा। त्यौं पसु डोलैं मजनूं संगा॥

॥ दोहा॥

निसकौं दीपग जरत है, भयैं बिहांन सिराइ।
निस दिन जरै बिवोगनी, जौं लौं जीवन जाइ॥

॥ सवइयां ४८॥[1]

जागत बिहात रात मजनूं कौ दुख गात, अैसी भांरी लैलै बात दीपग सौं करिहै॥
काकी पीति भयौ पीति बिरही की तेरी रीत, अंसुवा परति सुनूं काहे द्रिग भरिहौ॥
मेरौ, दुख देखि-देखि तोह कौं भयौ है दुख, किधौं कहि अपनैं सनेह ही मैं जरिहौ॥
निस के पतंग तैं तौ मारे वाकौं बैर तोहि, मारै गौ पतंग भोरताकैं डरू डरूहै॥

॥ लै लै मजनूं बन मांहि मिले॥ चौपई ६२॥

पूरौ भयौ सोक भरतार। सब लैलै यौं कर्यो उचार॥
अब हौं अपनौं पीहरि जै हैं। माता-पिता देखि सुख पै हैं॥
इबनसंलाम कुटंबयौं भाखी। हम जांनत तुम रहौ नं राखी॥
लै लै ऊंट चहोरि[2] पठाई। लोग चलत हे संग चलाई॥
चली जात लैलै अभिराम। निकसी आइ दीप वहु सांम॥
भई येक दिन रैंन अंध्यारी। जात कजावै सूती नारी॥
सोइ गयौ जाकैं कर ठोर। ऊंट गयौ चलि बनंकी वोर॥
बिरवा[3] चरत ऊंट बन जाइ। तब लैलै जागी अैंडाई॥
वन कौं देखि डरी है भारी। मानस संग न देख्यो नारी॥

1. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है।
2. चहोरि= बिठाकर। 3. बिरवा= खुले हुए। 4. उदित होना।

चक्रित भई चली यहु जाइ। जांनत कोऊ लै मग लाइ।
चलत ऊंट जब आगैं आयौ। मानस कै सौ आह उपायौ॥
लैलै दीनौ बोल पुकार। तूं को है धौं देहि बिचार॥
मजनूं सब्द सुंनत पहिचान्यों। बहुरि जांन सपुनौं भरमान्यों॥
रोवत धावत आगै आयै। देखि भयौ लैलै मन भायै॥
लैलै जांनत पंथ गवायौ। चैन भयौ निज मारग पायौ॥
परी ऊंटते खाइ पछार। तन की तनक न रही संभार॥
उत वहु परी इतहि यहु पर्‌यो। पैंमु ग्यांन दहुंवनि कौ हर्‌यौ॥
लैलै सोवैं सुधि बिसारैं। मजनूं रोवै आप निवारैं॥
परे जुगल मांनहुं निरजीत। जागत लागे द्यांम न सीत॥
रैंन गई पुनि भयौ बिहान। तऊन रंचक उपज्यो ग्यांन॥
सिंघ और पसु आये कोर। घेरौ ककरैं खरे चहुं वोर॥
लैलैसंग ज्यो मांनस आहि। सोधन निकस्ये चहूं सिचाहि॥
उहिंठा सोधत सोधत आये। लैलै मजनूं या बिधि पाये॥
ये जांनहिं लैलै ढिगु आंवहिं। केहर आगै जानं न पावहि॥
द्विजन डिठकरि आगै आये। फारि तोरि तेके हरषाये॥
और जु रहे सुइरपराइ। कोस अर्ध पर बैठे जाइ॥
बैठे दूरि दहुंनि कौं हे रैं। सिंघ हनैं जौ आवहिं नैरै॥
अर्ध द्योस याही विधि गयौ। तबहि चेत कछु लैलै भयौ॥
तक्यौ अचेतक अपनौ यार। गोद मांहि लीनौं सिरसार॥
मजनूं द्रिग छूटै जलधार। लैलै अंचर पूंछैं नार॥
लैलै द्रिग अँसुवन कैं पानी। मजनूं भीजि कयाअै डांनीं॥
बैठौ भयौ तबहिं उठि जाग। धंन धंन करत आपुने भाग॥
लैलै कहत कौ हौं सपुनैं। कै परगट पायौ पिय अपनौं॥
अैसे सपुने मैं बहु हेरे। पर्गट मिले भाग तौ मेरे॥
वहु वाकौ वहु वकौं हे रैं। कछु रसु नाहिं करत ह्वैं ने रैं॥
इकटकु झांकु रहे जुग मित्र। दोऊ भये भीत कौ चित्र॥
जीउ येक हैं दोइ सरीर। द्वैगाग्रमधि यैक्कै नीर॥
पाछैं अैसै लै लै कह्‌यो। कत मजनूं चुंष कौ ह्वै रह्‌यो॥

कहौ आपुनैं जिय़ की बात। जै है द्योस गई जिम रात।.
तब मजनूं बोल्यो सुनिं नारी। तुव छबि रस न बांधि मो डारी॥
सकल रौंम जौ रसना होत। तौ कछु बरनौं तेरी जोत।.
येक जीभ कछु कही न जाइ। तौ हौं चुप ह्वै रह्यो लजाई॥
बात मिंत की मन हीं जांनै। रसनां बपरी कहा बखांनैं॥
बकत पपीहा डोलत रात। चुप ह्वै रहै लहै जब स्वात॥
ज्यो मागहि तौ करौं न नांहि। और बचन नांही मुख मांहि॥
मोकौं दूजौ जांनी नांहि। हौ तौ तेरी ये परछांहि॥
तू भा (यौ) न जानं हु दूरि। मो तनं तुव पाइन की धूरि॥
ज्यों ज्यों मजनूं वोर निंहारै। हाइ हाइ करि कपरे फारै॥
लै लै कहै सुनहुं हो मिंत। अजहू कहा रही तुम चिंत॥
मेरैं लयैं इते दुख पाये। लिखो न जतन आव़त गाये॥
हौं तोतैं नहीं राखत आप। सोइ करहु मिटै जिंह ताप।.
मजनूं कह्यो सुनहुं मन प्यारी। यह जिय मैं तुम कहा बिचारी॥
मोकौं अजहौं मजनूं जांनत। लैलै ही करि कहि ंन मांनत॥
नांव कहंन कौं हम तुमं दोइ। अबहि गये जुग येक्कै होइ॥
मद की बास छकै जिहं प्रानं। सोमद पीवै कौंन संयान॥
दूर बासलै भंवर अघाइ। तौ उर कंटिक काहे जाइ।
उन हीं लह्यो पैमु कौ मर्म। जिन राख्यौ अपनौ सतधर्म॥
येक धरी कैं सुख कैं काज। कौनं लगावै़ पैंहि लाज॥
मजनूं पाई लैलै प्यारी। मुकर मिलाप मिले मैं न्यारी॥
अंग-अंग सौं भैंट्यो नांही। रहे निकट ज्यों घट पर छांही॥
नैंननि ही कौं भयौ मिलाप। प्रजरी महा पैमुं की ताप॥
येक्कै संग रहे दिनं रैंन। अंम्रित रूप लयौ रसु नैंन॥

॥ दोहा॥

मिले माहिं न्यारे रहैं, सो आयौ सैंसार।
दर्पनुं मैं सब देखिये, पैं कछु होतन भार॥ २॥
दर्पुन नांई मिंत द्वै, जबहिं सनमुंख होत।
वहु वामै वामै वहौ, देखत अपनी जोत॥ ३॥

।। सवईयां[1] ।। ४९ ।।

फिरत फिरत भरमत बहु दिंन पाछैं,
मजनूं तौ येक दिन लैलै बनं पाई है ॥
रोवत हौ लै लै नांम ताही मधि लैलै बांम,
मारग भुलांनी भूलि उहीं ठौर आई है ॥
देखत मुरछि पर्‌यो लैलै हूंकौ ग्यांन हर्‌यौ,
दिनं गौ अचेत येहूं निस हूं बिहाई है।
जब जुग जागे तब रूदन करन लागे,
पैंमु सील संक नैकु अंकहूं न लाई है ॥

।। लैलै मजनूं सौं बिदा भई ॥ चौपई ॥ ६३ ॥

बिदा भई तब लैलै नारी । डिगत परत मानहुं मतिवारी ॥
परि परि चलै बहुरि गिरिं जाइ। होई अचेत चेत पर आइ ॥
लैलै अपनै संगमैं गई। आइ सामं हैं लोगनिं लई ॥
लैलै लई कजावै घाल। उठिं कै. चले पंथ ततकाल ॥
मजनूं रोवत वन मैं धावत। लैलै लैलै कहि बिललावत ॥
यहै कहै मैं सपनौं पायौ। कैलैलै मुहि दरंसदिखायौ ॥
अैसे भाग हमारे नांही। लैलै पाऊं या बन माही ॥
ध्यान धरें यें हूं भरमायौ। मैं जान्यों है प्रीतम पायौ ॥
सलिता लहै गई नहीं प्यास। राखौ कहा भाग की आस ॥
सबै दुखी मजनूं कै दुख। काहू कौ कछु रह्यो न सुख ॥
मजनूं कौ दुख देखि अहार। निस दिन रोयौं करत पहार ॥
ज्वाला मजनूं पीति निहार। आपुन पौ सब जार्‌यौ डार ॥
इन्द देखि मजनूं कौ नेहू। रोवतु है कीयें छलु मेहू ॥
मजनूं कौं दुख देखि बयार। डोलत बन-बन नदी पहार ॥
मजनूं दुख व्याप्यो तर माही। कबहु बैठत सोवत नांही ॥
मिंत मिलें बहु बढ्यो सनेह। अगिन जरत मै पर्‌यो सनेह ॥
अैंन रोग मैं भेषज पायौ। छबि भेषज दै रोग बढायौ ॥
मेरैं कर आयौ लुकमानं। दूनौं रोग बढ़ायौ प्रांन ॥

---

1. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है।

॥ दोहा॥

बिमल पैंमु कौ जांन कहि, नांहिन कछु उपाई।
जेतौ मिंत मिलाप व्है, ते तौ बहुत बढ़ाई॥

॥ सवईयां[1] ॥ ५० ॥

मजनूं मगन सुधि बुधि नहीं नैकु तन, लैलै कौ मिलन सपुनौ ही करि जान्यो है॥
देखि-देखि लैलै कौं कहत, तुम आपुनं हौं, किंधौ तेरौ रूप ध्यानं धरैं प्रगटान्यो है॥
किधौं मेरे नैंननि कौं और तेरौ रूप ध्यानं, जुं परत ताकौ लैलै करि मान्यो है।
दुख-सुख बात चुख मुखन सुंनाई भाष, पैंम अभिलाष भरमंनि भर मान्यो है॥

॥ लै लै काल बस बई ॥ चौपई ॥ ६४॥

मिलि बिछुरी जब लैलै मित्तु। तब तें बहुत भई चलि चित्तु॥
लग्यो करेजां विरहांवान। तन कौं छाड्यो चाहत प्रांन॥
वैसैं ही घर पहुंची आइ। गरे लाग कैं रोई माइ॥
वै जांनै मूवो[2] भरतार। ता तातें छ तादेगु जलधार॥
मुवो भरतार भई तब खुसी। मिंत बिछोहैं तपै सुसी॥
पूर्न बासी ससि ही बार। अबहि भई दुतिया उनिहार॥
दिनं-दिनं होत जात है छीनं। तरफत जैसै जल बिन मीन॥
अैसैं ही लैलै बिललात। यह सपुनौ देख्यो इकरात॥
जांनति है मजनूं मरि गयौ। दुख मैं यहु दुख उपज्यो नयौ॥
हाई-हाई करि नैंन उधारे। तन के सगरे बसतर फारे॥
तिंह खिजमाता रोवत आई। पूछि रही पैं कछु न लखाई॥
चढ़ी काल जुर लै कौ अंग। जीबै को कछु रह्यो न ढंग॥
अंग-अंगिन की नांई जरि है। हाथ धरत ही तत छिन बरि है॥
पैमं तपति पुंनि तापस तांई। दोइ अगिन मिलि बांम जराई॥
मजनूं तें दुर्बल अधिकार। भयौ चारतन जैसौ बार॥
अंम्रित कौ कीजै उपचार। वहु पुनिं बिषु व्है लागत नार॥
जब लैलै देख्यो जिय जात। यहै कही माता सौं बात॥
मजनूं कै दुख हौं मरि गई। और ब्याध मो कछु ना भई॥

---

1. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है। 2. मूवो= मृत।

मोहि मुई सुनि मजनूं आवै। गोर पास बैठे दुख पावै॥
तब वाकौं जिन देहु उठाइ। म्रितक कैं जिन लावहु धाई॥
अब जग में वहु जीवत नाहीं। मरि जैहै थोरे दिन मांही॥
यौं कहि दयौ जीव जमनार। लै पुंहचाइ जितहिं मोयार॥
मरत नांव जिंह रसनन आवै। सो आगै कछु नाहि न पावै॥
मरत नांव द्रव गंठिया होइ। आगैं चहितें पावै सोइ।।

॥ सवइयां[1] ॥ ५१ ॥

लैलै तौ मरत अैसें कह्यो माता अपनी सौं,
मजनूं हमारी बात सुनि दौरि आई है॥
करि है बिलाप और जरि है बिछोह ताप,
हाइ-हाइ करि मेरी गोरल पढाई है॥
वावरपनौ जौ कछु करैं सु करन दीजौ,
बीनती करत यहै कोऊ न सताइ है॥
जैसे गरकांटे पंछी पल येक पाइ मारैं,
तैसे हाथपाइ डारिये हो मरि जाइ है॥

॥ चौपई ॥

माता खांई देखि पछारि। तन के बसतर डारे फारि॥
माता सिर के बार उपारै। लैलै लैलै नांव पुकारै॥
सवै कुटंब सुनि रोषत[2] आयौ। हितुवन मिलि मिलि सोर मचायौ॥
माता लैलै गरै लगावै। केऊ गाडन नाहिन पावै॥
अंत गसे लै बन मैं गाडी। सबतें न्यारी करि कैं छाड़ी॥
नीले वसतर रोवत मात। मानहुं स्यांम घटा बरसात॥
रोयें हाथ कछु नहीं आवै। रोई-रोई मानस दुख पावै॥
रोये मुवो न जीवै कोई। तिनना भीजि हरयो फिरि होइ॥

॥ सवइया[3] ॥ ५२ ॥

तन मैं न फूल तूं सदन मैं न भूल बौरे,
मन मैं बिचार अंत बन मैं बसेरौहै॥

1-3 प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है। 2. यह शब्द 'रोवत' हो सकता है।

सुनि रे अचेत तू न चिंत भयौ चेत तन,
ताक ता फिरत तेरैं पाछै जम हेरौ है।
जौलौं घट जीव तौलौं जीव जीव कहै निकसैं
न कोन नेरौ आवै जौ अति नेरौ है॥
जांन कहै बिन करतार न सहाइ आंन,
डारि आवै कानन मैं तब कौंन तेरौ है॥[1]

॥ लै लै का गोर लागि मजनूं मरि गयौ॥ ॥ चौपई॥ ६६ ॥

मजनूं डोलत है बन मांहि। लैलै काल कर्‌यो सुधि नांहि॥
ताही बीच जैद उत आयौ। हाइ-हाइ कहि कैं बिललायौ॥
मजनूं दौरि सांम है गयौ। यहै कहत कहि धौंका भयौ॥
जैद कह्‌यो कछु कह्‌यो न जाइ। मन कौ दुख रसनां नहीं आइ॥
जा कैं लये तज्यो तै भवन। उन कीनौं अब जगतें गवनं॥
बांन करै जैं मजनूं लायौ। येक चोट मैं मारि गिरायौ॥
येक (येक) व्है परयो अचेत। फिर जाग्यौ लैलै कै हेत॥
उठि कैं धायौ मनहुं बयार। आयौ जितहिं गोर ही डार॥
रोयौ गरैं गौर कौं लाइ। निस दिन येहूं गयौ बिहाइ॥
बिथुरा[2] नग्र पैंमु की बास। आयौ लोग बहुत चलि पास॥
सिंध निहारे मजनूं पास। डरि कैं दूरि गये सबनास॥
मजनूं गोर लग्यो मरि गयौ। येक बरष याही बिधि भयौ॥

॥ सवैया॥[3]

लै लै गोरि लागि कैं मजनूं मरि गयौ है॥
सुंनि लै लै बात बन मैं ते धायौं जैसैं बात,
गोरस हंनान वाकौ काहू नहीं दयौ है॥
ध्यांन लेत फिरत-फिरत आयौ लैलै पास,
आई बासनासंतौ जुहार करि नयौ है॥
वहु भई केतु की मधि पजिम आयौ यहु,
कंटिक बिछोहै उरपैठ पार भयौ है॥
दीपक कौं देखि ज्यों पतंग अंग जारुतु[4] है॥

1. इस छंद में नश्वर संसार को चेतावनी दी है।
2. बिथुरा= बिखर गया।
3. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है।
4. जारुतु= जलता है।

॥ मजनूं कौ बखान॥ चौपई॥ ६७॥

मजनूं मुवो । घटा तब होइ। जल-थल भरे इंदहूं रोइ॥
पसु ठाढे रोवहिं चहुं वोर। मानस निकट न आंवहिं गोर॥
बरस द्योस जब गयौ बिहाइ। पसु अपनैं बन बैठे जाइ॥
तब मांनस आये उहिं नैरें। नीकै करि मजनूं को हेरैं॥
सूक्यो हौ पहलैं ही भारी। सूकि भयौ अब कचउ निहारी॥
जेतौ फेरि-फेरि निरझावै। सूके हाड और नहीं पावै॥
मजनूं कैं बहु भई सुबास। लै गड़ियो लै लै कैं पास॥
मजनूं माहि पैंमु की बास। तिंन सगरै जग लयौ प्रकास॥
लै लै मजनूं जग मैं अमर। निबह्यौ हित ज्यौं मालति भंवर॥
मरैं पैंम मग अमर सु होइ। और सदा जीवत नां कोइ॥
मजनूं कैसी निर्मल पीति। कीजै तौ जइये जग जीति॥
मांनस सौ मांनस जिय बांधै। आपहिं दुख फंध मैं फांधै॥
मानस जग. मैं थिर न रहाइ। ज्यौं आयौ त्यौं ही उठि जाइ॥
मरै न कबहूं हातौ[1] होइ। तासौं पीति करौ सब कोइ॥
जिन करता सौं बांध्यौ हेत। अंमर भयौ वहु जगत सुचेत॥
लै लै मजनूं सांची पीति। बीच न हुती कछु रस रीति॥
लै लै मजनूं मुकर बिचार। वामैं देखत हौं करतार॥
मजनूं लै लै गुर करि जांनी। बातें बात लही मनमांनी॥
मजनूं कौ हितु रमिताराम। जगरामां कौ लै है नाम॥
जौ लै लै कौ मजनूं रोवत। निस बासुर दुखही मैं खोवत॥
तौ लैलै तब बन मैं आई। तब कत मजनूं गरै न लाई॥
मजनूं करता पीति लगाई। लै लै सिर दै बात छपाई॥

॥ सवइयां[2]॥ ५४॥

लैलै मजनूं तौ दर पुंन करि जांनी है॥
चुंबन सौं चौंप नांहिं अंकवार सौं न प्यार,

---

1. हातौ= अमर
2. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है।

रसरीति वात कभूं चित्त मैं न आंनी हैं॥
वातें उपूज्यो है ग्यांन वातें पायौ मग ध्यानं,
वातें सू भयो ग्यांन (ज्ञान) गुरकरि पहिचांनीं है॥
वाकैं चित्र माहिं चित्रकार कौं पहिचानां हौ,
मांनस यौं याकी पीति नहीं भरमानी है॥
और कछु झांई पावै पाई तासौ पीति लाई॥
जैदनै लैलै मजनूं सुपनै मैं देखे॥

॥ चौपई॥ ६८ ॥

मांनस येक जैद तिहं नाम। रौवै लै लै मजनूं नाम॥
येक रैंन उन सपुनौ पायौ। जानत है बैकुंठ[1] मैं आयौ॥
नीके उपवन नीके धांम। पांनी चल्यो जातु अभिरांम।
सिंघासन कंचन तितराख्यो। देखि जैद कौ जिय अभिलाख्यो॥
तापर दंपति रूप निधानं। कीला करत खात है पांन॥
देखत रूप रह्यो भरमाइ। बहुरयों पूछ्यो नैरैं आइ॥
तुमको हौ धौ देहुं बिचार। ये तौ सुख दींनौ करतार॥
तब अैसैं बोले नरबांम। लै लै मजनूं कहियत नांम॥
कहा जैद पहिचांनत नांहि। तूं तौ बहुत रह्यौ हंम माहि॥
जौ हम रहे सील मैं अपुनौं। यहु पायौ तू तकत[2] जु सपुनौं॥
जैद कहै धंन भाग तिहारौ। जिन या विधि सौं पायौ प्यारौ॥
ताही बीचि नैन खुलि गये। जैद जाग उठि बैठे भये॥
कहत पैंमु बड्डौ गुर आहि। सो पहुंचावै जौ चित चाहि॥
जिंह तन मैं उपजत ना नेह। सो उडिजाइ देहु ज्यों खेह॥

॥ सवइयां[3] ॥ ५५ ॥

काल बसु भये जब लैलै मजनूं जुगल, सुपनैं मैं काहू देखै नीकी भांति पाये हैं॥
उत्तिम आरांम तांमै धाम अभिराम केल, करैं नर बाम नीके तखत बिछाये हैं॥
हंसि-हंसि कहै बात बीतैं सुख दिन-रात, गात मधि अंबर पाटंबर पिन्हाये हैं॥
सलिता सलिल सोहैं बेलि-बेलि पंछी मोहैं, दरष भिखारी भीष दरष अघाये हैं॥

1. बैकुंठ= आननद का धाम, दु:ख रहित स्थान। 2. तकत (अ.)= तख्त, सिंहासन।
3. प्रति में छंद नाम 'सवैया' लिखा है, जबकि वास्तव में 'कवित्त' है।

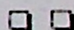
॥ दोहा ॥

पेम नेंम जान्यों नहीं, ते निहचै पसु आहि।
सो मानस कबि जांन कहि, जिंह करता की चाहि ॥२॥
लैलै मजनूं बांचि कैं, पैमु बढ्यो मन जांन।
थोरे दिन मैं ग्रन्थ यहु, बांध्यो बुधि प्रवार[1] ॥३॥
सोरह सै इक्यानुवै, कीनौं ग्रन्थ बखांन।
भई मकर संकरात तब, माह लग्यौ कहि जांन ॥४॥

॥ ग्रन्थ लैलै-मजनूं संपूरन भयौ ॥
सम्वत् १७८५ फागन सुदी १५

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

1. महाकवि जायसी और उनका काव्य : एक अनुशीलन- डॉ. इकबाल अहमद, प्रकाशक- लोक भारती प्रकाशन, 15-ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद-1, प्रथम संस्करण 1999, मूल्य 100.00 रु.।
2. दी स्टूडेण्ट्स मोडल डिक्शनरी (हिन्दी-इंगलिश) सैकिण्ड एडीशन, प्रकाशक- सुबोध ग्रन्थमाला कार्यालय, पब्लिशर्स एण्ड बुकसेलर, रांची, नवम्बर 1950.
3. राजस्थानी शब्दकोष, प्रथम भाग, प्रकाशक- राजस्थान प्राज्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।
4. राजस्थानी शब्दकोष, द्वितीय भाग, प्रकाशक- राजस्थान प्राज्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।
5. संस्कृत हिन्दी शब्धकोष।



1. 'प्रवार' शब्द के स्थान पर तुकान्त अनुसार 'प्रवान' होना चाहिये।
2. बिना प्रेम के व्यक्ति को कवि ने पसु के समान माना है। प्रेम को ही ईश्वर का स्वरूप माना है।

कथापुहुपबरिषाकाविज्ञानलि०

चौप॥१॥

सुमिरौंअलषनिरंजनआदामुंषरसनाकौयहैसवाद॥तौलौंज
पियेजौलौजीजौ॥नावअलषअंब्रितसौपीजौपजिंघी तजिक
औरकीवाहीं॥छार्क सुधाबिषुपीवैतआ॥हौ॥जाकैमुषऔर
र मैंपीऊवैकूं॥चनचनुहीहु औरचनजीका रैंनादिनासुमिर
नैंध्यानंघंनचंनहै सोअनमप्रांना॥दोहा सुमिरनकौसुमिरन
करसुकूलनदेअनुलाइ याहीतेंसुषसुषलहौदुषकौदुषनदुख
इ॥२॥ चौपई॥करतदेषघौंदुषियारोफौनकौनगहिगहि
करतारोजैसेदुषितसुई करि मारे॥कैसेबूझकषात निका॥रोकहा
कहूंहौंस्यनायेकातकनआवैहोंतिअनेका॥होंघटिबुचिक
छुकहतनआवै॥जीवदोरकैसैंकोधावै पैषपपीलकजौऔर
वाहीफेहाअपकौनमुपुहचावैहि॥दोहा जेपुरषआगेंनये
अलषगयेतेजाषा॥अबहैपाछैंहोहिगेयहै देहिगेसाषपूरा॥
चौपई॥ दूजैनावमुहंमदगां हात॥कीदयापरमपदपाक्रोजन
वीनबीनिसबासुरतारिहूंपाकीअंगनरकनाजरिहौ॥यहैनैमु
कीयेहियजानां॥नावमुहंमदनूरनआनां॥मोघटसेवगंच
बहुरजीवतनावरसूलअपायाम है वातहैजपांवनजीवरक
नेहैतमकमीनबीकी॥दोहा॥अिंहतारनकोंजानकाहिनबीमु
हैमदआहि॥ताहिनजतसागरनरकदैहैबोर निबाहि॥३॥

कथा पुरुष बरिया लाजी ज्ञान कि(?)

चौप॥ १॥

सुमिरौं अलष निरंजन आदा मुष रसना कौ यहै सवादा॥ तो लौं जपि ये जौ लौं जी जौं नाव अलष अंबृत सौ पीजौ॥ बिधि तजि वा
और की वादी॥ छाकि सुधा बिषु पीवे तआतिा जा कौं मुष औह
र मैं पी अवै काचन चनु तीह औरध्यन जी आरै नादि नासुमिरन
कौं ध्यानं घंनघंन हे सो अंतम प्रानां॥ दोहा सुमिरन कौ सुमिरन
करु भूलन देउ भुलाइ वा ही तें सुष सु षण हौ दुषवो दुष न कुष
इ॥२॥ चौपई॥ करता देष दुषौं दुषियारा फौं न कौंन गहि गहि
र रवा रा जैसे दुषित सुर्न. कारिकारे॥ कैसे वूझ कथा ता निका रो का
कहूं हौं स्यं नाये कात कन आवै तौं ति अनेकां हौं घटि बु घिक
छु कहत न आवै॥ जाव दौर कैसैं को घावे पैष पपीलका के जो औ
रा तिपं हा आपद कौं न कु पुहचावैं हि॥ दोहा जे पुर षा आगें नाये
अलष गये ते नांघा अब हे पाछै हौ सिगे य्र तैदहि गे सा षा रूपा।
चौपई॥ दूजै नाव मुहंमद गांहा ता।की दया परम पद पाहिपन
वीन बीनि स बा सुर ता रि हुं पा कौ अंग न रकना जरहौ। यहै नैमु
ही जो ही पि ये जा नां। नाव मुहंमद न रू ल न आनं नामो घट से वगे च
बहुर जीवत नाव रसूल अपना य म है बातहै ज पांव न जी वी एक
वे सेत म अंमृत नबी दी॥ दोहा रि हूं तारन को जान कहि न बी मु
हमद आणि ता ताहि न कर सागर नरक दे है बोर ।नि बा हि॥ ३॥